श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला.

॥ श्री रत्नप्रभ सूरीश्वर सद्गुरुभ्यो नमः ॥

अथ श्री

शीघ्रबोध भाग

१७–१८–१९–२०–२१–२२

भाषांतरकर्ता

श्रीमदुपकेश गच्छीय मुनिश्री

ज्ञानसुन्दरजी (गयवरचन्दजी)

प्रकाशक

श्रीरत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला ओफीस–(फलोदी)

के मैनेजर शाहा जोरावरमल वैद.

प्रथमावृत्ति १०००   वीर संवत २४४९

मूल्य.

इस पुस्तक छपानेमें जिन महानुभावोंने साहाय-
ता दी है उनोंका यह संस्था सहर्ष उपकार मा-
नती है और धन्यवाद देती है।

---

१००) शा. हीराचन्दजी फूलचन्दजी कोचर—मु० फलोदी.
१००) मुताजी गीशुलालजी चन्दन मलजी—मु०
८४१) सं. १९७९ के सुपनों कि आवादांनी का
शेष खरचा श्री रत्नप्रभाकर ज्ञान ७. फ-
लोधीसे दीया गया है.

भावनगर —श्री आनंद प्रिन्टींग प्रेसमां शाह •
छाप्यु.

श्रीमदुपकेशगच्छीय—
मुनिराजश्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज।
—[जैन श्वे० दीक्षा सं० १९७२]

विषयानुक्रमणिका.

(१) शीघ्रबोध भाग १७ वां

१] श्री उपासक दशांग सूत्रका भाषान्तर.

[३] श्री अनुत्तरोववाइसूत्र वर्ग ३

[२] शीघ्रबोध भाग १८ वां.

अध्ययन तीजा.

अध्ययन चोथा.

(४) श्री पुष्फचूलिया सूत्र.

(५) श्री विन्हिदशा सूत्र.

] श्री शीघ्रबोध भाग १६ वां.

(१) श्री वृहत्कल्पसूत्र

[२०] श्री शीघ्रबोध भाग २० वां.

(१) श्री दशाश्रुतस्कन्ध छेद सूत्र.

२१] श्री शीघ्रबोध भाग २१ वां.

(१) श्री व्यवहार छेद सूत्र

सहर्ष निवेदन.

—※◎※—

श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला ऑफीस फलोधीसे आज स्वल्प समय में ७० पुष्पोंद्वारा १४०००० पुस्तके प्रकाशित हो चुकि है जिस्में जैन सिद्धान्तोंका तत्त्वज्ञान संक्षिप्त सुगमतासे समझाया गया है वह साधारण मनुष्य भी सुख पूर्वक लाभ उठा सक्ते है पाठक वर्ग एकदफे मंगवाके अवश्य लाभ लेंगे.

पुस्तक मीलनेका ठीकाना.

मेनेजर—

श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला.

मु:—फलोधी-(मारवाड)

—卐—

मुनि श्री रत्नविजयजी महाराज.

[जन्म १९३२.]
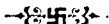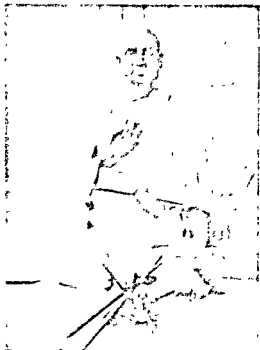
॥ ॐ नमः ॥

॥ स्वर्गस्थ पूज्यपाद परमयोगी सतांमान्य प्रभाते स्मरणीय मुनि श्री श्री श्री १००८ श्री श्रीमान् रत्नविजयजी महाराज साहबके कर कमलोंमें सादर समर्पण पत्रिका ॥

पूज्यवर ! आपने भारत भूमिपर अवतार ले, असार संसारको जलांजली दे, बाल्यकालमें (दश वर्षकी अल्पावस्थामें) जन्मोद्धारक दीक्षा ले, जैनागमोंका अध्ययन कर, सत्यसुगंधीको प्राप्त कर, अशुभ असत्य ढूंढक वासनाकी दुर्गंधसे घृणित हो अठावीस वर्षकी अवस्थामें समुचीत मार्गदर्शी श्रीमान् विजयधर्मसूरीश्वरजीके चरणसरोजमें भ्रमरकी तरह लिपट गए. ऐसी आपकी सत्यप्रियता ! इसी सत्यप्रियताके आधीन हो मैं इन आगमरूपी पुष्पोंको आपके आगे रखता हूं. क्यों कि आपके जैसा सत्यनिष्ट और अनेकागमावलोकी इस पामरको कहां मिलेगा ?

परमपुनीत पूज्य ! आपने गिरनार और आबु जैसे गिरिवरोंकी गुफाओंमें निर्भीकतासे निवास कर, अनेक तीर्थ स्थानोंकी पुनीत भूमीओंमें रमण कर, योगाभ्यासकी जैनोंमेंसे गई हुई कीर्त्तिको आह्वान कर पुनः स्थापित कर गए. इसलिए आपके सूक्ष्मदर्शिताके

गुणोंमें मुग्ध हो ये पुष्प आपके आगे रखनेकी उत्कट इच्छा इस दासको हुई है.

मेरे हृदयमंदिरके देव! आपने अति प्राचीन श्रीरत्नप्रभसूरीश्वर स्थापीत उपकेश पट्टनस्थ (ओसीयामें) महावीर प्रभुके मंदिरके जीर्णोद्धारमें अपूर्व सहाय कर जैनबालाश्रम स्थापीत कर जैनागमोंका संग्रहीत ज्ञानभंडार कर मरूभूमीमें अलभ्यलाभ कायम कर जैनजातिकी सेवा कर अपूर्व नाम कर गए. इन कारणोंसे लालायीत हो ये आगम-पुष्प आपके सन्मुख रखूं तो मेरी कोई अधीकता नहीं है.

भव्योद्धारक ' इस दासपर आपकी असीम कृपा हुई है इससे यह दास आपका कभी उपकार नहीं भुल सकता. मुझे आपने मिथ्याजालोंसे छुडाया है, सन्मार्ग बताया है, ढुंढकोंके व्यामोहसे दृष्टि हटा कर ज्ञानदान दिया है, सत्याचारमें स्थिर किया है. यह सब आपका ही प्रताप है. इस अहसानको मानकर इन बारे सूत्रोंका हिन्दी अनुवादरूपी पुष्पोंको आपकी अनुपस्थितिमें समर्पण करता हूँ. इसे सूक्ष्म ज्ञानद्वारा स्वीकार करीएगा. यही हार्दिक प्रार्थना है. किमधिकम्.

आपश्रीके चरणकमलोंका दास

मुनि ज्ञानसुन्दर.

पूज्यपाद श्रीमान् मुनिश्री ज्ञानसुन्दरजी महाराजके करकमल

अभिनन्दनपत्रम्.
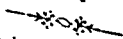
शान्त्यादि गुणगणालंकृत पूज्यपाद प्रातःस्मरणीय मुनि श्री
श्री १००८ श्री श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराजसाहिब ! आपश्री बडे
ही उपकारी और ज्ञानदान प्रदान करनेमें बडे ही उदारवृत्तिको
धारण कर आपश्रीकी प्रशंसनीय व्याख्यान शैली द्वारा भव्यजीवोंका
कल्याण करते हुवे हमारा सद्भाग्य और हमारी चिरकालकी अभि-
लाषा पूर्ण करनेके लिये आपश्रीका शुभागमन इस फलोधी नगरमें
हुवा, जिसके बजरिये फलोधी नगरकी जैन समाजको बडा भारी
लाभ हुवा है. बहुतसे लोग आपश्रीकी प्रभावशाली देशनामृतका
नसे सद्बोधको प्राप्त कर पठन–पाठन, शास्त्रश्रवण, पूजा, प्रभा-
ा, सामायिक, प्रतिक्रमण, पौषधादि, त्याग, वैराग और अपूर्व
–ध्यान करते हुवे आपश्रीके मुखारविंदसे श्रीमद् आचारांगादि
आगम और १४ प्रकरण श्रवण कर अपना आत्माको पवित्र
ा यह आपश्रीके पधारनेका ही फल है.

हे करूणासिन्धु ! आपश्रीनें इस फलोधी नगरपर ही नहीं किन्तु अपने पूर्ण परिश्रम द्वारा जैन सिद्धान्तोंके तत्वज्ञानमय ७६००० पुस्तकें प्रकाशित करवाके अखिल भारतवासी जैन समाज पर बडा भारी उपकार किया है. यह आपश्रीका परम उपकाररुपी चित्र सदैवके लिये हमारे अन्तःकरणमें स्मरणीय है।

हे स्वामिन् ! फलोधीसे गत वर्षमें जैसलमेरका संघ निकला, उसमें भी आप सरीखे अतिशयधारी मुनिमहाराजोंके पधारनेसे जैन शासनकी अवर्णनीय उन्नति हुइ, जो कि फलोधी वसनेके बाद यह सुअवसर हम लोगोंको अपूर्व ही मीला था।

हे दयाल ! आपश्रीकी कृपासे यहांके श्रावकवर्ग भगवानकी भक्तिके लिये समवसरणकी रचना, अठ्ठाइमहोत्सव, नित्य नवी २ पूजा भणवाके वरघोडा और स्वामिवात्सल्यादि शुभ कार्योमें अपनी चल लक्ष्मीका सदुपयोगसे धर्मजागृति कर शासनोन्नतिका लाभ लिया है वह सब आपश्रीके विराजनेका ही प्रभाव है।

आपश्रीके विराजनेसे ज्ञानद्रव्य, देवद्रव्य, जिर्णोद्धारके चन्दे आदि अनेक शुभ कार्योका लाभ हम लोगोंको मीला है।

अधिक हर्षका विषय यह है कि यहांपर कितनेक धर्मद्वेषी नास्तिक शिरोमणि धर्मकार्योमें विघ्न करनेवालोंको भी आपश्रीके जरिये अच्छा प्रतिबोध (नशियत) हुवा है, आशा है कि अब वह लोग धर्मविघ्न न करेंगे।

अन्तमें यह फलोधी श्रीसंघ आपश्रीका अन्तःकरणसे परमो-

पकार मानते हुवे भक्तिपूर्वक यह अभिनन्दनपत्र आपश्रीके करकमलोंमें अर्पण करते हैं, आशा है कि आप इसे स्वीकार कर हम लोगोंको कृतार्थ बनावेंगे।

ना० ध०—जैसे आपश्रीके शरीरके कारणसे आप यहांपर तीन चातुर्मास कर हम लोगोंपर उपकार किया है. अब तक भी आपके नेत्रोंका कारण है. इसलिये यहां पर ही विराजके हम लोगोंपर उपकार करे. उमेद है कि हमारी विनति स्वीकार कर आपके कारण है वहां तक आपश्री अवश्य यहां पर ही विराजेंगे। श्रीरस्तु कल्याणमस्तु।

संवत् १९७९ का
कार्तिक शुक्ल चतुर्दशी
झालरापाटन नगरमें

आपश्रीके चरणोपासक
पल्लीवाल श्री संघ.

श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला पुष्प नं० ८३

श्री रत्नप्रभसूरीश्वर सद्गुरुभ्योनमः

अथश्री

शीघ्रबोध या थोकडाप्रबन्ध.

भाग १७ वां

संपादक.

श्रीमदुपकेश गच्छीय मुनिश्री

ज्ञानसुन्दरजी (गयवरचन्दजी

द्रव्यसहायक

श्रीसंघ फलोधीसुपनोंकीआमदनीसे

प्रकाशक.

शाह मेघराजजी मुणोत मु० फलोधी

प्रथमावृत्ति १०००　　　　वीर संवत् २४४८

विक्रम सं. १९७९

॥ ॐ ॥

॥ श्री रत्नप्रभसूरीश्वर सद्गुरुभ्यो नमः ॥

शीघ्रबोध या थोकडा प्रबन्ध.

भाग १७ वा.

देवोऽनेक भवार्जितोर्जित महा पाप प्रदीपानलो ।
देवः सिद्धिवधू विशाल हृदयालंकार हारोपमः ॥
देवोऽष्टादशदोष सिंधुरघटा निर्भेद पंचाननो ।
भव्यानां विदधातु वांछित फलं, श्री वीतरागो जिनः ॥१॥

श्री उपासक दशांग सूत्र अध्ययन १

(आनंद श्रावकाधिकार)

थोडे आजसे अगणित समयपहेलां पांच मी वि. इस भारतभूमीके अन्दर ऊंचे २ महल बगीचाओं और सुन्दर प्रासादोंसे सुशोभित शिखरोंसे गगनमंडलको चुम्बन करता हुवा अनेक प्रकारके धन, धान्य और वस्तुओंसे परिपूर्ण मनुष्य ऐसा वाणीया ग्राम नगर

स्वामि बोले कि हे आनन्द जो सम्यक्त्व सहित व्रत लेते है उसको पेस्तर व्रतोंके अतिचार जो कि व्रतोंके भंग होनेमें मदद-गार है उसको समझके दूर करना चाहिये। यहांपर सम्यक्त्वके ५ और बारह व्रतोंके ६० कर्मादानके १५ संलेखनाके ५, एवं ८५ अतिचार शास्त्रकारोंने बतलाये हैं। किन्तु यह अतिचार प्रथम जैन नियमावलीमें लिखे गये है वास्ते यहांपर नहीं लिखा है। जिसको देखना हो वह " जैन नियमावली " से देखे।

आनन्द गाथापति भगवान् वीरप्रभुसे सम्यक्त्व मूल बारह व्रत धारण करके भगवानको वन्दन-नमस्कार करके बोला कि हे भगवान्! अब आज मैं सच्चे धर्मको समझ गया हूं। वास्ते आजसे मुझे नहीं कल्पे जो कि अन्यतीर्थी श्रमण, शाक्यादि तथा अन्यतीर्थीयोंके देव हरि, हलधरादि और अन्यतीर्थीयोंने अरिहंतकी प्रतिमा अपने देवालयमें अपने कबजे कर देव तरीके मान रखी है, इन्हीं तीनोंको वन्दन नमस्कार करना तथा श्रमणशाक्यादिको पहिले बुलाना, एकवार या वारवार उन्होंसे वार्तालाप करना और पहिलेकी माफिक गुरु समजके धर्मबुद्धिसे आसनादि चतुर्विधाहारका देना या दूसरोंसे दिलाना यह सर्व मुझे नहीं कल्पते हैं। परन्तु इतना विशेष है कि मैं संसारमें बैठा हूं वास्ते अगर (१) राजाके कहनेसे (२) गणसमूह-न्यातके कहनेसे (३) बलवन्तके कहनेसे (४) देवताओंके कहनेसे (५) मातापितादिके कहनेसे (६) सुखपूर्वक आजीविका नहीं चलती हो। अर्थात् ऐसी हालतमें किसी आजीविकाके निमित्त उक्त कार्य करना भी पडे यह छ प्रकारके आगार है।

अब आनन्द श्रावक कहता है कि मुझे कल्पे साधु-निग्रन्थको प्रासुक, निर्जीव, निर्दोष अशन पान खादिम स्वादिम वस्त्रपात्र

एक नगर था। उस नगरके बाहिरी भागमें अनेक जातिके वृक्ष पुष्प और लताओंसे अति शोभनीय दुतीपलास नामका उद्यान (बगीचा) था। और वहां अनेक शत्रुओंको अपनी भुजाओंके बलसे पराजय करके प्रजाको न्याय युक्त पालन करता हुवा जयशत्रु नामका राजा उस नगरमें राज्य करता था। और वहां आनंद नामका एक गाथापति रहता था। जिसको सिवानंदा नामकी भार्या थी यह बड़ा ही धनाढ्य और नीती पूर्वक प्रवृत्ति करके न्यायोपार्जित द्रव्य और धन धान्य करके युक्त था। जिसके चार करोड़ सोनैया धरतीमें गड़े हुवेथे। चार करोड़ सोनैयाका गहना आदि सब सामग्री थी। और चार करोड़ सोनैये वाणिज्य व्यापारमें लगे हुवे थे। और दश हजार गायोंका एक वर्ग होता है ऐसे चार वर्ग यानै ४०००० गायोंथी। इसके सिवाय अनेक प्रकारकी सामग्री करके समृद्ध और राजा, सेठ, सेनापती आदिको सदा माननीय और प्रशंसनीय, गुप्त और रहस्यकी बातोंमें नेक सल्लाहका देनेवाला, व्यापारियोंमें अग्रेसर था। इसतरह आनंद जिसमें अपनी प्राणप्रिया सुशीला सिवानंदाके साथ उचित भोग-विलास व. ऐश्वर्य सुखोंको भोगता हुवा रहता था उस नगरके बाहिरी भागमें एक कोल्लाक नामका सन्निवेश (मोहल्ला) था। वहांपर आनन्द गाथापतीके सज्जन सम्बन्धी लोग रहते थे। वेभी बड़े ही धनाढ्य थे।

एक समय भगवान त्रैलोक्य पूजनीय वीर प्रभु अपने शिष्यगण-परिवार सहित पृथ्वी मंडलको पवित्र करते हुवे वाणिज्य ग्राम नगरके दुतीपलास नामके उद्यानमें पधारे।

यह खबर नगरमें होते ही जहां दो, तीन चार या बहुत रस्ते एकत्रित होते हैं। ऐसे स्थानोंपर बहुतसे लोग आपसमें

किया। जिसमें मुख्य जीव और कर्मोंका स्वरूप बतलाया कि हे भव्यात्माओ! यह जीव निर्मल ज्ञानादि गुणयुक्त अमूर्त है और सद्चिदानन्दमय है परन्तु अज्ञानसे पर वस्तुओंको अपनी कर मानी है। इन्हींसे उत्पन्न हुवा राग-द्वेषके हेतुसे कर्मोंका अनादि कालसे चय-उपचय करता हुवा इस अपार संसारके अन्दर परिभ्रमण कर रहा है। वास्ते अपनी निजसत्ताको पहिचानके जन्म, जरा, मृत्यु आदि अनन्त दुःखोंका हेतु यह अनित्य असार संसारके बन्धनसे छुटना चाहिये। इत्यादि देशना देके अन्तमें फरमाया कि मोक्षप्राप्तिके मुख्य कारण दोय है (१) साधु धर्मसर्वथा निर्वृत्ति। (२) श्रावक धर्मदेशसे निवृत्ति. इस दोनों धर्मसे यथाशक्ति आराधना करनेसे संसार का पार हो के स्वसत्ताका राज भोग सकता है।

यह अमृतमय देशना देवता, विद्याधर और राजादि श्रवण कर सहर्ष बोले कि हे करुणासिन्धु! आपने यह भवतारक देशना दे के हमलोगों पर अमूल्य उपकार किया है। इत्यादि स्तुति कर अपने २ स्थान पर गमन करते हुवे।

आनन्द गाथापति देशना सुनके सहर्ष भगवानको वन्दन-नमस्कार कर बोला कि हे भगवान! मैं आपकी सुधारस देशना श्रवण कर आपके वचनोंकी अस्तर आत्मासे श्रद्धा हुइ है। और मेरे को प्रतीति होनेसे धर्म करनेकी रुचि उत्पन्न हुइ है परन्तु हे दीनोद्धारक! धन्य है जगतमें राजा महाराजा सेठ सेनापति आदि को जो कि राजपाट, धन धान्य पुत्र, कलत्रको त्याग कर आपके समीप दीक्षा ग्रहन करते है परन्तु मैं ऐसा समर्थ नहीं हूं, हे प्रभो! मैं आपसे गृहस्थ धर्म अर्थात् श्रावकके बारह व्रत ग्रहण करना। भगवानने फरमाया कि "जहा सुखं" हे आनन्द! जैसा

तुमको सुख हो वैसा करो परन्तु जो धर्मकार्य करना हो उसमें समय मात्र भी प्रमाद मत करो'। ऐसी आज्ञा होने पर आनन्द श्रावक भगवानके समीप श्रावक व्रतको धारण करना प्रारंभ किया।

(१) प्रथम स्थूल प्राणातिपात अर्थात् हलता चलता [1]त्रस जीवोंको मारनेका त्याग जावज्जीवतक, दोय करन स्वयं कीसी

---

१ आनन्दने प्रथम व्रतमें त्रस जीवोंको हणनेका प्रत्याख्यान दोय करण और तीन योगसे किया है, जैसे कि हालमें सामायिक पौषधमें दोय करण और तीन योगसे प्रत्याख्यान करते हैं विशेष इतना है कि सामायिक पौषधमें सब सावद्य त्याग है और आनन्दजीने त्रस जीवोंको मारनेका त्याग कीया था।

बहुतसे ग्रन्थोंमें श्रावकके सवा विसवा दया कही गई है उन्होंमें स्थावर जीवों की दश विसवा दया तो श्रावकसे पल ही नहीं सके और त्रस जीवोंमें भी निर्विकल्पके पांच विसवा, आरम्भीके अढाई आकुट्टीका सवा एव १८॥ विसवा घोर करता सवा विसवा दया श्रावकके होती है। यह एक अपेक्षासे सत्य है कि जिन्होंने छट्ठा, सातवा, आठवां व्रत नहीं लिया है जिसको १४ राजलोकके स्थावरजीव खुल्ले है।

जो श्रावक त्रस जीवोंको मारनेका कभी नहीं है उन्होंके १० दश विसवा दया त्रस जीवोंकी होती है और स्थावर जीवोंके लिये छट्ठा व्रतकी मर्यादा करते है तो मर्यादाके बाहरके असंख्याते कोडाकोड अर्थात् मर्यादके सिवाय चौदह राजलोकके स्थावर जीवोंको मारनेका भी श्रावक त्यागी है वास्ते पांच विसवा दया पल सकती है। अब मर्यादाकी भूमिकामें बहुतसे द्रव्य है जिसमें सातवा व्रतमें उपभोग परिभोगकी मर्यादा करनेसे द्रव्य रखनेके सिवाय सब स्थावर जीवोंकी दया पल जानेसे अढाई विसवा दया होती है जब द्रव्यादिकी मर्याद करी थी उन्होंने भी अनर्थदंडके प्रत्याख्यान करनेसे सवा विसवा दया पल जाती है एवं १०—५—२॥—१। मीलके १८॥। विसवा दया बारहव्रती श्रावकसे पल सकती है।

पीच्छी उदेरी सेकुदो अनापराधी ' आगार होते हैं यह देखो जैननियमावलीसे।

(२) दूसरे स्थूल मृषावाद–तीव्र राग द्वेष संक्लेशोत्पन्न करनेवाला मृषावाद तथा राजदंडे या लोकभंडे ऐसा मृषावाद बोलनेका त्याग जावज्जीव तक दोय करण और तीन योगसे पूर्ववत्।

(३) तीसरे स्थूल अदत्तादान–परद्रव्य हरन करना, खात्र खणादिका त्याग जावज्जीवतक दोयकरण और तीन योगसे।

(४) चौथे स्थूल मैथुन-स्वदारा संतोष जिसमें आनन्दने अपनी परणी हुई सिवानन्दा भार्या सिवाय शेष मैथुनका त्याग किया था।

(५) पांचमें स्थूल परिग्रहका परिमाण करना। (१) सुवर्ण, रूपेके परिमाणमें बारह क्रोड जिसमें च्यार क्रोड धरतीमें, च्यारक्रोड व्यापारमें, च्यार क्रोड घरमें आभूषण वस्त्रादि घर विखरीमें। इन्होंके सिवाय सर्व [2]त्याग किया। (२) चतुष्पदके परिमाणमें च्यार वर्ग अर्थात् चालीस हजार [3]गौ(गायों) के सिवाय सर्व त्याग किये (३) भूमिकाके परिमाणमें पांचसो हल [3]जमीन रखी शेषभूमिका परिमाण किया। (४)

---

१ जो जो हुवे [illegible] होती है वह [illegible]।

२ [illegible] है।

३ [illegible] एक हल [illegible] जमीन [illegible] है। [illegible] है। [illegible] ५०० [illegible]

समय रात्रीमें धर्मजागरना करते हुवे यह भासमान हुवा कि मैं वाणीयाग्राम नगरमे राजा उपराजा शेठ सेनापति आदिके मानने योग्य हूं परन्तु भगवानके पास दीक्षा लेनेको असमर्थ हूं. वास्ते कल सूर्योदय होते ही विस्तरण प्रकारका असनादि तैयार करवाके स्वात ज्ञातिवर्गो मीत्रोको उन्होंको भोजन कराके ज्येष्ठ पुत्रको कुटुम्बके आधारभूत स्थापन कर मैं उक्त कोल्लाक सन्निवेशमें अपने मकानपर जाके भगवानसे प्राप्त किये हुवे धर्मसे मेरा आत्मा कल्याण करता हुआ विचरुं। एसा विचार कर सूर्योदय होनेपर यह ही कीया, अपने ज्येष्ठ पुत्रको घरका कारभार सुप्रत कर आप कोल्लाक सन्निवेशमें जा पहुंचा। अब आनन्द श्रावक उसी पौषधशालाको प्रमार्जन कर उच्चार पासवण भूमिको प्रमार्जन कर भगवान् वीरप्रभुसे जो आत्मीक ज्ञान प्राप्त कीया था उसके अन्दर रमणता करने लगा।

आनन्द श्रावक यहांपर श्रावककी ११ प्रतिमा (अभिग्रह विशेष) को धारण करके प्रवृत्ति करने लगा। इन्होंका विस्तार शीघ्रबोध भाग ४ से देखो यावत् साढे पांचवर्ष तक तपश्चर्या करके शरीरको कृश बना दीया अर्थात् शरीरका उत्थान बल कर्मवीर्य और पुरुषार्थ बिलकुल कमजोर हो गया, तब आनन्द श्रावकने विचारा कि अब अन्तिम अनशन 'संलेखना' करना ठीक है। बस, आनन्दने आलोचना करके-अनशन करके अठारा पापस्थान और च्यार आहारका पचखान कर आत्मध्यानमें रमणता करता हुवा। शुभाध्यवसाय-अच्छे परिणाम प्रशस्त लेश्या होनेसे आनन्दको अवधिज्ञान उत्पन्न हुवा सो पूर्व पश्चिम और दक्षिण दिशा लवणसमुद्रमें पांचसो पांचसो योजन क्षेत्र और उत्तरमें चुल्लहेमवन्त पर्वत तक देखने लग गया। उर्ध्व सौधर्मेंद्र-

तको आलोचना कर प्रायश्चित लेना चाहिये। आनन्दने कहा कि हे भगवान! क्या यथा वस्तु देखे उतना कहनेवालेको प्रायश्चित आता है अर्थात क्या सत्य बोलनेवालेकोभी प्रायश्चित आता है। गौतम बोला कि हे आनन्द सत्य बोलनेवालेको प्रायश्चित नहीं आता है। आनन्दने कहा कि सत्य बोलनेवालेको प्रायश्चित नहीं आता हो तो हे भगवान! आपही इस स्थानकी आलोचन कर प्रायश्चित लो। इतना सुन गौतमस्वामिको शंका हुइ। तब सीधाही भगवानके पास आके सर्व वार्ता कही। भगवानने फरमाया कि हे गौतम तुमही इस बातकी आलोचना करो। गौतमस्वामि आलोचना करके आनंद श्रावकके पास आये और क्षमत्क्षामणा करके अपने स्थानपर गमन करते हुवे।

आनन्द श्रावकने साडे चौदह वर्ष श्रावक व्रत पाला, साडे पांच वर्ष प्रतिमाको पालन किया अन्तमें एक मासका अनशन कर समाधि संयुक्त कालकर सौधर्म नामका देवलोकमें अरुणाभ नामके वैमान चार पल्योपमके स्थितिवाला देव हुवा। उसही देवताका भव आयुष्य स्थितिको पूर्ण कर वहांसे महाविदेह क्षेत्रमें अच्छे उत्तम जाति कुलके अन्दर जन्म धारण कर दृढपइन्नेकी माफीक केवली धर्मको स्वीकार कर अनेक प्रकारके तपसंयमसे कर्म क्षय कर केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्षमें जावेगा। इसी माफीक श्रावकवर्गकोभी अपने आत्म कल्याण करना। शम

इति श्रीआनन्द श्रावकाधिकार संक्षिप्त सार समाप्तम्।

(२) अध्ययन दुसरा कामदेव श्रावकाधिकार।

—❀—

चम्पानगरी पुर्णभद्र उद्यान जयशत्रुराजा. कामदेव गाथापति जीसके भद्राभार्या. अठारा क्रोड सोनैयाका द्रव्य-जिसमें छे क्रोड धरतीमें. छे क्रोडका व्यापार. छे क्रोडकी घरविक्री और छे वर्ग अर्थात् साठ हजार गौ (गायों) यावत आनन्दकी माफीक थी-भगवान वीरप्रभुका पधारना हुवा. राजा और नगरके लोक वन्दनको गये कामदेवभी गया। भगवानने देशना दी। कामदेवने आनन्दकी माफीक स्वइच्छा मर्यादा रखके सम्यक्त्व मूल बारह व्रत धारण किया। यावत् अपने ज्येष्ठपुत्रको गृहस्थभार सुप्रत कर आप पौषधशालामें अपनी आत्म रमणतामें रमण करने लगे।

एक समय अर्ध रात्रिके समयमें कामदेवके पास एक मिथ्यादृष्टि देवता उपस्थित हुवा. वह देवता एक पीशाचका रूप जो कि महान् भयंकर-देखनेमें ही कायरोंके कलेजा कंपने लग जाता है. एसा रौद्र रुप वैक्रियलब्धिसे धारण कर जहांपर कामदेव अपनी पौषधशालामें प्रतिमा (अभिग्रह) धारण कर बैठे थे वहांपर आया और बडे ही क्रोधसे कुपित हो. नेत्रोंको लाल बनाके और निलाडपर तीनसल करके बोलता हुवा कि भो कामदेव! मरणकी प्रार्थना करनेवाले. पुन्यहीन कालीचतुर्दशीके दिन जन्मा हुवा, लक्ष्मी और अच्छे गुनरहित तु धर्म पुन्य स्वर्ग और मोक्षका कामी हो रहा है। इन्होंकी तुझे पीपासा लग रही है। इस बातकी ही तुं आकांक्षा रख रहा है परन्तु देख! आज तेरेको तेरा धर्म जो शील व्रत पञ्चखाण पौषध और तुमारी प्रतिज्ञासे

:

चलना-क्षोभ पामना-भंग करना तेरेको नहीं कल्पता है। किन्तु मैं आज तेरा धर्मसे तुझे क्षोभ करानेको-भंग करानेको आया हूं। अगर तुं तेरी प्रतिज्ञाको न छोडेगा तो देख यह मेरा हाथमें निलोत्पल सामका तीक्ष्ण धारायुक्त खड्ग है इन्हींसे अभी तेरा खंड खंड करदूंगा जीससे तु आर्तध्यान, रौद्रध्यान करता हुआ अभी मृत्युको प्राप्त हो जायगा।

कामदेव श्रावक पिशाचरूप देवका कटक और दारुण शब्द श्रवण कर आत्माके एक प्रदेश मात्रमें भय नहीं, त्रास नहीं, उद्वेग नहीं, क्षोभ नहीं, चलित नहीं, संभ्रांतपना नहीं लाता हुवा मौन कर अपनी प्रतिज्ञा पालन करता ही रहा।

पिशाचरूप देवने कामदेव श्रावकको अक्षोभीत धर्मध्यान करता हुवा देखके और भी गुस्साके साथ दो तीनवार वही वचन सुनाया। परन्तु कामदेव लगार मात्र भी क्षोभित न होकर अपने आत्मध्यानमें ही रमणता करता रहा।

मायी मिथ्यादृष्टि पिशाचरूप देवने कामदेव श्रावकपर अत्यन्त क्रोध करता हुवा उन्ही तीक्षण धारावाली तलवार (खड्ग) से कामदेव श्रावकका खंड खंड कर दिया उस समय कामदेव श्रावकको घोर वेदना-अत्यन्त वेदना अन्य मनुष्योंसे सहन करना भी मुश्कील है एसी वेदना हुइ थी। परन्तु जिन्होंने चैतन्य और जडका स्वरूप जाना है कि मेरा चैतन्य तो सदा आनन्दमय है इन्हीकों तो किसी प्रकारकी तकलीफ है नहीं और तकलीफ है इन्ही शरीरकों यह शरीर मेरा नहीं है। एसा ध्यान करनेसे अं अति वेदना हो तो भी आर्तध्यानादि दुष्ट परिणाम नहीं होते है वीतरागके शासनका यही तो महात्व है।

पिशाचरूप देवने कामदेवको धर्मपरसे नहीं चला हुवा देखके आप पौषधशालासे निकलकर पिशाचरूपको छोडके एक महान हस्तीका रूप बनाया। यह भी बडा भारी भयंकर रौद्र और जिसके दन्ताशुल बडे ही तीक्ष्ण थे। यावत् देव हस्तीरूप धारण कर पौषधशालामें आके पहेलेकी माफीक बोलता हुवा कि भो कामदेव! अगर तुं तेरा धर्मको न छोडेगा तो मैं अभी तेरेको इस सूंढ द्वारा पकड आकाशमें फैंक दूंगा और पीछे गीरते हुवे तुमको यह मेरी तीक्षण दन्ताशुल है इसपर तेरेको पो दूंगा और धरतीपर खुब रगडुंगा ताकि तुं आर्तध्यान रौद्रध्यान करता हुवा मृत्यु धर्मको प्राप्त होगा। ऐसा दो तीन दफे कहा, परन्तु कामदेव श्रावक तो पूर्ववत् अटल-निश्चल आत्मध्यानमें ही रमण करता रहा भावना सर्व पूर्ववत् ही समझना।

हस्तीरूप देवने कामदेवको अक्षोभ देखके बडाही क्रोध करता हुवा कामदेवको अपनी सूंढमें पकड आकाशमें उछाल दीया और पीछे गीरते हुवेको दन्ताशुलसें जैसे त्रीशुलमें पो देते हैं इसी माफीक पकडके धरतीपर रगडके खुब तकलीफ दी परन्तु कामदेवके एक प्रदेशको भी धर्मसे चलित करनेको देव समर्थ नहीं हुवा। कामदेवने अपने बान्धे हुवे कर्म समझके उन्ही उज्वल वेदनाको सम्यक् प्रकारसे सहन करी।

देवने कामदेवको अटल-निश्चल देखके पौषधशालासे निकल हस्तीके रूपको छोड वैक्रिय लब्धिसे एक प्रचन्ड आशीविष सर्पका रूप बनाके पौषधशालामें आया। देखनेमें बडाही भयंकर था. वह बोलने लगा कि हे कामदेव! अगर तुं तेरा धर्म नहीं छोडेगा तो मैं अभी इस विष सहित दाढोंसे तुजे मार डालुंगा इत्यादि दुर्वचन बोला परन्तु कामदेव बिलकुल क्षोभ न पाता

हुवा अटल-निश्चल रहा। दुष्ट देवने कामदेवको बहुत उपसर्ग किया परन्तु धर्मवीर कामदेवको एक प्रदेश मात्रमें भी क्षोभित करनेको आखीर असमर्थ हुवा। देवताने उपयोग लगाके देखा तो अपनी सब दुष्ट वृत्ति निष्फल हुइ। तब देवताने सर्पका रूप छोड़ के एक अच्छा मनोहर सुन्दराकार वस्त्राभूषण सहित देव रूप धारण किया और आकाशके अन्दर स्थित रहके बोलता हुवा कि हे कामदेव! तुं धन्य है पूर्व भवमें अच्छे पुन्य कीया है। हे कामदेव! तुं कृतार्थ है। यह मनुष्य जन्मको आपने अच्छी तरहसे सफल किया है। यह धर्म तुमको मीला ही प्रमाण है। आपकी धर्मके अन्दर दृढता बहुत अच्छी है। यह धर्म पाया ही आपका सार्थक है। हे कामदेव! एक समय सौधर्म देवलोक की सौधर्मी सभाके अन्दर शक्रेन्द्रने अपने देवताओंके वृन्दमें बैठ हुवा आपकी तारीफ और धर्मके अन्दर दृढताकी प्रशंसा करीथी परन्तु मैं मूढमति उस बातको ठीक नही समजके यहांपर आके आपकी परिक्षाके निमस आपको मैंने बहुत उपसर्ग किया है परन्तु हे महानुभाव! आप निर्ग्रन्थके प्रवचनसे किंचत भी क्षोभा-यमान नही हुये। वास्ते मैंने प्रत्यक्ष आपकी धर्म दृढताको देखी है। हे आत्मवीर अब आप मेरा अपराधको क्षमा करे. ऐसे बारबार क्षमा याचना करता हुवा देव बोला कि अब ऐसा कार्य मैं कभी नहीं करूंगा इत्यादि कहता हुवा कामदेवको नमस्कार कर स्वर्गको गमन करता हुवा।

तत्पश्चात कामदेव श्रावक निरुपसर्ग जानके अपने अभि ग्रह (प्रतिज्ञा) को पालता हुवा।

जिस रात्रीके अन्दर कामदेव श्रावकको उपसर्ग हुवा था

अन्तमें एक मासका अनशन कर आलोचना कर समाधिमें काल कर सौधर्मदेवलोकमें अरूण नामका विमानमें च्यार पल्योपम स्थितिवाला देव हुवा। वहांसे आयुष्य पूर्ण कर महाविदेह क्षेत्रमें मोक्ष जावेगा ॥ इतिशम् ॥ २ ॥

—•⊰(◎)⊱•—

(३) अध्ययन तीसरा चुलनिपिताधिकार.

बनारसी नगरी कोष्टक उद्यान, जयशत्रु राजा राज करता था। उस नगरीमें एक चुलनिपिता नामका गाथापति बडाही धनाढ्य था। उसको शोभा नामकी भार्या थी। चौवीस क्रोड सोनैयाका द्रव्य था। जिसमें आठ क्रोड धरतीमें, आठ क्रोड व्यापारमें और आठ क्रोडका घर वीक्रिमें था। और आठ वर्ग अर्थात् ऐंसी हजार गौ (गायों) थी। आनन्दके माफीक नगरीमें बडा माननीय था।

भगवान वीरप्रभु पधारे। राजा और चुलनिपिता वन्दन करनेको गये। भगवानने धर्मदेशना दी। आनन्दकी माफीक चुलनिपिताने भी स्वइच्छा परिमाण रखके श्रावकके व्रत धारन कर भगवानका श्रावक बन गया।

एक समय पौषधशालामें ब्रह्मचर्य सहित पौषध कर आत्म रमणता कर रहा था। अर्द्ध रात्रीके समय एक देवता हाथमें निलोत्पल नामकी तलवार ले के चुलनिपित श्रावक के पास आया और कामदेवकी माफीक चुलनिपिताको भी धर्म छोडने की अनेक धमकीयां दी। परन्तु चुल० धर्मसे क्षोभायमान नहीं

हुवा। तब देवताने कहा कि अगर तुं धर्म नहीं छोडेगा तो मैं आज तेरे ज्येष्ठ पुत्रको तेरे आगे मारके खंड २ कर रुधिर, मेद, और मांस तेरे शरीरपर लेपन करदूंगा, और उनका तेलमांसका शूला बनाके तैलकी कडाहमें तेरे सामने पकाउंगा। उसको देखके तूं आर्त्तध्यान कर मृत्यु धर्मसे भ्रष्ट होगा। तब भी चुल-निपिता क्षोभायमान न हुवा। देवताने पूर्वोक्त अत्याचार कर दिखाया। पुत्रका तीनतीन खंड कीया। तथापि चुलनीपिताने अपने आत्मध्यानमें रमणता करता हुवा उस उपसर्गको सम्यक् प्रकारसे सहन किया। क्योंकि देवताने धर्म छोडानेका साहस किया था। पुत्रादि अनन्तिवार मीला हैं यह भी कारमा संबंन्ध हैं। धर्म है सो निजवस्तु हैं। चुलनिपिताको अक्षोभ देख देवताने पहेले की माफीक कोपित होके दुसरे पुत्रको भी लाके खंड २ किया, तो भी चुलनिपिता अक्षोभ होके उपसर्गको सम्यक् प्रकारसे सहन किया। तीसरी दफे कनिष्ट (छोटा) पुत्रको लाके उसका भी खंड २ किया। तो भी चुलनिपिता अक्षोभ ही रहा।

देवने कहाकि हे चुलनिपिता! अगर तुं धर्म नहीं छोडेगा तो अब मैं तेरी माता जो भद्रा तेरे देवगुरु समान है उसको मैं तेरे आगे लाके पुत्रोंकी तरह अभी मारेंगा। यह सुनके चुलनि-पिताने सोचा कि यह कोइ अनार्य पुरुष ज्ञात होता है कि जिन्होंने मेरे तीन पुत्रोंको मार डाला। अब जो मेरे देवगुरु समान और धर्ममें सहायता देनेवाली भद्रा माता है उसको मारनेका साहस करता है तो मुझे उचित है कि इस अनार्य पुरुषको मैं पकड लूं। ऐसा विचार कर पकडनेको तैयार हुवा। इतनेमें देवता आकाशमें गमन करता हुवा। और चुलनिपिताके हाथमें एक स्थंभ आगया और कोलाहल हुवा। इस हेतु भद्रा

एक रोज मृगादेव पौषधशालामें पौषध कर अपना आत्मध्यान कर रहा था।

अर्ध रात्रीके समय एक देवता आया। जैसे चुलनिपिताको उपसर्ग कीया था इसी माफीक मृगादेवको भी कीया। परन्तु इन्होंके एकेक पुत्रका पांच पांच खंड किया था और चोथीवार कहने लगा कि अगर तुं तेरा धर्म नहीं छोडेगा तो मैं आज तेरे शरीरमें जमगलमगादि सोलह बडे रोग है वह उत्पन्न कर दूंगा यह सुनके मृगादेव चुलनिपिताकी माफीक पकडनेको प्रयत्न किया। इतनेमें देवने आकाशगमन किया। हाथमें स्थंभ आया। कोलाहाल सुनके धन्ना भार्याने कहा है स्वामिन! आपके तीनो पुत्र घरमें सुते हैं परन्तु कोइ देवने आपको उपसर्ग किया है वास्ते आप इस स्थानकी आलोचना करना इस बातको मृगादेवने स्वीकार करी।

मृगादेव श्रावकने साढेचौदह वर्ष गृहस्थावासमें रह कर श्रावक व्रत पाला, साडेपांच वर्ष तक इग्यारे प्रतिमा वहन करी। अन्तमें आलोचना कर एक मासका अनशन कर समाधिपूर्वक काल कर सौधर्मदेवलोकमें अरूणकन्त नामका वैमानमें च्यार पल्योपमकी स्थितिवाला देवता हुवा। वहांसे महाविदेहक्षेत्रमें मोक्ष जावेगा॥ इतिशम॥ ४॥
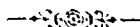
(५) पांचवा अध्ययन चुलशतकाधिकार.

आलंभीया नगरी, संखवनोद्यान. जयशत्रु राजा था। उस नगरीमें चुलशतक नामका गाथापति वसता था। उसको बाहुला

नामकी भार्या थी और अठारह क्रोडका द्रव्य, साठ हजार गायों यावत् बडाही धनाढ्य था।

भगवान वीरप्रभु पधारें। राजा, प्रजा और चुलशतक वन्दनको गये। भगवानने अमृतमय देशना दी। चुलशतक आनन्द की माफीक स्वइच्छा मर्यादा कर सम्यक्त्व मूल बारह व्रत धारण कीया।

चुलनिपिताकी माफीक इसको भी देवताने उपसर्ग कीया। परन्तु एकेक पुत्रके सात सात खंड किया। चोथी वखत देवता कहने लगा कि अगर तुं धर्म नहीं छोडेगा तो मैं तेरा अठारा क्रोड सोनैयाका द्रव्य इसी आलंभीया नगरीके दो तीन यावत् बहुतसे रास्तेमें फेंकदूंगा कि जिन्होंके जरिये तुं आर्तध्यान करता हुआ मृत्यु पामेगा।

यह सुनके चुलशतकने पूर्ववत् पकडनेका प्रयत्न कीया इतनेमें देव आकाश गमन करता हुवा। कोलाहल सुनके बहुला भार्याने कहा कि आपके तीनों पुत्र घरमें सुते हैं यह कोइ देवने आपको उपसर्ग किया है। वास्ते इस बातकी आलोचना लेना। चुलशतकने स्वीकार किया।

चुलशतकने साढे चौदह वर्ष गृहवासमें श्रावकपणा पाला, साढे पांच वर्ष इग्यारा प्रतिमा वहन कीया; अन्तमें आलोचना कर एक मास अनसन कर समाधिमें काल कर सौधर्म देवलोकके अरूणश्रेष्ट वैमानमें च्यार पल्योपमकी स्थितिमें देवपणे उत्पन्न हुवा। वहांसे आयुष्य पूर्णकर महाविदहमें मोक्ष जावेगा। इतिशम् ॥ ५ ॥

—※—

(६) छट्टा अध्ययन कुडकोलिकाधिकार.

कपील्लपुरनगर, सहस्र आम्र उद्यान, जयशत्रुराजा, उसी नगरमें कुंडकोलिक नामका गाथापति बडाही धनाढ्य बसता था। उसको पुंसा नामकी भार्याथी, कामदेवकी माफीक अठारा क्रोड सोनैया और साट हजार गायों थी।

भगवान वीरप्रभु पधारे, राजाप्रजा और कुंडकोलिक वन्दन करनेको गया। भगवानने धर्मदेशना दी। कुंडकोलिकने स्व-इच्छा मर्यादाकर सम्यक्त्व मूळ बारह व्रत धारण कीया।

एक समय मध्यान्हकालकी वखत कुंडकोलिक श्रावक अशोक वाडीमें गयाथा, सामायिक करनेके इरादासे नामांकित मुद्रिकादि उतारके पृथ्वी शीलापटपर रखके भगवानके फरमाये हुवे धर्म चिंतवन कर रहा था।

उस समय एक देवता आया। वह पृथ्वी शीलापटपर रखी हुइ नामांकित मुद्रिकादि उठाके देवता आकाशमें स्थित रहा हुवा कुंडकोलीका श्रावक प्रति ऐसा बोलता हुवा।

भो कुंडकोलिया! सुन्दर है मंखली पुत्र गोशालाका धर्म क्योंकि जिन्होंके अन्दर उस्स्थान (उठना) कर्म (गमन करना) बल (शरीरादिका) वीर्य (जीवप्रभाव) पुरुषाकार (पुरुषार्थाभिमान) इन्होंकी आवश्यकता नहीं है। सर्व भाव नित्य है अर्थात् गोशालाके मतमें भवितव्यताको ही प्रधान माना है वास्ते उत्स्थानादि क्रिया कष्ट करनेकी आवश्यकता नहीं है। और भगवान महावीर स्वामिका धर्म अच्छा नहीं है क्योंकि जिसके अन्दर उत्स्थान, कर्म, बल, वीर्य और पुरुषाकार बतलाये हैं

एक समय शकडाल अपने मकानके अन्दरसे बहुतसे मट्टीके बरतनोंको बाहार धूपमें रख रहाथा. उन्ही समय भगवान शकडालसे पुच्छा कि हे शकडाल! यह मट्टीके बरतन तुमने कैसे बनाया है? । शकडालने उत्तर दिया कि हे भगवान पहिले इस लोग मट्टी लायेथे और इन्होंके साथ पाणी खारादिक मीलके चक्रपर चडाके यह बरतन बनाये हैं।

हे शकडाल! यह मट्टीके बरतन तैयार हुवा है वह उत्थानादि पुरुषार्थ करनेसे हुवे है कि विन पुरुषार्थसे।

हे भगवान! यह सर्व नियतभाव है भवीतव्यता है इसमें उत्थानादि पुरुषार्थकी क्या जरूरत है।

हे शकडाल! अगर कोइ पुरुष इस तेरे मट्टीका बरतनको कीसी प्रकारसे फोडे तोडे इधर उधर फेंक दे चोरीकर हरन करे तथा तुमारी अग्निमित्रा भार्यासे अत्याचार अर्थात भोगविलास करता हो तो तुम उन्ही पुरुषको पकडेगा नहीं दंड करेगा नहीं ताडन तर्जन बांधके मारेगा नहीं तब तुमारा अनुत्थान यावत अपुरुषार्थ और सर्व भाव नियतपणा कहना ठीक होगा। ऐसा वरताव दुनियामें दीखता नहीं है। यह एक दृष्टिकी अनीति अत्याचार है और सदाचार अनीति अत्याचार हो वहांपर धर्म कैसे हो सक्ता है) अगर तुम कहोगा कि मैं उन्ही अकृत्याकारी पुरुषको मारूंगा पकडूंगा यावत प्राणोंसे नाश करूंगा तो तेरा कहना अनुत्थान यावत अपुरुषाकार सर्व भाव नियत है वह मिथ्या होगा। इतना सुनतेही शकडाल को ज्ञान हो गया कि भगवान फरमाते है वह सत्य है क्योंकि पुरुषार्थ विना कोइ भी कार्योंकी सिद्धि नहीं होती है। शकडालने कहा कि हे भगवान मेरी इच्छा है कि मैं आपके मुखारविन्दसे विस्तारपूर्वक ध-

श्रवण कर तब भगवानने शकडालको विस्तारसे धर्म सुनाया। यह शकडालपुत्र गोशालेका भक्त, भगवान वीरप्रभुकी मधुर भाषासे स्याद्वाद रहस्ययुक्त आत्मतत्व ज्ञानमय देशना श्रवण कर बडे ही हर्षको प्राप्त हुवा. बोला कि हे भगवान! धन्य है जो राजेश्वरादि आपके पास दीक्षा ग्रहन करते हैं मैं इतना समर्थ नहीं हुं परन्तु मैं आपकि समीप श्रावक धर्म ग्रहन करना चाहता हूं। भगवानने फरमाया कि जैसे सुख हो वैसा करो परन्तु धर्म कार्यमें विलम्ब करना उचित नहीं है। तब शकडाल पुत्र कुंभकारने भगवानके पास आनन्दकी माफीक सम्यक्त्व मूल बारह व्रतको धारण कीया परन्तु स्वइच्छा परिमाण किया जिसमें द्रव्य तीन क्रोड सोनैया तथा अग्रमित्ता भार्या और दुकानादि मोकली रखी थी। शेष अधिकार आनन्दकी माफीक समझना। भगवानको वन्दन नमस्कार कर पोलासपुरके प्रसिद्ध मध्य बजार हो के अपने घरपे आया. और अपनी भार्या अग्रमित्ताको कहा कि मैंने आज भगवान वीरप्रभुके पास बारह व्रत ग्रहन कीया है तुम भी जाओ भगवानसे वन्दन नमस्कार कर बारह व्रत धारण करो। यह सुनके अग्रमित्ता भी बडे हो धाम-धूम आडम्बरसे भगवानको वन्दन करनेको गइ और सम्यक्त्व मूल बारह व्रत धारण कर भगवानको वन्दन नमस्कार कर अपने घरपे आके अपने पतिको आज्ञा सुप्रत करती हुइ। अब दम्पति भगवानके भक्त हो भगवानके धर्मका पालन करते हुवे आनन्दमें रहने लगे। भगवान भी वहांसे विहार कर अन्य देशमें गमन किया।

शकडाल कुंभकार और अग्रमित्ता भार्या यह दोनों जीवाजी-

३

शकडालने कहा किस कारण महागोप है ?

गोशालाने कहा कि संसार रूपी महान् अटवी है जिस्में बहुतसे जीव, विनाशको प्राप्त होते हुए छिन्न भिन्नादि खराब दशा को पहुंचते हुये को धर्मरूपी दंड हाथमें ले के सिधा सिद्धपुर पाटणके अन्दर ले जा रहे हैं वास्ते महागोप वीरप्रभु है।

गोशालाने कहा कि हे शकडाल! यहां महासार्थवाह आये थे?

शकडालने कहा कि कौन महासार्थवाह ?

गोशालाने कहा कि भगवान् वीरप्रभु महासार्थवाहा है।

शकडालने कहा कि कीस कारणसे ?

गोशालाने कहा कि संसाररूपी महा अटवीमें बहुतसे जीव नासते हुवे-यावत् विलुपत हुये को धर्मपन्थ बतलाते हुये निवृतिपुरमें पहुंचा देते हैं। वास्ते भगवान वीरप्रभु महासार्थवाह हैं।

गोशाला बोला कि हे शकडाल! यहां पर महाधर्मकथक आये थे ?

शकडालने कहा कि कौन महाधर्म कथा कहेनेवाले।

गोशालाने कहा कि भगवान वीरप्रभु।

शकडालने कहा कि किस कारणसे।

गोशालाने कहा कि संसारके अन्दर बहुतसे प्राणी नाश पामते यावत् उन्मार्ग जा रहे हैं उन्हों को सन्मार्ग लगानेके लिये महाधर्म कथा केहके चतुर्गति रुपी संसारसे पार करनेवाले भगवान् वीरप्रभु महाधर्म कथाके केहनेवाले हैं।

गोशालाने कहा कि हे सकडाल! यहां पर महा निर्यामक आये थे ?

शकडालने कहा कि कौन महा निर्जामक ?

गोशालाने कहा भगवान वीरप्रभु महा निर्जामक है।

शकडालने कहा किस कारणसे!

गोशालाने कहा कि संसार समुद्रमें बहुतसा जीव डुबते हुये को भगवान वीरप्रभु धर्मरूपी नावमें बेठाके निवृत्तिपुरीके सन्मुख कर देते हैं वास्ते भगवान वीरप्रभु महा निर्जामक हैं।

शकडाल बोला कि हे गोशाला! इस वखत तुं मेरे भगवानका गुणकीर्त्तन कर रहा है यथा गुण करनेसे तुं निविश है विज्ञानवन्त है तो क्या हमारे भगवान वीरप्रभुके साथ विवाद (शास्त्रार्थ) कर सकेगा ?

गोशालाने कहा कि मैं भगवान वीरप्रभुके साथ विवाद करनेको समर्थ नहीं हुं।

शकडाल बोला कि किस कारणसे असमर्थ है।

गोशाला बोला कि हे शकडाल! जैसे कोइ युवक मनुष्य बलवान यावत् विज्ञानवन्त कलाकौशल्यमें निपुण मजबुत स्थिर शरीरवाला होता है वह मनुष्य एलक, सुवर, कुकड, तीतर, भटेवर, लाहाग, पारेवा, काग, जलकागादि पशुवोंके हाथ पग, पांख, पुच्छ, शृंग, चर्म, रोम आदि जो जो अवयव पकडते है वह मजबुत ही पकडते है। इसी माफीक भगवान वीरप्रभु मेरे प्रश्न हेतु यगरणादि जो जो पकडते है उन्होंमें फीर मुझे बोलनेका अवकाश नहीं रहते है। अर्थात उन्होंके आगे मैं कोनसी चीज हुं। वास्ते हे शकडाल! मैं तुमारे धर्माचार्य भगवान वीरप्रभुके साथ विवाद करनेको असमर्थ हुं।

यह सुनके शकडालपुत्र श्रावक बोला कि हे गोशाला! तु

आज साफ हृदयसे मैंने भगवानका यथार्थ गुण करता हैं वास्ते मैं तुझे उतरनेको पांचसौ दुकानें और पाटपाटला शय्या संथारकी आज्ञा देता हूं किन्तु धर्मरूप समझके नहीं देता हुं. वास्ते जावो कुंभकारकी दुकानों आदि भोगवो (काममें लो)। बस। गोशालो उन्ही दुकानों आदिको उपभोगमें लेता हुवा और भी शकडाल प्रत्ये हेतु युक्ति आदिसे बहुत समझाया। परन्तु जिन्होंने आत्मवस्तु तत्त्वज्ञान कर पहचान लिया है। उन्होंको मनुष्य तो क्या परन्तु देवता भी समर्थ नहीं हैं कि एक प्रदेशमात्रमें क्षोभ कर सके। गोशालेकी सर्व कुयुक्तियोंको शकडाल श्रावक न्यायपूर्वक युक्तियों द्वारा नष्ट कर दी। बादमें गोशाला वहांसे विहार कर अन्य क्षेत्रोंमें चला गया।

शकडालपुत्र श्रावक बहुत काल तक श्रावक व्रत पालते हुवे। एक दिन पौषधशालामें पौषध किया था उन्ही समय आधी रात्रिमें एक देव आया. और चुलणी पिताकी माफीक तीन पुत्रका प्रत्येकका नौ नौ खंड किया. और चोथीवार अग्निमित्ता भार्या जो धर्मकार्योंमें सहायता देती थी उन्होंको मारनेका देवने दो तीन दफे कहा तब शकडालने अनार्य समझके पकडनेको उठा यावत् अग्निमित्ता भार्या कोलाहल सुन सर्व पूर्ववत् साढाचौदा वर्ष गृहस्थावासमें श्रावक व्रत. साढापांच वर्ष प्रतिमा अन्तिम आलोचनापूर्वक एक मासका अनशन कर समाधिसहित काल कर सौधर्म देवलोकके अरुणभूत वैमानमें च्यार पल्योपमकी स्थितिवाला देवता हुवा। वहांसे आयुष्य पूर्ण कर महाविदेह क्षेत्रमें उत्तम जाती-कुलमें उत्पन्न हो और दीक्षा लेके केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जावेगा ॥ इतिशम्।

(८) आठवा अध्ययन महाशतकाधिकार।

राजगृह नगर, गुणशीला उद्यान, श्रेणिक राजा, उस्ही नगरमें महाशतक गाथापति बडा ही धनाढ्य था, जिन्होंके रेवंती आदि तेरा भार्यायों थी। चौवीस क्रोडका द्रव्य था, जिन्होंमें आठ क्रोड धरतीमें, आठ क्रोड वैपारमें, आठ क्रोड घरविखरमें और आठ गोकुल अर्थात् असी हजार गायों थी। और महाशतकके रेवंती भार्याके बापके घरसे आठ क्रोड सोनैया और असी हजार गायों दातमें आइ थी तथा शेष बारह भार्यायोंके बापके घरसे एकेक क्रोड सोनैया और दश दश हजार गायो दातमें आइ थी। महाशतक नगरमें एक प्रतिष्ठित माननिय गाथापति था।

भगवान वीरप्रभुका पधारणा राजगृह नगरके गुणशील उद्यानमें हुवा। श्रेणिक राजा तथा प्रजा भगवानको वन्दन करनेको गये। महाशतक भी वन्दन निमित्त गया। भगवानने देशना दी। महाशतकने आनन्दकी माफीक सम्यक्त्व मूल बारह व्रतोंधारण कीया, परन्तु चौवीस क्रोड द्रव्य और तेरह भार्यायों तथा कामीपात्रसे द्रव्य देना पीच्छा दुगुनादि लेना, एसा वैपार रखा। शेष त्याग कर जीवादिपदार्थोका जानकार हो अपनि आत्मरमणताके अन्दर भगवानकी आज्ञाका पालन करता हुवा विचरने लगा।

एक समय रेवंती भार्या रात्रि समय कुटुम्ब जागरण करती एसा विचार किया कि इन्हीं बारह शोक्योंके कारणसे मैं मेरा पति महाशतकके साथ पांचों इन्द्रियोंका सुख भोगविलास स्वतन्त्रतासे नहीं कर सकूं, वास्ते इन्ही बारह शोक्योंको अग्निविष तथा शस्त्रके प्रयोगसे नष्ट कर इन्होंके एकेक क्रोड सोनैया तथा

एकेक वर्ग गायोंका मैं अपने कबजे कर मेरा भरतारके साथ मनुष्य संबन्धी कामभोग अपने स्वतंत्रतासे भोगवती हुइ रहुं।

एसा विचार कर छे शोक्योंको शस्त्र प्रयोगसे और छे शोक्योंको विषप्रयोगसे मृत्युके धामपर पहुंचा दी अर्थात् मार डाली। और उन्होंका बारह क्रोडो द्रव्य और बारह गोकुल अपने कबजे कर महाशतकके साथमें भोगविलास करती हुइ स्वतंत्रतासे रहने लगी। स्वतंत्रता होनेसे रेवंतीनि. गायावनिने मांस मदिरा आदि भक्षण करना भी प्रारंभ कर दीया।

एक समय राजगृह नगरके अन्दर श्रेणिक राजाने अमारि पडह बजवाया था कि किसी भी जीवको कोइ भी मारने नहीं पावे। यह बात सुनके रेवंतीने अपने कुल मनुष्योंको बोलाके कहा कि तुम जाओ मेरे गायोंके गोकुलसे प्रतिदिन दोय दोय बोला लाओ। मेरेको ला दीया करो। वह मनुष्य प्रतिदिन दोय दोय लाकर रेवंतीको सुप्रत कर देना स्वीकार किया. रेवंती उन्होंका मांस सोला बनाके मदिराके साथ भक्षण कर रही थी।

महाशतक श्रावकसाधिक चौदा वर्ष श्रावक व्रत पालके अपने जेष्ठ पुत्रको घरभार सुप्रत कर आप पौषधशालामें जाके धर्म साधन करने लग गया।

इधर रेवंती मांसमदिरादि आस्वाद करती हुइ काम विकारसे उन्मत्त बनके एक समय पौषधशालामें महाशतक श्रावकके पासमें आइ और कामविह्वल होके स्वच्छंदा घूंघटके साथ केशपाश अर्थात् शरीरके वालोंसे महाशतक श्रावक प्रति बोलती हुइ कि भो महाशतक तुं धर्म पुन्य स्वर्ग और मोक्षका मी हो रहा है. क्योंकि किसीका तुमको मत नहीं है इसीसे तो तुम को एसा मन रही है जिससे मुझ मेरे साथ मनुष्य सम्बन्धी काम

(९) नवमां अध्ययन नन्दनीपिताधिकार ।

सावत्थी नगरी कोष्टकोद्यान जयशत्रु राजा । उन्ही नगरीमें नन्दनीपिता गाथापती था उन्हाके अश्विनि नामकी भार्या थी और बारह क्रोड सोनइयाका द्रव्य तथा च्यार गौकुल अर्थात् चालीस हजार गायों थीं जैसे आनन्द ।

भगवान पधारे आनन्दकी माफीक श्रावक व्रत ग्रहन किये साधिक चौदा वर्ष गृहस्थावासमें श्रावक व्रत पालन कीये साढा पांच वर्ष श्रावक प्रतिमा वहन करी अन्तिम आलोचन कर एक मासका अनशन कर समाधिपूर्वक काल कर सौधर्म देवलोकके अरुणगवं वैमानमें च्यार पल्योपम स्थितिके देवता हुवा। वहांसे आयुष्य पूर्ण कर महाविदेह क्षेत्रमे मोक्ष जावेगा । इतिशम् ।

—•✿◎✿•—

(१०) दशवां अध्ययन शालनीपिताधिकार ।

सावत्थी नगरी कोष्टकोद्यान जयशत्रु राजा । उन्ही नगरीमें शालनीपिता नामका गाथापति वसता था । उन्हाके फाल्गुनि नामकी भार्या थी । बारह क्रोड सोनइयाका द्रव्य और चालीस हजार गायों थी ।

भगवान पधारे आनन्दकी माफीक श्रावक व्रत ग्रहण किये। साढा चौदा वर्ष गृहस्थावासमें श्रावक व्रत साढा पांच वर्ष श्रावक प्रतिमा वहन करी अन्तिम आलोचन कर एक मासका अनशन कर समाधिपूर्वक काल कर सौधर्म देवलोकमे अरुणकिल वैमानमें च्यार पल्योपमकी स्थितिमें देवतापणे उत्पन्न हुवे वहा

श्री अन्तगडदशांगसूत्रका संक्षिप्त सार.

(१) पहेला वर्ग जिस्का दश अध्ययन है।

प्रथम अध्ययन—चतुर्थ आरेके अन्तिम यादवकुलधूंगा
बालब्रह्मचारी बावीसमा तीर्थंकर श्री नेमिनाथ प्रभुके समयर्क
बात है कि इस जम्बूद्विपकी भारतभूमिके अलंकार सामान्य बा
रह योजन लम्बी नव योजन चोडी सुवर्णके कोट रत्नोंके कंगं
गहमह मन्दिर तोरण दरवाजे पोल तथा उंचे उंचे प्रासाद मानं
गगनसेंही वातों न कर रहेहो और बडे बडे शीखरवाले देवालय
पर विजय विजयन्ति पताकाओंपर अवलोकन किये हुये मिहा
दिके चिन्ह जिन्होंके डरके मारे आकाश न जाने उर्ध्व दिशां
गमनकरनेके वास्ते अति वेगसे जारहो हो तथा दुपद चतुष्प
और धन धान्य मणि माणक मोती परवाल आदिसे समृ
और भी अनेक उपमा संयुक्त पसी द्वारामती (द्वारका) नामर्क
नगरीथी। यह नगरी धनपति-कुबेर देवताकि कलाकौशल्य
रची गइथी शास्त्रकार व्याख्यान करते है कि यह नगरी प्रत्य
देवलोक सदृश मानों अल्कापुरी हो निवास कीया हो जनमन
हर्ष मनको प्रसन्न नेत्रोंको तृप्त करनेवाली बडीही सुन्दराकार स्व
रूपसे अपनी कीर्ति सुरलोक तक पहुंचादीथी। नगरीके लोक
बडे न्यायशील स्वसत्ती स्वदारासेही संतोष रखतेथे वहलों
परद्रव्य लेनेमें पंगु थे परस्त्री देखनेमें अन्धे थे, परनिंदा सुन
को बेरे थे परापवाद बोलनेको मुंगे थे. उन्ही नगरीके अन्द
दंडका नाम फक्त मन्दिरों के शिखर पर ही देखा जाते थे औ

न्धका नाम औरतोंकि वेणी पर ही पाये जाते थे। यह नगरी लोक मर्दृत्यके लिये प्रमुदित चित्तसे कामअर्थधर्म मोक्ष इन्ही च्यारों कार्यमें पुरुषार्थ करते हुवे आनन्दपूर्वक नगरीकी शोभामें वृद्धि करते थे।

द्वारकानगरी के बाहार पूर्व और उत्तर दिशाके मध्य भाग ईशानकोनमें सिखर टुंक गुफायों मेखलायों कन्दरों निझरणा और अनेक वृक्षलत्तायोंसे सुशोभनिक रैवन्तगिरि नामका पर्वत था।

द्वारकानगरी और रैवन्तगिरि पर्वत के विचमें अनेक कुवे वापी सर द्रह और चम्पा, चमेली, केतकि, मोगरा, गुलाब, जाइ, जुइ, हीना, अनार, दाडिम, द्राक्ष, खजुर, नारंगी, नाग पुनागादि वृक्ष तथा शामलता अशोकलता चम्पकलता और भी गुच्छा गुल्म वेलि तृण आदि लक्ष्मीसे अपनी छटाको दीपाते हुवा, भोगी पुरुषों को विलास और योगिपुरुषोंको ज्ञान ध्यान करने योग्य मानो मेरुके दुसरा वनकि माफीक 'नन्दन' वन नामका उद्यान था वह छहों रुतुके फल-फूलके लिये बडा ही उदार-दातार था।

उसी नन्दनवनोद्यानमें बहुतसे देवता देवीयों विद्याधर और मनुष्यलोक अपनी अपनीकाः अन्त कर रतिके साथ रमनता करते थे।

उसी उद्यानके एक प्रदेशमें अच्छे सुन्दर विशाल अनेक स्थानोंपर तोरण, रंभासी मनोहर पुतलीयोंसे मंडित सुरप्पीय यक्षका यक्षायतन था। वह सुरप्पीय यक्ष भी चीरकालका पुराणा था बहुतसे लोकोंके वन्दन पुजन करने योग्य था अगर भक्तिपूर्वक जो उसीका स्मरण करते थे उन्होंके मनोकामना पूर्ण कर अच्छी

तीन मासके बाद राणीको अच्छे अच्छे दोहले उत्पन्न हुये जिस्को राजाने आनन्दसे पुर्ण किये। नव मास साढेसात रात्रि पुर्ण होनेसे अच्छे ग्रह नक्षत्र योग आदिमें राणीसे पुत्रका जन्म हुवा है। राजाको खबर होनेसे कैदीयोंको छोड दीया है माप तोल बढा दीया था और नगरमें बडा ही महोत्सव कीया था।

पहले दिन सुतीका कार्य किया. तीसरे दिन चन्द्रसूर्यका दर्शन. छठे दिन रात्रिजागरण. इग्यारमे दिन असूचिकर्म दूर किया. बारहवे दिन विस्तरण प्रकारके अशन पान खादिम स्वादिम निपजाके अपने कुटुम्ब-न्याति आदिको आमन्त्रण कर भोजनादि करवाके उस राजपुत्रका नाम "गौतमकुमार" दीया। पंचधावोंसे वृद्धि पामतो बालक्रिडा करते हुवे जब आठ वर्षका राजकुमार हो गया। तब विद्याभ्यासके लिये कलाचार्यके वहां भेजा और कलाचार्यको बहुतसा द्रव्य दिया। कलाचार्य भी राजकुमारको आठ वर्ष तक अभ्यास कराके जो पुरुषोंकी ७२ कला होती है उन्होंने प्रविन बनाके राजाको सुप्रत कर दिया। राजाने कुमारका अभ्यास और प्राप्त हुइ १६ वर्षकी युवकावस्था देख विचार किया कि अब कुमारका विवाह करना चाहिये, जब राजाने पेस्तर आठ सुन्दर प्रासाद कुमराणीयोंके लिये और आठोंके बिचमें एक मनोहर महेल कुमारके लिये बनवाके आठ बडे राजाओंकी कन्याओं जो कि जोवन, लावण्यता, चातुर्यता, वर्ण, वय तथा ६४ कलामें प्रविण, साक्षात सुरसुन्दरीयोंके माफीक जिन्होंका रूप है एसी आठ राजकन्याओंके साथ गौतमकुमारका विवाह कर दिया। आठ कन्याओंके पिताने दात (दायजो) कितनो दियो जिस्का विवरण शास्त्रकारोंने बडा ही विस्तारसे किया है (देखो भगवतीसूत्र महाबलाधिकार) एकतो

लोक जा रहे हैं तो अपने भी चल कर वहां क्या हो रहा है यह देखेंगे।

आदेश करते ही रथकारद्वारा तैयार अश्ववाला रथ तैयार हो गया, आप भी स्नानमज्जन कर वस्त्राभूषणसे शरीरको अलंकृत कर रथपर बैठके परिषदाके साथ हो गये। परिषदा पंचाभिगम धारण करते हुये भगवानके समोसरणमें जाके भगवानको तीन प्रदक्षिणा देके सब लोग अपने अपने योग्यस्थानपर बैठ गये और भगवानकी देशना पानकी अभिलाषा कर रहे थे।

भगवान नेमिनाथ प्रभुने भी उस आइ हुइ परिषदाको धर्म देशना देना प्रारंभ किया कि हे भव्य जीवों ! इस अपार संसारके अन्दर परिभ्रमण करते हुये जीव नरक, निगोद, पृथ्वी अप, तेउ, वायु, वनस्पति और त्रसकायमें अनन्त जन्म-मरण किया है और करते भी हैं। इस दुःखोंसे विमुक्त करनेमें ईश्वर समकितदर्शन है उन्हीको धारण कर आगे चारित्रराजका सेवन करो ताके संसारसमुद्रसे जलदी पार करे। हे भव्यात्मा, इस ससारसे पार होनेके लिये दो नौका है (१) एक साधुधर्म (सर्वव्रत) (२) श्रावक धर्म (देशव्रत) दोनोंको सम्यक् प्रकारसे जाणके जैसी अपनी शक्ति हो उसे स्वीकार कर इसमें पुरुषार्थ कर प्रतिदिन उच्च श्रेणीपर अपना जीवन लगा देंगे तो तमाम दुःखोंका अन्त होनेमें किसी प्रकारकी देर नहीं है इत्यादि विस्तारपूर्वक धर्मदेशनाके अन्तमें भगवानने फरमाया कि विषय-कषाय राग-द्वेष यह संसारवृद्धि करता है। इन्हीको प्रथम त्यागो और दान शील, तप, भाव, भावना आदिको स्वीकार करो. सबका सार यह है कि जीतना नियम व्रत लेते हो उन्हींको अच्छी तरहसे पालन कर आराधीपदको प्राप्त करो ताके शिघ्र शिवसुन्दरी

पहुंच जावें। कृष्णादि परिषदा अमृतमय देशना श्रवण कर प्रसन्न होंके भगवानको वन्दन-नमस्कार कर स्वस्थान गमन करती हुई।

गौतमकुमार भगवानकी देशना श्रवण करते ही हृदयकमलमें संसारकि असारता भासमान हो गइ। और विचार करने लगा कि यह सुख मैंने मान रखा है परन्तु ये तो अनन्त दुःखोंका एक बीज है इस विनश्वर सुखोंके लिये अमूल्य मनुष्यभवको खो देना मुझे उचित नहीं है। एसा विचारके भगवानको वन्दन नमस्कार कर बोला कि हे त्रैलोक्य पूजनीय प्रभु! आपका दर्शनकि मुझे श्रद्धा प्रतित हुई और मेरे रोमरोममें रुच गयें है मेरी हाड-हाडकी मींजी धर्मरंगसे रंगाइ गइ है आप फरमाते है एसाही इस संसारका स्वरुप है। हे दयालु! आप मेरेपर अच्छी कृपा करी है मैं आपके चरणकमलमें दीक्षा लेना चाहता हुं परन्तु मेरे माता-पिताको पुछके मैं पीछा आता हुं। भगवानने फरमाया कि "जहासुखम्" गौतमकुमार भगवानको वन्दन कर अपने घर पर आया और माताजीसे कहता हुवा कि हे माताजी! मैं आज भगवानका दर्शन कर देशना सुनी है जिस्से संसारका स्वरुप जानके मैं भय भ्रान्त हुवा हुं अगर आप आज्ञा देवे तो मैं भगवानके पास दीक्षा ले मेरा आत्माका कल्याण करुं। माता यह वचन पुत्रका सुनते ही मूर्छित हो धरतीपर गीर पडी दासीयोने शीतल पानी और वायुका उपचार कर सचेतन करी। माता करुणापात होके पुत्र प्रति कहने लगी। कि हे जाया! तुं मारे एक ही पुत्र है और मेरा जीवनही तेरे आधारपर है और तुं जो दीक्षा लेनेकी बात करता है यह मेरेको श्रवण करनाही कानोंको वज्र तुल्य दुःखदाता है। बस,। आज तुमने यह बात करी है परन्तु आइंदासे एसी बातें

सुनना मनमे भि नही चाहती है। जहांतक तुमारे मातापिता जीवे वहांतक संसारका सुख भोगवो। जब तुमारे मातापिता कालधर्म प्राप्त हो जाय बाद में तुमारे पुत्रादिकि वृद्धि होनेपर तुमारी इच्छा हो तो खुशीसे दीक्षा लेना।

माताका यह वचन सुन गौतमकुमार बोला कि हे माता' एसा मातापिता पुत्रका भव तो जीव अनन्तीवार कीया है इन्होंमे कुछ भी कल्यान नही है और मुझे यह भी विश्वास नही है कि मैं पहेला जाउंगा कि मातापिता पहिले जायेगा अर्थात् कालका विश्वास समय मात्रका भी नही है वास्ते आप आज्ञा दो तो मैं भगवानके पास दीक्षा ले मेरा कल्यान करुं।

माता बोली हे लालजी' तुमारे बाप दादादि पूर्वजोंके संग्रह कीया हुवा द्रव्य है इन्होको भोगविलासके काममें लो और देवांगना जेसी आठ राजकन्या तुमको परणाइ है इन्होंके साथ कामभोग भोगवो फीर यावत् कुलवृद्धि होनेसे दीक्षा लेना।

कुमार बोला कि हे माता! मैं यह नही जानता हुं कि यह द्रव्य और स्त्रियों पहले जायगी कि मैं पहला जाउंगा। कारण यह धन जोबन स्त्रियादि सर्व अस्थिर है और मैं तो थीरवास करना चाहता हुं वास्ते आज्ञा दो दीक्षा लेउंगा।

माता निराश हो गइ परन्तु मोहनीकर्म जगतमें जबरदस्त है माता बोली कि हे लालजी! आप मुझे तो छोड जावोगा परन्तु पेहला सुब दीर्घदृष्टीसे विचार करीये यह निग्रन्थके प्रवचन धर्म हो है कि इन्होंका आराधन करनेवालोंको जन्मजरा मृत्यु आदिसे मुक्कर अक्षय स्थानको प्राप्त करा देता है परन्तु याद रखो संजम खांडाकी धारपर चलना है, वेलुका कवलीया जेसा असार है मयणके दान्तोंसे लोहाका चीना चावना है नदीके सामे पुर चलना

समुद्रक भुजासे तीरना है हे वत्स साधु होनेके बाद शिरका लोच करना होगा। पैदल विहार करना होगा, जावजीव स्नान नही होगा घरघरसे भिक्षा मांगनी पडेगी कभी न मीलनेपर संतोष रखना पडेगा। लोगोंका दुर्वचन भी सहन करना पडेगा आधाकर्मी उद्देशी आदि दोष रहीत आहार लेना होगा इत्यादि बावीस परिसह तीन उपसर्ग आदिका विवरण कर माताने खुब समझाया और कहा कि अगर तुमको धर्मकरणी करना हो तो घरमें रहके करलो संयम पालना बडाही कठिन काम है।

पुत्रने कहा हे माता! आपका कहना सत्य है संयम पालना बडाही दुष्कर है परन्तु वह कीसके लिये? हे जननी! यह संयम कायरोंके लिये दुष्कर है जो इन्ही लोगके पुद्गलीक सुखोंका अभिलाषी है। परन्तु हे माता! मैं तेरा पुत्र हु मुझे संजम पालना किंचित् भी दुष्कर नहीं है कारण मैं नरक निगोदमें अनन्त दुःख सहन कीया है।

इतना वचन पुत्रका सुन माता समज गई कि अब यह पुत्र घरमें रहनेवाला नही है। तब माताने दीक्षाका बडा भारी महोत्सव कीया जैसेकि थावञापुत्र कुमारका दीक्षा महोत्सव कृष्ण-महाराजने कीया था (ज्ञातासूत्र अध्य० ५ वे) इसी माफीक कृष्णवासुदेव महोत्सव कर गौतमकुमारको श्री नेमिनाथ भगवान पासे दीक्षा दराई। विस्तार देखो ज्ञातासे।

श्री नेमिनाथ प्रभु गौतमकुमारको दीक्षा देके हितशिक्षा दी कि हे भव्य! अब तुम दीक्षित हुवे हो तो यत्नासे हलनचलन आदि क्रिया करना ज्ञान ध्यानके सिवाय एक समय मात्र भी प्रमाद नही करना।

गौतममुनिने भगवानका वचन सम्मान स्वीकार कर स्वल्प

समयमें स्थियरोंकी भक्ति कर इग्यारा अंगका ज्ञान कण्ठस्थ कर लिया। बादमें श्री नेमिनाथप्रभु द्वारकानगरीसे विहार कर अन्य जनपद देशमें विहार करते हुये।

गौतम नामका मुनि चोथ छठ अठमादि तपश्चर्या करता हुवा एक दिन भगवान् नेमिनाथको वन्दन नमस्कार कर अर्ज की कि हे भगवान्! आपकी आज्ञा हो तो मैं "मासीक भिखु प्रतिमा"[1] नामका तप करुं, भगवानने कहा "जहासुखम्" एवं दो मासीक तीन मासीक यावत् बारहवी एकरात्रीक भिखुप्रतिमा नामका तप गौतममुनिने कीया और भी मुनिकी भावना बढ जानेसे वन्दन नमस्कार कर भगवानसे अर्ज करी कि हे दयालु! आपकी आज्ञा हो तो मैं गुणरत्न समत्सर नामका तप करुं। "जहासुखं" जब गौतममुनि गुणरत्न समत्सर तप करना प्रारंभ कीया। पहेले मासमें एकान्तर पारणा, दुसरे मासमें छठ छठ पारणा, तीसरे मासमें अठम अठम पारणा एवं यावत् सोलमे मासमें सोलार उपवासका पारणा एवं सोला मास तक तपश्चर्या कर शरीरको बीलकुल कृष अर्थात् सूका हुवा सर्पका शरीर माफीक हलते चलते समय शरीरकी हड्डीका अवाज जेसे काष्टके गाडाकी माफीक तथा सूके हुये पत्तोंकी माफीक शब्द हो रहा था।

एक समय गौतम मुनि रात्रीमें धर्मचिंतवन कर रहा था उसी समय विचारा कि अब इस शरीरके पुद्गल बिलकुल कमजोर हो गये हैं हलते चलते बोलते समय मुझे तकलीफ हो रही है तो मृत्युके सामने वेमरीया कर मुझे तैयार हो जाना चाहिये अर्थात् अनशन करना ही उचित है। बस, सूर्योदय होते ही

[1] भिखुकी बारह प्रतिमाका विस्तारपूर्वक विवरण दशाश्रुत स्कन्ध सूत्रमें है वह देखो शीघ्रबोध भाग चोथा।

भगवानसे अर्ज करी कि मैं श्रीशत्रुंजय तीर्थ (पर्वत) पर जाके अनशन करूं। भगवानने कहा "जहासुखम्" बस, गौतममुनि स्वयं साधुसाध्वीयोंको खमाके धीरे धीरे शत्रुंजय तीर्थ पर स्थिवरोंके साथ जाके आलोचना कर सब बारह वर्षकी दीक्षा पालके अनशन कर दीया. आत्मसमाधिमें एक मासका अनशन पूर्ण कर अन्त समय केवल ज्ञान प्राप्त कर शत्रुओंका जय करनेवाले शत्रुंजय तीर्थ पर अष्ट कर्मोसे मुक्त हो शाश्वता अव्याबाध सुखोंके अन्दर सादि अनन्त भांगे सिद्ध हो गये। इति प्रथम अध्ययन।

इसी माफीक शेष नव अध्ययन भी समझना यहां पर नाम मात्र ही लिखते है। समुद्रकुमार १ सागरकुमार २ गंभिरकुमार ३ स्तिमितकुमार ४ अचलकुमार ५ कपिलकुमार ६ अक्षोभकुमार ७ प्रश्नकुमार ८ विष्णुकुमार ९, एवं यह दश ही कुमार अन्धक विष्णु राजा और धारणी राणीका पुत्र है। आठ आठ अन्तेवर और राज त्याग कर श्रीनेमिनाथ प्रभु पासे दीक्षा ग्रहण करी थी तपश्चर्या कर एक मासका अनशन कर श्रीशत्रुंजय तीर्थ पर कर्मशत्रुओंको हटाके अन्तमें केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष गये थे इति प्रथम वर्ग समाप्तम्।

—※—

(२) दुसरा वर्ग जिसके आठ अध्ययन है।

अक्षोभकुमर १ सागरकुमर २ समुद्रकुमर ३ हेमवन्तकुमर ४ अचलकुमर ५ पूरणकुमर ६ धरणकुमर ७ और अभिचन्द्रकुमर ८ यह आठ कुमारोंके आठ अध्ययन "गौतम" अध्ययनकी माफीक विष्णु पिता धारणी माता आठ आठ अन्तेवर त्यागके श्रीनेमिनाथ भगवान समीपे दीक्षा ग्रहण गुणरत्नादि अनेक प्रकारके तप

कर कुल सोला वर्ष दीक्षा पालके अन्तिम श्रीशत्रुंजय तीर्थपर एक मासका अनशन कर अन्तमें केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्षमें पधार गये इति द्वितीयवर्गके आठ अध्ययन समाप्त।

—※※—

(३) तीसरा वर्गके तेरह अध्ययन है।

(प्रथमाध्ययन)

भूमिके भूषणरुप भद्रलपुर नामका नगर था। उस नगरके इशान कोणमें श्रीवन नामका उद्यान था और जयशत्रु नामका राजा राज कर रहा था वर्णन पूर्वकी माफीक समझना। उसी भद्रलपुर नगरके अन्दर नाग नामका गाथापति निवास करता था वह बडाही धनाढ्य और प्रतिष्ठित था जिन्होंके गृहशृंगाररुप सुलसा नामकी भार्या थी वह सुकोमल और स्वरुपवान थी। पतिकी आज्ञा प्रतिपालक थी। नागगाथापति और सुलसाके अंगसे एक पुत्र जनमा था जिसका नाम " अनयगश " दीया था वह पुत्र पांच धातृ जेसे कि (१) दुध पीलानेवाली (२) मज्जन करानेवाली (३) मंडन काजलकी टीकी वस्त्राभूषण धारण करानेवाली (४) क्रीडा करानेवाली (५) अंक-एक दुसरेके पास लेजानेवाली इन्हीं पांचो धातृ मातासे सुखपुर्वक वृद्धि जेसे गिरिकंदरकी लताओं वृद्धिको प्राप्ति होती है एसे आठ वर्ष निर्गमन होनेके बाद उसी कुमरको कलाचार्यके वहां विद्याभ्यासके लीये भेजा आठ वर्ष विद्याभ्यास करते हुवे ७२ कलामें प्रवीण हो गये नागगाथापतिने भी कलाचार्यको बहुल द्रव्य दीया जब कुमर १६ वर्षकी अवस्था अर्थात् युवक वय प्राप्त हुवा तब मातापिताने बत्तीस

इभ सेठोंकी ३२ वर तरुण जोबन लावण्य गुणवंता युक्त एव सर्व कुमरके सदृश देखके एकही दिनमें ३२ वर कन्याओंके साथमें कुमरका पाणिग्रहण (विवाह) कर दीया उसी बत्तीस कन्या ओंके पिताओंने नागसेठको १८२ बोलोंका ऐसे कि बत्तीस क्रोड सोनइयाका. बत्तीस क्रोड रुपइया, बत्तीस हस्ती, बत्तीस अश्व, रथ दास दासीयों दीपक सेज गोकुल आदि बहुतसा द्रव्य दीया नागसेठके बहुओं पगे लागी उसमें वह सर्व द्रव्य बहुओंको दे दीया नागसेठने बत्तीस बहुवोंके लीये बत्तीस प्रासाद और बीचमें कुमरके लीये बडा मनोहर महेल बना दीया जिन्होंके अन्दर बत्तीस सुरसुन्दरीयोंके साथ मनुष्य सम्बन्धी पंचेन्द्रियके भोग सुखपुर्वक भोगवने लगे ।

बत्तीस प्रकारके नाटक हो रहे थे मर्दंगके शिर फुट रहे थे जिन्होंके काल जानेकि मालम तक कुमरको नही पडती थी यह सब पुर्व किये हुवे सुकृतके फल है ।

पृथ्वी मंडलको पवित्र करते हुवे बावीसवा तीर्थंकर श्री नेमिनाथ भगवान सपरिवार-भद्दलपुर नगरके श्रीवनोद्यानमें पधारे । राजा च्यार प्रकारकी सैनासे तथा नगर निवासी बडे हीः आडम्बरके साथ भगवानको वन्दन करनेको जा रहे थे । उस समय अनयशाकुमर देखके गौतमकुमर कि माफीक भगवानको वन्दन करनेको गया भगवान की देशना सुन बत्तीस अन्तेवर और धनधान्य को त्यागके प्रभु पासे दीक्षा ग्रहन करके सामायिकादि चौदे पूर्व ज्ञानाभ्यास कीया । बहुत प्रकारकि तपस्यों कर सर्व वीस वर्ष कि दीक्षापालनकर अन्तमें श्री शत्रुंजय तीर्थपर एक मासका अनसनकर अन्तिम केवलज्ञान शाश्वते सिद्धपदको प्राप्त कीया इति प्रथमाध्ययन ।

इसी माफीक अनंतसेन (१) अनाहितसेन (२) अजितसेन (३) देवयश (४) शत्रुसेन (५) यह छेयों नागसेठ सुलसा शेठाणीके पुत्र है बत्तीस बत्तीस रंभाओंको त्याग नेमिनाथ प्रभु पासें दीक्षा ले चौदा पूर्व अध्ययनकर सर्व वीस वर्ष दीक्षा व्रत पाल अन्तिम सिद्धाचलपर एकेक मासका अनसनकर चरम समय केवलज्ञान प्राप्तकर मोक्ष गया इति छे अध्ययन।

सातवा अध्ययन—द्वारका नगरीमें वसुदेव राजा के धारणी राणी सिंह स्वप्न सूचित—सारण नामका कुमरका जन्म पूर्ववत् ७२ कलाप्रविण ५० राजकन्यायोंका पाणीग्रहण पचास पचास बोलोंका दत्त भोगविलासमें मग्न था। नेमिनाथप्रभु कि देशना सुन दीक्षा ले चौदा पूर्वका ज्ञान। वीस वर्ष दीक्षापालके अन्तिम श्री सिद्धाचलजी पर एक मासका अनसन अन्तमें केवलज्ञान प्राप्तीकर मोक्ष गये। इति सप्तमाध्ययन समाप्त।

आठवाध्ययन—द्वारका नगरीके नन्दनवनोद्यानमें श्री नेमिनाथ भगवान समोसरते हुवे। उस समय भगवानके छे मुनि सगे भाइ सदृश्यवचा वय यद्देही रूपवन्त नलकुबेर (वैश्रमणदेव) सदृश जिस समय भगवान पासे दीक्षा ली थी उसी दिन अभिग्रह किया था कि यावत्जीव छठ तप-पारणा करना। जब उन्हों छयों मुनियोंकि छठका पारणा आया तब भगवानकि आज्ञा ले दो दो साधुओंके तीन संघाडे हो के द्वारका नगरीका सहस्र वनोद्यानसे निकल द्वारका नगरीमें समुदाणी भिक्षा करते हुवे प्रथम दो साधुवोंका सिंघाडा वसुदेव राजा कि देवकी नाम कि राणीका मकानपर आये। मुनियोंको आते हुवे देख के देवकी राणी अपने आसन से उठके सात आठ पग सामने गइ और भक्तिपूर्वक वन्दन नमस्कार कर जहाँ भात-पा-

णीका घर था यहां मुनिको ले गइ यहां पर सिंह केसरिया मोदक उज्वल भावनासे दान दीया बादमें नम्रतापूर्वक विदा कर दीये। इतनेमें दुसरे सिंघाडे भि समुदाणी भिक्षा करते हुवे देवकीराणीके मकान पर आ पहुंचे उन्होंको भी पूर्वके माफीक उज्वल भावनासे सिंह केसरिये मोदकका दान दे विसर्जन किया। इतनेमें तीसरे सिंघाडेवाले मुनि भि समुदाणी भिक्षा करते देवकीराणीके मकानपर आ पहुंचे। देवकीराणीने पुर्वकी माफीक उज्वल भावनासे सिंह केसरिये मोदकोंका दान दीया। मुनिवर जाने लगे . उस समय देवकीराणी नम्रतापूर्वक मुनियोंसे अर्ज करने लगी कि हे स्वामिनाथ! यह कृष्ण वसुदेवकी द्वारकानगरी जो बारह योजनकि लम्बी नव योजनकि चोडी यावत् प्रत्यक्ष देवलोक सदश जिन्होंकि अन्दर बडे बडे लोक निवास करते हैं परन्तु आश्चर्य यह है कि क्या श्रमण निग्रन्थोंको अटन करने पर भि भिक्षा नहीं मिलती है कि वह वार वार एक ही कुल (घर) के अन्दर भिक्षाके लिये प्रवेश करते हैं?* मुनियोंने उत्तर दिया कि हे देवकीराणी! एसा नहीं है कि द्वारकानगरीमें साधुवोंको आहारपाणी न मीले परन्तु हे श्राविका तुं ध्यान दे के सुन भद्रलपुर नगरका नागसेठ और सुलसाभार्याके हम छ पुत्र थे हमारे माता-पिताने हम छवों भाइयोंको बत्तीस बत्तीस इभ्य सेठोंकि पुत्रीयों हमको परणाइथी दानके अन्दर १९२ बोलोंने अगनित द्रव्य आया था हम लोग संसारके सुखोंमें इतने तो मस्त बन गये थे कि जो काल जाता था उन्होंका हमलोगोंको ख्याल भी नहीं था। एक समय जादवकुल श्रृंगार बावीसमा तिर्थंकर नेमिनाथ

---

* मुनियोंने [illegible] जान लिया कि इसके दिल [illegible] है [illegible] अन्दर-वाली [illegible] हो [illegible] है तो [illegible] इन्होंने शंका की है [illegible]।

भगवान यहांपर पधारे थे उन्होंकि देशना सुन हम छवों भाइ संसारके सुखोंको दुःखोंकि खान समझके भगवानके पासमें दीक्षा ले अभिग्रह कर लिया कि यावत् जीव छठ छठ पारण करना । हे देवकी! आज हम छवों मुनिराज छठके पारणे भगवानकि आज्ञा ले द्वारका नगरीके अन्दर समुदाणी भिक्षा करनेको आये थे हे याइ! जो पहले दोय सिंघाडे जो तुमारे यहां आगये थे वह अलग है और हम अलग है अर्थात् हम दोय तीनवार तुमारे वर नहीं आये है । हम एक ही वार आये है एसा कहके मुनि तो यहांसे चलके उद्यानमें आ गये ।

बाद में देवकीराणीको एसे अध्यवसाय उत्पन्न हुवे कि पोलासपुर नगरमें अमंता नामके अनगारने मुझे कहा था कि हे देवकी! तुं आठ पुत्रोंको जनम देगी वह पुत्र अच्छे सुन्दर स्वरूपवाले जेसे कि नल-कुबेर देवता सदृश होगा, दुसरी कोइ माता इस भरतक्षेत्रमें नहीं है । जोंकि तेरे जेसे स्वरूपवान पुत्रको प्राप्त करे । यह मुनिका वचन आज मिथ्या (असत्य) मालुम होता है क्यों कि यह मेरे सन्मुख ही ६ पुत्र देवनेमें आते है कि जो अभी मुनि आये थे । और मेरे तो एक श्रीकृष्ण ही है देवकीने यह भी विचार कीया कि मुनियोंके वचन भी तो असत्य नहीं होते है । देवकी राणीने अपनी शंका निवृत्तन करनेको भगवान नेमिनाथजीके पास जानेका इरादा कीया । तब आज्ञाकारी पुरुषोंको बुलवायके आज्ञा करी कि च्यार अश्ववाला धार्मीक रथ मेरे लीये तैयार करो । आप स्नान मज्जन कर दासीयों नोकर चाकरोंके वृन्दसे बडेही आडम्बरके साथ भगवानको वन्दन करनेको गइ विधिपूर्वक वन्दन करनेके बादमें भगवान फरमाते हुवे कि हे देवकी ! तुं छे मुनियोंको देखके

अमन्ता मुनिके वचनमें असत्यकी शंका कर मेरे पास पुछनेको आइ है। क्या यह बात सत्य है ? हाँ भगवान यह बात सत्य है में आपसे पुछनेको ही आइ हुं।

भगवान नेमिनाथ फरमाते है कि हे देवकी ! तुं ध्यान देके सुन। इसी भरतक्षेत्रमें भद्दलपुर नगरके अन्दर नागसेठ और सुलसा भार्या निवास करते थे। सुलसाको बालपणेमें एक निमत्तीयेने कहा था कि तुं मृत्यु बालकको जनम देवेगी उस दिनसे सुलसाने हिरणगमेसी देवकी एक मूर्ति बनाके प्रतिदिन पुजा कर पुष्प चढाके भक्ति करने लगी। एसा नियम कर लीया कि देव की पुजा भक्ति विना किये आहार निहार आदि कुछ भी कार्य नही करना। एसी भक्तिसे देवकी आराधना करी। हिरणगमेसी देव सुलसाकी अति भक्तिसे संतुष्ट हुवा। हे देवकी ! तुमारे और सुलसाके सायही में गर्भ रहता था और सायही में पुत्रका जन्म होता था उसी समय हिरणगमेषी देव सुलसाके मृत बालक तेरे पास रखके तेरा जीता हुवा बालकको सुलसाको सुप्रत कर देता था। वास्ते दरअसल यह छयों पुत्र सुलसाका नही किन्तु तुमारा ही है। एसे भगवानके वचन सुन देवकीको बडे ही हर्ष संतोष हुवा भगवानको वन्दन नमस्कार कर जहाँ पर छे मुनि था वहां पर आई उन्होंको वन्दन नमस्कार कर एक दृष्टिसे देखने लगी इतनेमें अपना स्नेह इतना तो उत्सुक हो गया कि देवकीके स्तनोंमें दुध बर्षने लगा और शरीरके रोम रोम वृद्धिको प्राप्त हो देह रोमांचित हो गइ। देवकी मुनिओंको वन्दन नमस्कार कर भगवानके पास आके भगवानको प्रदक्षिणापुर्वक वन्दन करके अपने रथ पर बेठके निज आवास पर आगइ।

देवकीराणी अपनि शय्याके अन्दर बेठीथी उन्ही समय

ऐसा अध्यवसाय उत्पन्न हुवाकि मैं नलकुबेर सदृश सातपुत्रोंको जन्म दीया परन्तु एकभी पुत्रको मेरे स्तनोंका दुध नही पीलाया लाडकोड नही कीया रमत नही रमाया खोलेमें-गोदमें नही हुलराया बच्चोंकि मधुर भाषा नही सुनी इत्यादि मैने कुच्छभी नही कीया, धन्यहे जगतमें वह माताकि जो अपने बालकोंको रमाते है खेलाते है यावत् मनुष्यभवको सफल करते है। मैं जगतमें अधन्या अपुन्या अभागी हु कि सात पुत्रोंमें एक श्रीकृष्णको देखती हु सो भी छे छे माससे पगवन्दन मुजरो करनेको आता है। इसी बात कि चितामे माता बेठीथी।

इतनेमें श्री कृष्ण आया और माताजी के चरणोंमें अपना शिर झुकाके नमस्कार किया; परन्तु देखकिनो चिंताग्रस्तथी। उन्होंको मालमही क्यों पडे। तब श्री कृष्ण बोलाकि हे माताजी अन्यदिनोंमें मैं आताहुं तब आप मुझे आशिर्वाद देते हैं मेरे शिरपर हाथ धरके बात पुछते हो और आज मैं आया जिन्की आपको मालमही नहीं है इसका क्या कारण है ?

देवकी माता बोली कि हे पुत्र ! भगवान नेमिनाथद्वारा मालुम हुइ है कि मैं सात पुत्र रत्नको जनम दिया है जिस्मे तु एकही दीखाई देताहै। छ पुत्रतो सुलसाके यहां वृद्धिहोके दीक्षा ले लिई। तुं भी छे छे माससे दीखाइ देता है वास्ते धन्य है वह माताओंको कि अपने पुत्रोंको बालवयमें लाड करे.

श्रीकृष्ण बोलाकि हे माताजी आप चिंता न करो। मेरे छोटा भाइहोगा ऐसा मैं प्रयत्न करुगा अर्थात् मेरे छोटाभाइ अवश्य होगा उसे आप खेलाइये (ऐसे मधुर वचनोंसे माताजीको संतोष देके श्री कृष्ण वहांसे चलके पौषदशालामें गया हरण गमेषी देवको अष्टम कर स्मरण करने लगा। हरणगमेषी देव आयके बोला हे

धर्मेच्छुओका! आपके लघु बन्धव होगा परन्तु बालभावसे मुक्त होके श्री नेमिनाथ भगवानके पास दीक्षा लेगा। दोय तीनवार एसा कहके देव निज स्थान चला गया। श्री कृष्ण पौषद पार माताजी पासे आके कह दीया कि मेरे लघु बन्धव होगा तदनंतर श्रीकृष्ण अपने स्थान पर चले गये।

देवकी राणीने एक समय अपने सुखसेजाके अन्दर सुती हुइ सिंहका स्वप्ना देखा। तदनुसार नव मास प्रतिपूर्ण साढा सात रात्री बीत जाने पर गजके तालुव, लाक्षारस, उदय होता सूर्यके माफीक पुत्रको जन्म दीया. सर्व कार्य पूर्ववत् कर कुमरका नाम "गजसुकुमाल" दे दीया। देवकी राणीने अपने मनके मनोरथोंको अच्छी तरह पूर्ण कर लीया। गजसुकुमाल ७२ कलामे प्रवीण हो गया. युवक अवस्था भी प्राप्त हो गइ।

द्वारका नगरीमें सोमल नामका ब्राह्मण जिसको सोमश्री नामकी भार्याके अंगसे सोमा नामकी पुत्री उत्पन्न हुइ थी वह सोमा कुमारावस्थाको धारण करती हुइ उत्कृष्ट रूप यौवन लावण्य चतुरता को अपने आधिन कर रखा था. एक समय सोमा स्नानमज्जन कर वस्त्राभूषण धारण कर बहुतसे दासीयोंके साथ राजमार्गमें क्रीडा कर रही थी।

उसवखत उद्यानमें श्रीनेमिनाथ भगवान पधारे। खबर होने पर नगरलोक वन्दनको जाने लगे। श्रीकृष्ण भी बडे ठाठसे हस्ती पर आरूढ हो गजसुकुमालको अपने गोदके अन्दर बैठाके भगवानको वन्दन करनेको जा रहा था।

रस्तेमें सोमा खेल रही थी उन्होंका रूप यौवन लावण्य देख विस्मय हो श्री कृष्णने नोकरोंसे पूछा कि यह कीसकी

लडकी है? आदमी बोले कि यह सोमल ब्राह्मणकी लडकी है कृष्णने कहा कि जावो इसको कुमारे अन्तेवरमें रख दो गजसुकुमालके साथ इसका लग्न कर दीया जावेगा। आज्ञाकारी पुरुषोंने सोमाके बापकी रजा ले सोमाको कुमारे अन्तेवरमें रख दी।

कृष्णवासुदेव गजसुकुमालादि भगवान समीप वन्दन नमस्कार कर योग्य स्थान पर बेठ गये। भगवानने धर्मदेशना दी. हे भव्य जीवों! यह संसार असार है जीव रागद्वेषके बीज बोके फीर नरक निगोदादीके दुःखरुपी फलोंका आस्वादन करते हैं "खीणमत्त सुखा बहुकाल दुःखा" क्षणमात्रके सुखोंके लीये दीर्घकालके दुःखोंको खरीद कर रहे हैं। जो जीव बालवायस्थामें धर्मकार्य साधन करते है वह रत्नोंके माफीक लाभ उठाते हैं जो जीव युवावस्थामें धर्मकार्य साधन करते है वह सुवर्णकी माफीक और जो वृद्धावस्थामें धर्म करते है वह रुपेकी माफीक लाभ उठाते हैं। परन्तु जो उम्मरभरमें धर्म नहीं करते हैं वह दालीद्र लेके परभव जाते है वह परम दुःखको भोगवते हैं। वास्ते हे भव्य! यथाशक्ति आत्मकल्याणमें प्रयत्न करो इत्यादि देशना श्रवण कर यथाशक्ति त्याग-प्रत्याख्यान कर परिषदा स्वस्थान गमन करती हुइ। गजसुकुमाल भगवानकी देशना सुन परम वैराग्यको धारण करता हुवा बोला कि हे भगवान्! आपका फरमाया सत्य है मैं मेरे मातपिताओंसे पुछके आपके पास दीक्षा लेउंगा? भगवानने कहा "जहासुखम्" गजसुकुमाल भगवानको वन्दन कर अपने घरपर आया मातासे आज्ञा मांगी यह बात श्रीकृष्णको मालुम हुइ कृष्णने कहा हे लघु बान्धव! तुम दीक्षा मत लो राज करो। गजसुकुमाल बोला कि यह राज, धन, संपदा सभी कारमी है और मैं अक्षय सुख चाहता हुं अनुकूल प्रतिकूल बहुतसे प्रश्न हुवे परन्तु जिसको आन्तरीक वैराग्य हो उसको कौन मोडा सके

सुसराजी शिरपर एक नवीन पेचाही वंधा रहा है। फीर स्मशानमें खेर नामका काष्ट जल रहाथा उन्हीका अंगार लाके वह अग्नि गजसुकुमालके शिरपर धर आप वहांसे चला गया। गजसुकुमालमुनिको अत्यन्त वेदना होनेपरभी सोमल ब्राह्मणपर लगारभी द्वेष नही कीया। यह सव अपने किये हुये कर्मोकाही फल समझके आनन्दके साथ करजाको चुका रहाथा। एसा शुभाध्यवसाय, उज्वल परिणाम, विशुद्ध लेश्या, होनेसे च्यार घातीयां कर्मोका क्षयकर केवलज्ञान प्राप्ती कर अन्तगड केवली हो अनन्ते अव्याबाध शास्वत सुखोमि जाय विराजमान होगये अर्थात गजसुकुमालमुनि दीक्षा ले एकही रात्रीमें मोक्ष पधार गये। नजीकमें रेहनेवाले देवतावोंने बडाही महोत्सव कीया पंचवर्णके पुष्पों आदि ५ द्रव्यकि वर्षा करी और वह गीत-गान करने लगे।

इधर सूर्योदय होतेही श्रीकृष्ण गज असवारीकर छत्र धराते चमर उडते हुये बहुतसे मनुष्योंके परिवारसे भगवानको वंदन करनेको जा रहाथा। रहस्तेमें एक वृद्ध पुरुष बडी तकलीफके साथ एकेक ईट रहस्तेसे उठाके निज घरमें रखते हुवेको देखा। कृष्णको उन्ही पुरुषकी अनुकम्पा आइ आप हस्तीपर रहा हुवा एक ईट लेके उन्ही वृद्ध पुरुषके घरमें रखदी एसा देखके सर्व लोकोंने एकेक ईट लेके घरमें रखनेसे वह सर्व ईटोकी रासी एकही साथमें घरमें रखी गई फीर श्री कृष्ण भगवानके पासे जाके वन्दन नमस्कार कर इधर उधर देखते गजसुकुमालमुनि देखनेमें नही आया तब भगवानसे पुच्छा कि हे भगवान मेरा छोटाभा गजसुकुमाल मुनि कहां है मैं उन्होंसे वन्दन करूं?

भगवानने कहाकि हे कृष्ण! गजसुकमालने अपना कार्य सिद्ध कर लिया। कृष्ण कहाकि केसे। भगवानने कहाकि गज-

सुकुमाल दीक्षा ले महाकाल स्मशानमें ध्यान धरा वहां एक पुरुष उनकी मुनिको सहायता अर्थात् शिरपर अग्नि रख देनेसे मोक्ष गया.

कृष्ण बोलाकि हे भगवान उन्हीं पुरुषने कैसे सहायता दी। भगवानने कहाकि हे कृष्ण! जैसे तुं मेरे प्रति वन्दनको आ रहा था रस्तेमें वृद्ध पुरुषको साहिता दे के सुखी कर दीया था इसी माफीक गजसुखमालको भी सुखी कर दीया है।

हे भगवान एसा कौन पुन्यहीन कालीचौदसका जन्मा हुवा है कि मेरा लघु बांधवको अकाल मृत्युधर्म प्राप्त कर दीया अब मैं उन्हीं पुरुषको देख सकु। भगवानने कहा हे कृष्ण तुं द्वारा-मतीमें प्रवेश करेगा उस समय वह पुरुष तेरे सामने आते ही भयभ्रांत होके धरतीपर पडके मृत्यु पावेगा उनको तुं समजना कि वह गजसुखमालमुनिको मोक्ष देनेवाला है। भगवानको वन्दनकर कृष्ण हस्तीपर आरूढ हो नगरीमें आते समय भाइकी चिंताके मारे राजरस्तेको छोडके दुसरे रस्ते जा रहाथा।

इधर सोमल ब्राह्मणने विचारा कि श्रीकृष्ण भगवानके पास गये है और भगवान तो सर्व जाने है मेरा नाम बतानेपर नजाने श्रीकृष्ण मुझे कौनसे कुमौतसे मारेगा तो मुझे यहांसे भाग जाना ठीक है वहभी राजरस्ता छोडके उन्ही रस्ते आया कि जहांसे श्रीकृष्ण जा रहाथा। श्रीकृष्णको देखते ही भयभ्रांत हो धरतीपर पडके मृत्यु धर्मके शरण हो गया श्रीकृष्णने जानलियाकि यह दुष्ट मेरे भाइको अकाल मृत्युका साहाय्य दीया है और श्रीकृष्णने उन्ही सोमलके शरीरको बहुत दुर्दशा कर अपने स्थानपर गमन करता हुवा। इति तीजा वर्गका अष्टम गजसुखमालमुनिका अध्ययन समाप्तम्।

नवमाध्ययन-द्वारका नगरी बलदेवराजा धारणी राणीके सिंह स्वप्न। सूचित सुमुह नामका कुमरका जन्म हुवा कलाप्रवीण पचास राजकन्यायोंके साथ कुमारका लग्न कर दीया दत्तदायजो पूर्व गौतमकि माफीक यावत भोगविलासोंमें मग्न हो रहाथा।

श्री नेमिनाथ भगवानका आगमन। धर्म देशना श्रवण कर सुमुह कुमार संसार त्याग दीक्षाव्रत ग्रहन कीया चौदा पूर्व ज्ञान वीस वरस दीक्षा व्रत एक मासका अनसन श्री शत्रुंजय तीर्थपर अन्तिम केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष गया। इसी माफीक दशवा ध्ययनमें दुमुहकुमार इग्यारवा ध्ययनमें कोवीदकुमार यह तीनों भाइ बलदेवराजा धारणी राणीके पुत्र दीक्षा लेके चौदाह पूर्व ज्ञान वीस वर्ष दीक्षा एक मास अनसन शत्रुंजय अन्तगड केवली हो मोक्ष गये। और बारहवा दारुककुमार तेरवा अनाधीठकुमार यह वासुदेवराजा धारणीराणीके पुत्र पचास अन्तेवर त्याग दीक्षा ले सुमुहकि माफीक श्री सिद्धाचल तीर्थपर अन्तगड केवली हो मोक्ष गया। इति तीजा वर्गके तेरवों अध्ययन तीजा वर्ग समाप्तम।

---

(४) चोथा वर्गका दश अध्ययन।

द्वारामती नगरी पूर्ववत वर्णन करने योग्य है। द्वारामतीमें वसुदेवराजा धारणी राणी सिंह स्वप्न सूचित जाली नामका कुमारका जन्म हुवा मोहत्सव पूर्ववत कन्यायोंके ५० पचास लग्न कर ५० अन्तेवरोंके साथ दत्तदायजो पूर्ववत

श्री नेमिनाथ भगवानकी देशनासुन दीक्षा लीनी द्वादशांग का ज्ञान सोलवर्ष दीक्षापाली शत्रुंजय तीर्थपर एक मासका अनसन अन्तिम केवलज्ञान प्राप्तकर मोक्ष गया इति। इसी माफीक

(२) मयालीकुमर (३) उवयायालीकुमर (४) पुरुषसेन (५) वारिसेन यह पांचो वासुदेव धारनीसुत (६) प्रद्युनकुमार परन्तु कृष्णराजा रूक्मिणी सुत (७) सम्बुकुमार परन्तु कृष्णराजा जंबुवन्ती राणीका पुत्र (८) अनिरुद्धकुमर परन्तु प्रद्युन पिता वेदरबी माता (९) सत्यनेमि (१०) द्रढनेमि परन्तु समुद्रविजय राजा सेवादेवीके पुत्र है। यह दशों राजकुमार पचास पचास अन्तेवर त्याग बावीशमा तीर्थंकर पासे दीक्षा द्वादशांगका ज्ञान सोले वर्ष दीक्षा शत्रुंजय तीर्थ पर एक मासका अनशन अन्तिम केवल ज्ञान प्राप्त कर मोक्ष गये इति चोथो वर्ग दश अध्ययन समाप्तं।

---

(५) पांचमा वर्गके दश अध्ययन.

द्वारिका नगरी कृष्णवासुदेव राजा राज कर रहा था यावत् पुर्वको माफक समझना। कृष्ण राजाके पद्मावती नामकी अग्र महिषी राणी थी। स्वरुप सुन्दराकार यावत् भोगविलास करती आनन्दमें रहेती थी।

श्रीनेमिनाथ भगवानका आगमन हुवा कृष्णादि बडे ही ठाठ से वन्दन करनेको गये पद्मावती राणी भी गइ। भगवानने धर्मदेशना फरमाइ। परिषदा श्रवण कर यथाशक्ति त्याग वैराग कर स्वस्वस्थाने गमन कीया, कृष्ण नरेश्वर भगवानको वन्दन नमस्कार कर अर्जकरी कि हे भगवान सर्व वस्तु नाशवान है तो यह प्रत्यक्ष देवलोक सदृश द्वारिका नगरीका विनाश मूल कोंन कारण से होगा?

भगवानने फरमाया है धराधिप द्वारिका नगरीका विनाश

साहिबीकाधाती आजीर उसी स्थानमें आउंगा। एसा आर्त-ध्यान कर रहा था।

एसा आर्तध्यान करता हुवा कृष्णको देखके भगवान बोले कि हे कृष्ण तुं आर्तध्यान मत कर तुम त्रीजी पृथ्वीमें उज्वल वेदना सहन कर अन्तर रहीत वहांसे नीकलके इसी जम्बुद्वीपके भरतक्षेत्रकी आवती उत्सर्पिणीमें पुंड नामका जिनपद देशमें सत्दहारा नगरीमें [1]बारहवा अमाम नामका तीर्थंकर होगा। वहां बहुत काल केवलपर्याय पाल मोक्षमें जावेगा।

कृष्ण नरेश्वर भगवानका यह वचन श्रवण कर अत्यंत हर्ष संतोषको प्राप्त हो खुशीका सिंहनाद कर हायदमें गर्जना करता हुवा विचार करा कि में आवती उत्सर्पिणीमें तीर्थंकर होउंगा तो बीचारी नरकवेदना कोनसी गीनतीमें है। सहर्ष भगवन्तको वन्दन नमस्कार कर अपने हस्ती पर आरूढ हो वहां से चलके अपने स्थान पर आया सिंहासन पर विराजमान हो आज्ञाकारी पुरुषोंको बुलवाके आदेश कीया कि तुम जावे। द्वारिका नगरीका दोय तीन चार तथा बहुतसा रस्ता पकत्र मीले वहां पर उद्घोषणा करो कि यह द्वारिका नगरी प्रत्यक्ष देवलोक सदृशी है यह मदिरा अग्नि और द्विपायनके प्रयोगसे विनाश होगा वास्ते जो राजा युवराजा सेठ इभ्यसेठ सेनापति सार्थवाहा आदि तथा देवी राणीयों कुमार कुमारीयों अगर भगवान नेमिनाथजी पासे दीक्षा ले उन्होंको कृष्ण महाराजकी आज्ञा है अगर पीछेसे घोर प्रकारकी सहायताकी अपेक्षा हो तो कृष्ण महाराज करेगा पीछेसे कुटुम्बका संरक्षण करना हो सो

---

१ [illegible] बारहवें [illegible] तीर्थंकर [illegible] है। समवायांगसूत्र।

कृष्ण महाराज करेगा - दीक्षाका महोत्सव भी बडा आडम्बर से कृष्ण महाराज करेगा। द्वारका विनाश होगा वास्ते दीक्षा जल्दी लो।

एसी पुकार कर मेरी आज्ञा मुझे सुप्रत करो। आज्ञाकारी कृष्ण महाराजका हुकमको सविनय शिर चडाके द्वारकामें उद्घोष कर आज्ञा सुप्रत कर दी।

इधर पद्मावती राणी भगवानकी देशना सुन हर्ष-संतोष होके बोली कि हे भगवान्! आपका वचनमें मुझे श्रद्धा प्रतित आइ श्रीकृष्णको पुछके मैं आपके पास दीक्षा लउंगा। भगवानने कहा "जहासुखं."

पद्मावती भगवानको वन्दन कर अपने स्थानपर आइ, अपने पति श्रीकृष्णको पुछा कि आपकी आज्ञा हो तो मैं भगवानकी पास दीक्षा ग्रहन करुं "जहासुखं" कृष्णमहाराजने पद्मावती राणी का दीक्षाका बडा भारी महोत्सव किया। हजार पुरुषसे उठाने योग्य सेवीकामें बैठाके बडा धमधोडाके साथ भगवानके पास जाके वन्दन कर श्रीकृष्ण बोलता हुवा कि हे भगवान! यह पद्मावती राणी मेरे बहुतही इष्ट यावत् परमवल्लभा थी परन्तु आपकी देशना सुन दीक्षा लेना चाहती हैं। हे भगवान! मैं यह शिष्य-णीरूपी भिक्षा देता हुं आप स्वीकार करावें।

पद्मावती राणी वस्त्राभूषण उतार शिरलोच कर भगवानके पास आके बोली हे भगवान्! इस संसारके अन्दर अलीता-पलीता लग रहा है आप मुझे दीक्षा दे मेरा कल्यान करे। तब भगवानने स्वयं पद्मावती राणीको दीक्षा दे यक्षणाजी साध्वीकी शिष्याणी बनाके सुप्रत कर दी फीर यक्षणाजीने पद्मावतीको दीक्षा-शिक्षा दी।

पद्मावती साध्वि इर्यासमिति यावत् गुप्त ब्रह्मचर्य पालती यक्षणार्जीके पास एकादशांग सूत्राभ्यास किया. फीर चोथ छठ अठमादि विस्तरण प्रकारसे तपस्या कर पूर्ण बीश वर्ष दीक्षा पाल एक मासका अनशन कर, अन्तिम केवलज्ञान प्राप्त कर, अपना आत्माके कार्यको सिद्ध कर मोक्षमें विराजमान हो गइ। इति प्रथमाध्ययन समाप्तं। इसी माफीक (२) गोरीराणी. (३) गंधारीराणी. (४) लक्षमणा. (५) सुसीमा. (६) जांबवती, (७) सत्यभामा (८) रूक्षमणी. यह आठों कृष्णमहाराजकी अग्रमहिषी पट्टराणीयों परमवल्लभ थी। वह नेमिनाथ भगवानके पास दीक्षा ले केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्षमें गई। (९) मुलश्री. (१०) मूलदत्ता, यह दोय जांबवतीका पुत्र सांबुकुमारकी राणीयां थी। कृष्णमहाराज दीक्षामहोत्सव कर परमेश्वरके पास दीक्षा दीराइ। पद्मावतीकी माफीक केवलज्ञान प्राप्त कर लिया। इति पंचमवर्गके दशाध्ययन समाप्तं। पंचमवर्ग समाप्तं।

(६) छट्ठा वर्गके सोलाध्ययन.

प्रथम अध्ययन—राजगृह नगरके बहार गुणशीला नामका उद्यान था वहांपर राजा श्रेणिक न्यायसंपन्न अनेक राजगुणोंसे संयुक्त था जिन्होंके चैलणा नामकी पटराणी थी। राजतंत्र चलानेमें बडा ही कुशल. शाम. दाम. भेद. दंडके ज्ञाता और बुद्धिनिधान एसा अभयकुमार नामका मंत्री था। उसी नगरमें बडा ही धनाढ्य और लोगोंमें प्रतिष्ठित एसा मकाइ नामका गाथापति निवास करता था।

उसी समय भगवान वीरप्रभु राजगृह नगरके गुणशील

चैत्यके अन्दर पधारे, राजा श्रेणिक, चेलणा राणी और नगरजन भगवानको वन्दन करनेको गये, यह वात माकाइ गाथापति श्रवण कर वह भी भगवानको वन्दन करनेको गये।

भगवानने उस आइ हुइ परिषदाको अमृतमय धर्मदेशना दी। श्रोतागण सुधारस पान कर यथाशक्ति त्याग-वैराग धारन कर स्वस्थान गमन किया। माकाइ गाथापति देशना सुन संसारको असार जान कर अपने जेष्टपुत्रको कुटुम्बभार सुप्रत कर भगवानके पास दीक्षा ग्रहन करी। माकाइमुनि इर्यासमिति यावत् गुप्त ब्रह्मचर्यको पालन करता हुवा तथारूपके स्थिवर भगवन्तोंकी भक्ति विनय कर एकादशांगका ज्ञानाभ्यास किया। वादमें वहूतसी तपश्चर्या करते हुये महामुनि गुणरत्न संवत्सर तप कर अपने शरीरको जर्जरित बना दीया। सर्व सोला वर्ष दीक्षा पालके अन्तिम विपुल (व्यवहारगिरि) गिरि पर्वतके उपर एक मासका अनशन कर केवलज्ञान प्राप्त कर शाश्वत सुखको प्राप्त हुये। इति प्रथम अध्ययन। इसी माफीक किकम नामका गाथापति भगवान समीपे दीक्षा ले व्यवहारगिरि तीर्थपर मोक्षप्राप्ति करी। इति दुसरा अध्ययन समाप्त।

तीसरा अध्ययन—राजगृह नगर, गुणशीला उद्यान, श्रेणिक राजा, चेलणा राणी वर्णन करने योग्य जेसे पूर्व कर आये है। उसी राजगृह नगरके अन्दर अर्जुन नामका माली रहता था जिन्होंके वन्धुमती नामकी भार्या अच्छे स्वरूपवन्ती थी। उसी नगरके बहार अर्जुन मालीका एक पुष्पाराम नामका बगेचा था वह पंच वर्णके पुष्पोंरूपी लक्ष्मीसे अच्छे सुशोभीत था। उसी बगेचाके अति दूर भी नहीं अति नजीक भी नहीं एक मोगरपाणी यक्षका यक्षायतन था। वह अर्जुन मालीके वापदादा परदादा

आदि वंशपरंपरा चीरकालसे उसी मोगरपाणी यक्षकी सेवाभक्ति करते आये थे और यक्ष भी उन्होंकी मनकामना पूर्ण करता था।

मोगरपाणी यक्षकी प्रतिमाने सहस्रपल लोहसे बना हुआ मुद्गल धारण कर रखा था। अर्जुनमाली बालपणेसे मोगरपाणी यक्षका परम भक्त था। उन्होंको मदंबके लिये ऐसा नियम था कि जब अपने घरसे प्रतिदिन बगीचेमें जाके पांच वर्णके पुष्प चुंटके एकत्र कर अपनी बन्धुमती भार्या के साथ पुष्प ले मोगरपाणी यक्षके देवालयमें जाके पुष्पों चढाके ढींचण नमाके परिणाम कर फीर राजगृहनगरके राजमार्गमें जा पुष्पोंका विक्रय कर अपनी आजीविका करता था।

राजगृह नगरके अन्दर छे गोठीले पुरुष वसते थे, वह अच्छे और खराब कार्यमें स्वेच्छासे वीहार करतेथे। एक समय राजगृह नगरमें महोत्सव था। वास्ते अर्जुनमाली अपने घरसे पुष्प भरनेकी छाबी ग्रहणकर पुष्प लानेको अपनी बन्धुमती भार्याको साथ ले बगेचामें गयेथे। वहांपर दम्पति पुष्पोंको चुंटके एकत्र कर रहेथे।

उसी समय वह छ गोठीले पुरुष क्रीडा करते हुवे मोगरपाणी यक्षके देवालयमें आये इधर अर्जुनमाली अपनी भार्याके साथ पुष्प ले के मोगरपाणी यक्षके मन्दिरके तर्फ आ रहेथे। जब छे गोठीले पुरुषोंने बन्धुमती मालणका मनोहर रूप देखके विचार किया कि अपने सब एकत्र हो इस अर्जुनमालीको निबिड बन्धनसे बान्ध कर इस बन्धुमती भार्याके साथ मनुष्य-संबन्धी भोग (मैथुन) भोगवे। ऐसा विचार कर छे वो गोठीले पुरुष उस मन्दिरके किवाडके अन्दरके कमाडोंके पीछे गुपचुप छिपकर बेठ गये।

इदरसे अर्जुनमाली और बन्धुमती भार्या दोनों पुष्प लेके मोगरपाणी यक्षके पासमें आये। पुष्पोंका ढेर कर (चढाके) अर्जुनमाली अपना शिर झुकाके यक्षको प्रणाम करता था इतनेमें तो पीच्छेसे वह छे गोटीले पुरुष आके अर्जुनमालीको पकड निबिड (घन) बन्धनमें बान्ध कर एक तर्फ डाल दीया और बन्धुमतीमालणके साथ वह लंपट भोग भोगवना। मैथुन कर्म सेवन करने लग गये) शरू कर दीया।

अर्जुनमाली उस अत्याचारको देखके विचार कीयाकि मैं बाल्यपणेसे इस मोगरपाणी यक्ष प्रतिमाकी सेवा-भक्ति करता हूं और आज मेरे उपर इतनी विपत्तपडने परभी मेरी साहिता नहीं करता है तो न जाणे मोगरपाणी यक्ष है या नहीं। मालम होता है कि केवल काष्टकी प्रतिमाही बेठा रखी है इसी माफीक देवपर अश्रद्धा करता हुवा निराश हो रहा था।

इदर मोगरपाणी यक्षने अर्जुनमालीका वह अध्यवसाय जानके आप (यक्ष) मालीके शरीरमें आके प्रवेश किया। बस! मालीके शरीरमें यक्षका प्रवेश होते ही वह बन्धन एकही साथमें तुट पडे और-जो सहस्र पलसे बना हुवा मुद्गल हाथमें लेके छे गोटीले पुरुष और सातवी अपनी भार्या उन्होंका चकचुर कर अकार्यका प्रत्यक्षमें फल देता हुवा परलोक पहुंचा दिया।

अर्जुन मालीको छे पुरुष और सातवी स्त्रीपर इतना तो द्वेष हो गया कि अपने शरीरमें यक्ष होनेसे सहस्रपलवाले मुद्गल द्वारा प्रतिदिन छे पुरुष और एक स्त्रीको मारनेसे ही किंचित् संतोष होता था अर्थात् प्रतिदिन सात जीवोंकी घात करता था। यह बात राजगृह नगरमें बहुतसे लोगों द्वारा सुनके राजा श्रेणिकने नगरमें उद्घोषणा करा दी कि कोइ भी मनुष्य तृण, काष्ट, पाणी

आदिके लिये नगरके बहार न जावे कारण वह अर्जुन मालो यक्ष द्रष्टसे सात जीवोंकी प्रतिदिन घात करता है वास्ते बहार जाने-वालोंके शरीरको और जीवको नुकशान होगा वास्ते कोइ भी बहार मत जावो।

राजगृह नगरके अन्दर सुदर्शन नामका श्रेष्टी बसता था। वह बडा ही धनाढ्य और श्रावक. जीवाजीवका अच्छा ज्ञाता था। अपना आत्माका कल्याणके करने बगत रहा था।

उसी समय भगवान वीरप्रभु अपने शिष्यरत्नोंके परिवारसे भूमंडलको पवित्र करते हुवे राजगृह नगरके गुणशीलोद्यानमें समवसरण किया।

अर्जुन मालीके भयके मारे बहुत लोग अपने स्थानपर ही भगवानको वन्दन कर आनन्दको प्राप्त हो गये। परन्तु सुदर्शन श्रेष्ठी यह बात सुनी कि आज भगवान बगेचेमें पधारे हैं। वन्दनको जानेके लिये मातापिताको पुछा तब मातापिताने उत्तर दीया कि हे लालजी! राजगृह नगरके बहार अर्जुनमाली सदैव सात जीवोंको मारता है। वास्ते वहां जानेमें तेरे शरीरको बादा होगा वास्ते सब लोगोंकी मापीक तुं भी यहां ही रह कर भगवानको वन्दन कर ले। वह भगवान सर्वज्ञ है तेरी वन्दना स्वीकार करेंगे। सुदर्शनश्रेष्टीने उत्तर दीया कि हे माता! आज पवित्र दिन है कि वीरप्रभु यहां पधारे हैं तो मैं यहां रहके वन्दन केसे करुं? आपकी आज्ञा होतो मैं तो वहां ही जायके भगवानका दर्शन कर वन्दन करुं। जब पुत्रका बहुत आग्रह देखा तब मातापिताने कहा कि जैसे तुमको सुख होवे वैसे करो।

सुदर्शनश्रेष्टी स्नानमज्जन कर शुद्ध वस्त्र पहेरके पैदल ही भगवानको वन्दन करनेको चला, जहां मोगरपाणी यक्षका मन्दिर

या यह आता था, इतनेमें अर्जुन माली सुदर्शनको देखके बड़ा भारी कुपित होकर हाथमें सहस्रपल लोहका मुद्गल लेके सुदर्शनको मारनेको आरहा था। श्रेष्ठीने मालीको आता हुवा देखके किंचित् मात्रभी भय क्षोभ नहीं करता हुवा वस्त्राचलसे भूमिकाको प्रतिलेखन कर दोनों कर शिरपे लगाके एक नमुत्थुणं सिद्धोंको और दुसरा भगवान वीरप्रभुको देके बोला कि मैं पहलेही भगवानसे व्रत लिये थे और आज भी भगवानकी साक्षीसे सर्वथा प्राणातिपात यावत मिथ्यादर्शन एवं अठारा पाप और च्यारों प्रकारके आहारका प्रत्याख्यान जावजीवके लीये करता हुं परन्तु इस उपसर्गसे बच जाउं तो यह सागारी संथारा पारना मुझे कल्पे है अगर इतनेमें काल करजाउं तो आवजीवका अनशन है एसा अभिग्रह धारण कर आत्मध्यानमें मग्न हो रहा था, शेठीजीने यह भी विचार किया था कि अज्ञानपणे विषयकषायके अन्दर अनन्तीवार मृत्यु हुवा है परन्तु एसा मृत्यु आगे कदी भी नहीं हुवा है और जितना आयुष्य है वह तो अवश्य भोगवना ही पडेगा वास्ते ज्ञानमें ही आत्मरमणता करना ठीक है।

अर्जुनमाली सुदर्शनाश्रेष्ठीके पास आया क्रोधसे पूर्ण प्रज्वलत हो के मुद्गलसे मारना बहुत चाहा परन्तु धर्मके प्रभाव हाथ तक भी उंचा नहीं हुवा मालीजीने शेठीजीके सामने आया इतने में जो मालीके शरीरमें मोगरपणि यक्ष था वह मुद्गल ले के वहां से विदा हो गये अर्थात् निज स्थानमें चला गया।

शरीरसे यक्ष चले जाने पर माली कमजोर हो के धरतीपर गीर पडा, इधर शेठीजीने निरूपसर्ग जानके अपनी प्रतिमा पालन कर अनसन पारा। इतनेमें अर्जुनमाली सचेत हो के बोला कि आप कोन है और कहां पर जाते है। शेठीजीने उत्तर दिया कि

मैं सुदर्शन शेट भगवान वीरप्रभुको वन्दन करनेको जाता हुं। माली बोला कि मुझे भी साथमें ले चलो। शेठजी बोला कि बहुत अच्छी बात है। दोनों भगवानके पास आके वन्दन नमस्कार कर योग्य स्थान बेठ गये। इतनेमें तो उपसर्गरहीत रस्ता ज्ञानके ओर भी परिषदा समोसरनमें एकत्र हो गइ। परन्तु सुदर्शनकी धर्मश्रद्धा कीतनी मजबुत थी। एसेको दृढधर्मी कहते हैं।

भगवान वीरप्रभुने उसी परिषदाको बडे ही विस्तारपूर्वक धर्मदेशना सुनाइ अन्तिम फरमाया कि हे भव्य जीवों! अनन्ते भवोंके किये हुवे दुष्कर्मोंसे छोडानेवाला संयम है इन्हीका आराधन करो यह तुमको एकही भवमें आरापार संसारसमुद्रसे पार कर अक्षय स्थान पर पहुंचा देगा।

सुदर्शनादि देशनापान कर स्वस्वस्थान पर गये। अर्जुन मालीने विचार कीया कि मैं पांच मास तेरह दिनोंमें ११४१ जीवोंकी घात करी है तो एसा घोर अत्याचारोंके पापसे निवृत्ति होनेका कोइ भी दुसरा रस्ता नहीं है। वास्ते मुझे उचित है कि भगवान वीरप्रभुके चरणकमलोमें दीक्षा ले आत्मकल्याण करुं। एसा विचारके भगवानके पास पांच महाव्रतरुपी दीक्षा धारण करी। अधिकता यह है कि जिस दिन दीक्षा ली थी उसी दीन अभिग्रह कर लीया कि मुझे जावजीव तक छठछठ तप पारणा करना। प्रथम ही छट कर लीया। जब छट तपका पारणा था उस रोज पेहले पहोरमें सज्झाय. दुसरे पहोरमें ध्यान, तीसरे पहोरमें मुहपत्ती आदि प्रतिलेखन कर वीरप्रभुकी आज्ञा ले राजगृह नगरके अन्दर समुदाणी भिक्षाके लिये अटन कर रहे थे।

अर्जुनमुनिको देखके बहुतसे पुरुष स्त्रीयों लडके युवक और

वृद्ध कहने लगे कि अहो। इस पापीने मेरे पिताको मारा था कोई कहते हैं कि मेरी माताको मारी थी। कोइ कहते है कि मेरे भाइ बहेन औरत पुत्र पुत्री और सगे-सम्बन्धीओंको मारा था इसीसे कोइ आक्रोश वचन तो कोइ हीलना पथरोंसे मारना तर्जना ताडना आदि दे रहे थे। परन्तु अर्जुन मुनिने लगार मात्र भी उन्हों पर द्वेष नहीं कीया मुनिने विचारा कि मैंने तो इन्होंके संबन्धीयोंके प्राणोंका नाश कीया है तो यह तो मेरेको गालीयुक्त ही दे रहे है। इत्यादि आत्मभावनासे अपने बन्धे हुवे कर्मोंको सम्यक् प्रकारसे सहन करता हुवा कर्मशत्रुओंका पराजय कर रहा था।

अर्जुन मुनिको आहार मीले तो पाणी न मीले, पाणी मीले तो आहार न मीले। तथापि मुनिश्री किंचित् भी दीनपणा नही लाता था यह आहारपाणी भगवानकी दीक्षाके अमूर्छितपणे कायाको भाडा देता था, जेसे सर्प बीलके अन्दर प्रवेश करता है इसी माफीक मुनि आहार करते थे। एसेही हमेशांके लीये छठ्ठ पारणा होता था।

एक समय भगवान राजगृह नगरसे विहार कर अन्य जनपद देशोंमें गमन करते हुवे। अर्जुनमुनि इस माफीक क्षमा सहीत घोर तपश्चर्या करते हुवे छ मास दीक्षा पाली जिसमें शरीर को पुर्णतया जर्जरित कर दीया जेसे खंदकमुनिकी माफीक।

अन्तिम आधा मास अर्थात् पन्दरा दीनका अनशन कर कर्मोसे विमुक्त हो अव्याबाध शाश्वत सुखोंमें विराजमान हो गये मोक्ष पधार गये इति।

चौथा अध्ययन—राजगृह नगर गुणशीलोद्यान श्रेणीक राजा चेलना राणी। उसी नगरमें कासव नामका गाथापति बडाही धनाढ्य वसता था। भगवान पधारे मकाईकी माफिक दीक्षा ले

एकादशांग ज्ञानाभ्यास सोला वर्षकी दीक्षा एक मासका अनशन पालके वैभार गिरि पर्वत पर अन्तसमय केवल ले मोक्ष गये। इति ४ एवं क्षेमनामा गाथापति परन्तु वह काकंदी नगरीका था ।५। एवं धृतहर गाथापति काकंदीका । ६ । एवं कैलास गाथापति परन्तु संकेत नगरका था और बारह वर्षकी दीक्षा । ७ । एवं हरिचन्द गाथापति । ८ । एवं वरतनामा गाथापति परन्तु वह राजगृह नगरका था । ९ । एवं सुदर्शन गाथापति परन्तु वाणीया ग्राम नगरका था वह पांच वर्षकी दीक्षा पाल मोक्ष गया । १० । एव पुर्णभद्रगाथा० । ११ । एवं सुमनभद्र परन्तु सावत्थी नगरीका बहुत वर्ष दीक्षा पाली थी । १२ । एवं सुप्रतिष्ट गाथापति सावत्थी नगरीका सत्तावीश वर्षकी दीक्षा पाल मोक्ष गया । १३ । मेघ गाथापति राजगृह नगरका था वह बहुत वर्ष दीक्षा पाल मोक्ष गया । १४ । यह सब विपुलगिरि-व्यवहारगिरि पर्वतपर मोक्ष गये हैं । इति ।

पन्दरवा अध्ययन—पोलासपुर नगर श्रीवनोद्यान विजय नामका राजा राज करता था, उस राजाके श्रीदेवी नामकी पट्टराणी थी। उस राणीको अतिमुक्त-अमंतो नामका कुमार था वह बडाही सुकुमाल और बाल्यावस्थासे ही बडा हौशीयार था—

भगवान वीरप्रभु पोलासपुरके श्री वनोद्यानमें पधारे । वीर-प्रभुका बडा शिष्य इन्द्रभूति-गौतमस्वामि छठके पारणे भगवा-नकी आज्ञासे पोलासपुर नगरमें समुदायी भिक्षाके लिये अटन कर रहेथा ।

उस समय अमंतो कुमार स्नान मज्जन कर सुन्दर वस्त्र भू-षण धारण कर बहुतसे लड़के ...

क्रीडा करनेको रास्तेमे आता हुवा गौतमस्वामिको देखके अमन्तों कुमर बोलाकि हे भगवान! आप कोनहो और कीस वास्ते इधर उधर फीरते हो? गौतमस्वामिने उत्तर दीयाकि हे कुमर हम इर्यासमिति यावत् ब्रह्मचर्य पालने वाले मुनि है और समुदाणी भिक्षाके लिये अटन कर रहे है। अमन्तोकुमार बोलाकि हे भगवान हमारे यहां पधारे हम आपको भिक्षा दीरावेंगे,, एसा कहके गौतमस्वामिकी अंगुली[1] पकडके अपने घरपर ले आये श्रीदेवीराणी गौतमस्वामिको आते हुये देखके हर्ष संतोषके साथ अपने आसनसे उठ सात आठ पग सन्मुख गई वन्दन नमस्कार कर भात्त पाणीके घरमे ले जायके च्यार प्रकारका आहारका सहर्ष दान दीया।

अमन्तोकुमर गौतमस्वामिसे अर्ज करी कि हे भगवान आप कहांपर विराजते हो! हे अमन्ता! इस नगरके बाहार श्रीवनोद्यानमे हमारे धर्माचार्य धर्मकी आदिके करनेवाले श्रमण भगवान वीरप्रभु विराजते है उन्होंके चरण कमलोंमें हम निवास करते है। अमन्ताकुमरबोलाकि हे भगवान! मैं आपके साथ चलके आपके भगवान वीर प्रभुका चरण वन्दन करू " जहा सुखं।" तब अमन्तों कुमर भगवान गौतमस्वामिके साथ होके श्रीवनोद्यानमे आके भगवान वीरप्रभुको वन्दन नमस्कार कर सेवा भक्ति करने लगा।

भगवान गौतमस्वामि लाया हुवा आहार भगवानको बताके पारणो कर तप संयममें रमनता करने लगा।

---

[1] दुर्बोध लोक कहते है कि एक हाथमे गौतमके झोलीथी दुसरे हाथकि अंगुल अमन्तेने पकडली तो फीर खुले मुहवानों केसे करी वास्ते मुहपत्ति बन्धनरोथी ' उन्ह एक हाथकि वुणीपर झोळी औरहाथमे मुहपत्तीसे यत्ना करीथी दुसरे हाथकी अंगुल अमन्ताने पकडीथी आजभी जैन मुनि ठीक तौरपर बोल सकते है।

सर्वज्ञ वीर प्रभु अमन्ताकुमारको धर्म देशना सुनाइ। अ-मन्तोकुमर बोलाकी हे करूणासिंधु आपकि देशना सुनने संसारसे भयभ्रांत हुवा मैं मेरे मातापिताकों पुच्छके आपके पास दीक्षा ले उंगा "जहा सुखं" प्रमाद मत करों। अमन्तोंकुमर भगवानको बन्दनकर अपने मातापिताके पास आया और बोलाकि हे माता आजमें वीरप्रभुकि देशना सुनके जन्ममरणके दुःखोंसे मुक्त होनेके लिये दीक्षा लेउंगा। येसीबातें सुनके दुसरोंकि मातावोंकों रंज हुवा करता था परन्तुयहां अमन्ताकुमार कि माताको विस्मय हुवा और बोली की हे वत्स! तुं दीक्षा और धर्मको क्या जानता है! कुमरजीने उत्तर दिया कि हे माता! मैं जानता हुं उसको तों नहीं जानता हुं और नहीं जानता हुं उसकों जानता हु। माता-ने कहा कि यह कैसा!

हे माता! यह मैं निश्चित जानता हुं कि जितने जीव जन्मे है वह अवश्य मृत्युको भी प्राप्त होते है परन्तु मैं यह नहीं जानता हुं कि किस समयमें किस क्षेत्रमें और किस प्रकारसे मृत्यु होगी। हे माता! मैं नहीं जानता हुं कि कोनसा जीव कीस कर्मो से नरक तीर्यंच मनुष्य और देवगतिमें जाता है. परन्तु यह बात मैं निश्चय जानता हुं कि अपने अपने किये हुवे शुभाशुभ कर्मोसे नारकी तीर्यंच मनुष्य और देवतोंमें जाते हैं। इस वास्ते हे माता! मैं जानता हुं वह नहीं जानता और नहीं जानता था जानता हुं। बस! इतनेमें माता समझ गइ कि अब यह मेरा पुत्र घरमें रहेनेवाला नहीं है। तथापि मोहप्रेरित बहुतसे अनुकुल-प्रतिकुल शब्दोंसे समझाया. परन्तु जिन्होंकों असली वस्तुका भान हो गया हो वह इस कारमी मायासे कभी लोभीत नही होना है अमन्ताकुमार कों तो शिवसुन्दरीसे इतना बडा प्रेम हो राहा था कि मैं कीतना जल्दी जाके मीलु।

माताजीने कहा कि हे पुत्र! अगर आप दीक्षा ही लेना चाहते हो तो एक दिनका राज कर मेरे मनोरथको पूर्ण करो। अमन्ताकुमर इस बातको सुनके मौन रहा। अब माता-पिताने बड़ा ही आडम्बर कर कुमरका राजअभिषेक कर बोले कि हे लालजी आप कि क्या इच्छा है आज्ञा करो। कुमरने कहा कि तीन लक्ष सोनइया लक्ष्मीके भंडारसे निकाल दो लक्षके रजोहरण पात्रा और एकलक्ष हजामको दे मेरे दीक्षा कि तैयारी कराओ। जैसे महाबलकुमरके दीक्षाका महोत्सव कीया इसी माफीक बडे ही महोत्सव पूर्वक भगवानके पास अमन्ताकुमरको भी दीक्षा दराइ। तथारूपके स्थिवरों के पास एकादशांगका ज्ञान कीया।* बहुतसे वर्ष दीक्षा पाली गुणरत्न समसरादि तप कर अन्तमें व्यवहार गिरिपर केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष गया ॥ १५ ॥

सोलवा अध्ययन-बनारसी नगरी काम बनोद्यान अलख नामका राजाथा, उस समय भगवान वीरप्रभुका आगमन हुवा, कोणकको माफीक अलखराजाभी वन्दन करने को गया। धर्म

* भगवतीसूत्र शतक ५ उ० ४ में लिखा है कि एक समय बडी बरसाद बर्षनेके बाद स्थिवरोंके साथमें अमन्ताबालऋषि स्थंडिले गया था स्थिवर दूर थे अमन्ताऋषि पीछे आते समय पाणीके अन्दर मट्टीकी पाल बान्ध भाजन पात्र तारी उसमें डाल तीरती हुइ देख बोलता है कि यह मेरी नइया (नौका) तिर रही है। इसे स्थिवरोंने देखा उसी समय स्थिवरोंको बड़ा ही विचार हुवा कि देखो यह बालऋषि क्या अनुचित कीया कर रहा है। वह एक समय भगवानके समीप आके पुच्छा कि हे भगवान! आपका शिष्य अमन्ता बालऋषि कितना भव कर मोक्ष जावेगा। भगवानने उत्तर दिया कि हे स्थिवरों अमन्ताऋषि कि हीलना मत करो वास्ते अमन्ताऋषि चरम शरीरी अर्थात् इसी भवमें मोक्ष जावेगा। वास्ते तुम सब मुनि बालऋषिकि व्यावच करो। इति।

देशना सुन अपने ज्येष्ठ पुत्रको राज देके उदाई राजाकी माफी-क दीक्षा ग्रहन करी एका दशांग अध्ययन कर विचत्र प्रकारकि तपश्चर्या करते हुवे बहुतसे वर्ष दीक्षा पाल अन्तमे विपुलगिरि (व्यवहारगिरि) पर केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष गये इति सोलवाध्ययन। इति छट्ठावर्ग समाप्त।

—※—

(७) सातवा वर्गके तेरह अध्ययन

राजग्रह नगर गुणशीलोद्यान श्रेणिकराजा चेलनाराणी अभयकुमारमंत्री भगवान वीरप्रभुका आगमन. राजा श्रेणककायन्दनको जाना यहसर्वाधिकार पूर्ववत् माफीक समझना। परन्तु श्रेणकराजा कि नन्दानामकि राणी भगवानकि धर्मदेशना श्रवण कर श्रेणिक-राजाकि आज्ञा लेके प्रभु पासे दीक्षा ग्रहनकर चन्दनबालाजीके समिप रहेतीहुइ एकादशांगका अध्ययन कर विचित्र प्रकारकी तपश्चर्या करती हुइ कर्मशत्रुवोंका पराजयकर केवलज्ञान पाके मोक्षगइ इति । १ । एवं (२) नन्दमती (३) नन्दोतरा (४) नन्दसेना (५) मरुता (६) सुमरूता (७) महामरूता (८) मरुदेवा (९) भद्रा (१०) सुभद्रा (११) सुजाता (१२) सुमा-णसा (१३) भुतादिन्ना यह तेरहा राणी या अपने पति श्रेणक-राजाकि आज्ञासे भगवान वीर प्रभुके पास दीक्षा लेके सर्वने इग्यारे अंगका ज्ञान पढा। बहुतसी तपस्याकर अन्तमे केवलज्ञान प्राप्तकर मोक्ष गइ है इति सातवा वर्ग समाप्तं।

—※—

(८) आठवा वर्गके दश अध्ययन है।

चम्पानगरी पुर्णभद्र उद्यान कोणक नामका राजा राज कर रहाथा। उसी चम्पानगरीमें श्रेणीक राजाकि राणी कोणक राजाकि लघुमाता 'कालीनामकि राणी निवास करतीथी.

भगवान वीरप्रभुका आगमन हुवा नन्दाराणीकि माफीक कालीराणी भी देशना सुन दीक्षा ग्रहन कर इग्यारे अंग ज्ञानाभ्यास कर चोथ छठ्ठादि विचित्र प्रकारसे तपश्चर्याकर अपनि आत्माको भावती हुइ वीचर रहीथी।

एक समय काली साध्विने आर्य चन्दन बाला साध्विको वन्दन कर अर्ज करी कि आपकी आज्ञा हो तो मैं रत्नावली तप प्रारंभ करु ? अहासुखम्।

आर्या चन्दन बालाजीकी आज्ञा होनेसे काली साध्वीने रत्नावली तप शरु किया। प्रथम एक उपवास किया पारणेके दिन "सव्वकामगुण" सर्व विगइ अर्थात् दुध दहीं घृत तैल मीठा इसे जेसे मीलि वेसाही आहारसे पारणो कर सके। सब पारणेमें एसी विधि समझना। फिर दोय उपवास कर पारणो करे। फिर तीन उपवास कर पारणो करे बादमें आठ छठ। बेला करे पारणो कर, उपवास करे, पारणो कर, छट करे, पारणो कर अठम करे, पारणो कर च्यारोपास पारणो कर पांचोउपवास पारणो कर छ उपवास, पारणो कर सात उपवास, पारणो कर आठ उपवास, एवं नव दश इग्यारा बारह तेरह चौदा पन्दर सोला उपवास करे, पारणो कर लगता चोतीस छट करे, पारणो कर पीर

१ [illegible]

सोला उपवास करे. पारणो कर पन्द्रा उपवास करे. एवं चौदा तेरह बारह इग्यार दश नव आठ सात छे पांच चार तीन दोय और पारणो कर एक उपवास करे। बादमें आठ छठ करे पारणो कर तीन उपवास करे, पारणो कर छठ करे. और पारणो कर एक उपवास करे, यह प्रथम ओली हुइ अर्थात् इस तपके हारकी पहेली लड हुइ इनको एक वर्ष तीन मास और बावीस दिन लगते है जिसमें ३८४ दिन तपस्या और ८८ पारणा होता है पारणे चांथो विगइ सहीत भी कर सकते है। इसी माफीक दुसरी ओली (हारकीलड) करी थी परन्तु पारणा विगइ वर्ज करते थे। इसी माफीक तीसरी ओली परन्तु पारणा लेपालेप वर्ज करते थे। एवं चोथी ओली परन्तु पारणे आंबिल करते थे। यह तपरुपी हारकी च्यार लडको पांच वर्ष दोय मास अठावीस दिन हुवे जिसमें च्यार वर्ष तीन मास छे दिन तपस्याके और इग्यार मास बावीस दिन पारणेके एसे घोर तप करते हुवे काली साध्वीका शरीर सुके लुक्खे भुक्खे हो गया था चलते हुवे शरीरके हाड खडखड शब्दसे बाजने लग गया अर्थात् शरीर बीलकुल कृश बन गया तथापि आत्मशक्ति बहुत ही प्रकाशमान थी। पुर्वोक्तिरीती अन्तमें अन्तिम एक मासका अन-शन कर केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष गइ इति।

इसी माफीक दुसरा अध्ययन सुकालीसाध्वीका है परन्तु रत्नावली तपके स्थान कनकावली तप कीया था रत्नावली और कनकावली तपमें इतना विशेष है कि रत्नावलीतपके दोय स्थान पर आठ आठ छठ एक स्थानपर चौतीस छठ किया था यहां कनकावली तपमें अठम तप होता है जिस्से तपश्चर्या पांच वर्ष नव मास और अठारा दिन लगा है शेष कालीसाध्वीकी माफीक कर्म क्षय कर केवलज्ञान प्राप्त हो मोक्ष गइ।२।

इसी माफीक महाकालीराणी दीक्षा ले यावत् लघु सिंहकी चाली माफीक तप करा यथा--एक उपवास कर पारणा कीया फीर दोय उपवास कीया पारणा कर, एक उपवास पारणा कर तीन उपवास पारणा कर दोय उपवास, पारणोकर च्यार उपवास पारणो कर तीन उपवास, पारणो कर पांच उपवास, पारणो कर च्यार उपवास, पारणो कर छे उपवास, पारणो कर पांच उपवास, पारणो कर सप्त उपवास, पारणो कर छे उपवास, पारणो कर आठ उपवास करे, सात उपवास करे०, नव उप०, आठ उप०, नव उप०, सात उप०, आठ उप०, छे उप०, सात उप०, पांच उ०, छे उ०, च्यार उ०, पांच उ० तीन उ० च्यार उ०, दोय उ०, तीन उ०, एक उ०, दोय उ० एक उ०. एक ओलीको १८७ दिन लागे पूर्ववत् च्यार ओलीको दोय वर्ष अठावीश दिन लागे। यावत् सिद्ध हुई ॥ ३ ॥

इसी माफीक कृष्णाराणीका परन्तु उन्होंने महासिंह निकल तप जो लघुसिंह० यडने हुवे नव उपवास तक कहा है इसी माफीक १६ उपवास तक समझना एक ओलीको एक वर्ष छ मास अठारा दिन लगा था। च्यार ओली पूर्ववत्‌को छे वर्ष दोय मास बारह दिन लगा था यावत् मोक्ष गइ ॥ ४ ॥

इसी माफीक सुकृष्णराणी परन्तु सप्त सप्तमियां कि भिक्षु प्रतिमा तप कीया था यथा-सात दिन तक एक एक आहार कि दात[१] एकेक पाणीकी दात। दूसरे सात दिन तक दो आहार दो

[१] दातार देते समय बिचमें धार खंडित न हो उस दात कहते हैं जेसे मोदक देते समय एक बुंद पड जावे तथा पाणी देते समय एक बुंद गिर जावे ता उस भी दात कहते हैं। अगर एक ही साथमें थालभर मोदक और घडाभर पाणी देना भी एकही दात है

पाणीकी दात । तीसरे सात दिन तीन तीन आहार तीन तीन पाणीकी दात यावत् सातमे सातदिन, सात सात दात आहार पाणी कर लेते है एवं एकोणपचास दिन और एकसो छीनव दात आहार एक सो छीनव दात. पाणी की होती है । फीर यादमें अट अठमिया भिक्षु प्रतिमा तपकरा यह प्रथम आठ दिन एकेक दात आहार एकेक दात्त पाणी कि एवं यावत् आठवे आठ दिन तक आट आठ दात्त आहारकी आट आट दात्त पाणीकी सर्व चौसठ दिन और दोय सो इटीयासी दात आहार दोय सो इटी-यासी दात पाणीकी होती हैं । यादमें नव नवमियों कि भिक्षु प्रतिमा तप पूर्ववत् इकीयासी दिन और च्यारसो पंच दात्त संख्या होती है । यादमें दश दशमियां भिक्षु प्रतिमा तप करा जिस्का एक सो दिन और साडापांचसो दात्त संख्या होती है । यह प्रतिमा सर्व अभिग्रह तप है यादमें ही बहुतसे मास क्षमणा-दि तप कर केवलज्ञान प्राप्त कर अन्तिम मोक्षमें जा विराजे इति ॥ ८ .

१	२	३	४	५
३	४	५	१	२
५	१	२	३	४
२	३	४	५	१
४	५	१	२	३

इसी मापरीक महाकृष्णा राणी परन्तु लघु सर्वतो भद्र तप कराया यथा यंत्र प्रथम ओ-लीको तीनमास दशदिन एवं च्यार ओलीको एक वर्ष एक-मास दशदिन. पारणा सब रस्नायस्नो तपवित् मापरीक समझना । अन्तिम मोक्ष मे विराजमान हुई । ६ ।

इसी माफीक वीर कृष्णा राणी परंतु महा सर्वतो भद्र तप कीया था। यथा यंत्र एक ओलीने आठ मास पांच दिन एवं च्यार ओलीने दोय वर्ष आठ मास और वीस दिन लगा था। पारणमें भोजनविधि सर्वरत्नावली तपकि माफीक समझना औरभी विचित्र प्रकारसे तपकर केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्षमें विराजमान हुवे इति। ७।

१	२	३	४	५	६	७
४	५	६	७	१	२	३
७	१	२	३	४	५	६
३	४	५	६	७	१	२
६	७	१	२	३	४	५
२	३	४	५	६	७	१
५	६	७	१	२	३	४

इसी माफीक रामकृष्णा राणी परन्तु भद्रोत्तर प्रतिमा तप कीयाथा। यथा यंत्र एक ओलीको छे मास और वीस दिन तथा च्यार ओलीको दोय वर्ष दोय मास और विसदिन औरभी बहुत तप कर केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्षमें विराजमान हुवे इति।८।

५	६	७	८	९
७	८	९	५	६
९	५	६	७	८
६	७	८	९	५
८	९	५	६	७

इसी माफीक पितुसेन कृष्णाराणी परन्तु मुक्तावली तप कीया यथा—एक उपवास कर पारणा कर छठ कीया पारणा कर एक

उपवास पारणा कर तीन उपवास पारणाकर एक उपवास च्यार उप० एक उप० पांच उप० एक उप० छ उप० एक उप० सात उप० एक उप० आठ उप० एक उप० नव उप० एक० दश० एक० इग्यारे० एक० बारह० एक० तेरह एक० चौदा० एक० पंदरा० एक० सोला उपवास इसी माफीक पीछा उतरतां सोला उपवाससे एक उपवास तक कीया। एक ओलीको साढाइग्यारे मास लागे और च्यारो ओलीको तीन वर्ष और दश मास काल लगा पारणेका भोजन जैसे रत्नावली तपकि माफीक यावत् शाश्वता सुखमे विराजमान हो गये इति। ९।

इसी माफीक महासेण कृष्णा परन्तु इन्होंने आंबिल वर्द्धमान नामका तप किया था। यथा—एक आंबिल कर एक उपवास दो आंबिल कर एक उपवास, तीन आंबिल कर एक उपवास एवं च्यार आंबिल एक उपवास पांच आंबिल कर एक उप० छे आंबिल एक उप० सात आंबिल इसी माफीक एकेक आंबिलकि वृद्धि करते हुवे यावत् सियाणवे आंबिल कर एक उपवास कर सो आंबिल कीये इस तप पुरा करनेको चौदा वर्ष तीन मास विसदिन लगा था सर्व सतरा वर्षकी दीक्षा पालके अन्तिम एक मासका अनसन कर मोक्ष गया॥ १०॥

यह श्रेणिकराजा कि दशों राणीयो वीरप्रभुके पास दीक्षा लि। इग्यारा अंगका ज्ञानाभ्यास कर, पूर्व बतलाइ हुइ दशों प्रकारकि तपश्चर्या कर अन्तिम एकेक मासका अनसन कर कर्मशत्रुका पराजय कर अन्तगड केवली हो के मोक्षमें गइ इति।

॥ इति आठवांवर्गके दशाध्ययन समाप्तम्॥

इति अन्तगड दशांगसूत्र का संक्षिप्त सार समाप्तम्।

—❀—

श्री अनुत्तरोववाइ सूत्रका संक्षिप्त सार.

(प्रथम वर्गके दश अध्ययन है.)

(१) पहला अध्ययन—राजगृह नगर गुणशीलोद्यान श्रेणिक राजा चेलनाराणी इसका विस्तार अर्थ गौतमकुमारके अध्ययन से समझना।

श्रेणकराजा के धारणी नामकी राणीको सिंह स्वप्न सूचित जाली नामक पुत्रका जन्म हुवा महोत्सवके साथ पांच धातृ पालीत आठ वर्षका होनेके बाद कलाचार्यसे बहुतर कलाभ्यास यावत युवक अवस्था होने पर बडे बडे आठ राजाओंकी आठ कन्याओं के साथ जालीकुमारका विवाह कर दीया दत्त दायजा पूर्ववत समझना। जालीकुमार पूर्व संचित पुन्योदय आठ अन्तेउरके साथ देवतावों कि माफीक सुखोंका अनुभव कर रहा था।

भगवान वीरप्रभुका आगमन राजादि वन्दन करने को पूर्ववत् तथा-जालीकुमर भी वन्दनको गया देशना श्रवण कर आठ अन्तेवर और संसारका त्याग कर माता-पिताकी आज्ञा से बडे हो महोत्सवके साथ भगवान वीरप्रभुके पास दीक्षा ग्रहन करी, विनयभक्तिसे इग्यारा अंगका ज्ञानाभ्यास कर बहुत छठ अठमादि तपस्या करते हुवे गुणरत्न संवत्सर तपकर अपनि आत्माको उज्वल बनाते हुवे अन्तिम भगवानकी आज्ञा ले मारु स्थवीरोंसे क्षमत्क्षामना कर स्थिवर भगवानके साथे विपुलगिरि पर्वत पर अनसन किया सर्व सोला वर्षकी दीक्षा पाली। एक मास

के अनसनके अन्तमें काल कर उर्ध्व सौधर्मईशान यावत् अच्युत देवलोकके उपर नव ग्रीवेक से भी उर्ध्व विजय नामका वैमान में उत्पन्न हुवे। जब स्थिवर भगवान जालीमुनि काल प्राप्त हुवा जानके परि निर्वणार्थ काउस्सगकीया (जाली मुनिके अनसनकि अनुमोदन) काउस्सगकर जालीमुनिका वस्त्र पात्र लेके भगवान के समिप आये वह वस्त्र पात्र भगवान के आगे रखा गौतम स्वामीने प्रश्न कियाकि हे भगवान! आपका शिष्य जाली अनगार प्रकृतिका भद्रीक विनित यावत् कालकर कहां पर उत्पन्न हुवा होगा भगवानने उत्तर दीयाकि मेराशिष्य जाली मुनि यावत् विजयवैमानके अन्दर देव पणे उत्पन्न हुवा है उन्होंकी स्थिति बत्तीस सागरोपमकि है। गौतमस्वामिने पुच्छाकि हे भगवान जालिदेव विजय वैमानसे फीर कहां जावेगा? भगवानने उत्तर दीयाकि हे गौतम! जालीदेव वहांसे कालकर महाविदेह क्षेत्रमें उत्तम जाति कुल के अन्दर जनम लेगा वहांभी केवली परुपित धर्मका सेवनकर दीक्षाले केवलज्ञान प्राप्तकर मोक्ष जावेगा इति प्रथमाध्ययन समाप्तं।

इसी माफीक (२) मयाली कुमर (३) उवयाली कुमर (४) पुरुषसेन (५) वीरसेन (६) लट्ठदन्त (७) दीर्घदंत यह सातों श्रेणिक राजाकि धारणी राणीके पुत्र है और (८) वहेल्लकुमर (९) विहाले कुमार यह दोय श्रेणकराजाकि चेलना राणी के पुत्र है (१०) अभयकुमार श्रेणक राजाकि नन्दाराणीका पुत्र है एवं दश राजकुमर भगवान वीरप्रभु पासे दीक्षा ग्रहन करी थी।

इग्यारा अंगका ज्ञानाभ्यास। पहले पांच मुनियोंने १६ वर्ष दीक्षा पाली क्रमसे छट्ठा, सातवां, आठवां, बारह वर्ष दीक्षा पाली नववां दशवां पांच वर्ष दीक्षा पाली। गति-पहला विजयवैमान, दुसरा विजयन्त वैमान, तीसरा जयन्त

वैमान, चोथा अपराजित वैमान, पांचमा छट्टा सर्वार्थसिद्ध वैमान। दोय च्यार मुनि विजय वैमानमें उत्पन्न हुवे। वहांसे चवके महाविदेह क्षेत्रमें पूर्ववत् मोक्ष जायेगा। इति प्रथम वर्गके दशाध्यायन समाप्तम। प्रथम वर्ग समाप्तम।

—✻◎✻—

(२) दुसरे वर्गका तेरह अध्ययन हैं।

प्रथम अध्ययन—राजगृह नगर श्रेणिकराजा धारणी राणी सिंह सुपनसूचित दीर्घसेन कुमरका जन्म बाल्यावस्था कलाभ्यास पाणीग्रहन आठ राजकन्यावोंके साथ विवाह यावत् मनुष्य सम्बन्धी पांचों इन्द्रियोंके सुख भोगवते हुवे विचर रहाथा। भगवान वीर प्रभुका आगमन हुवा धर्मदेशना सुनके दीर्घसेन कुमार दीक्षा ग्रहण करी सोला वर्षकी दीक्षा पालके विपुलगिरि पर्वत पर एक मासका अनसन कर विजय वैमान गये वहांसे चवकी महाविदेह क्षेत्रमें उत्तम जाति कुलमें जन्म ले के वीर वैराग्य ग्रहनिय धर्म स्वीकार कर केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जावेगा। इति प्रथमाध्ययन समाप्तम्। १।

दुसरा भी ऐसाही (२) महासेन कुमर (३) लट्ठदन्त (४ गूढदन्त (५) सुद्धदन्त (६) हल्लकुमर (७) दुमकु० (८) दुमसेन कु० (९) महादुमसेन १० सिंह (११) सिंहसेन (१२) महासिंहसेन (१३ पुन्यसेन यह तेरह राजकुमर श्रेणिक राजाकि धारनी राणीके पुत्र थे भगवान समिप दीक्षा ले १६ वर्ष दीक्षा पाले विविध प्रकारकि तपश्चर्या कर अन्तिम विपुलगिरि पर्वतपर अनसन करके क्रमसर दोय मुनि विजयवैमान दोय मुनि विजयन्त वैमान, दोय मुनि जयन्त वैमान दोय सात मुनि स

र्थसिद्ध वैमानमें देवपणे उत्पन्न हुवे वहांसे तेरहही देव एक भव महाविदेह क्षेत्रमें करके दीक्षा पाके केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्षमें जावेगा । इति दुसरे वर्गके तेरयाध्ययन समाप्तम् । २ ।

इति दुसरा वर्ग समाप्तम् ।

—•❀◎❀•—

(३) तीसरे वर्गके दश अध्यथन हैं ।

प्रथम अध्ययन—काकंदी नामकी नगरी सहस्राम्रवनोद्यान जयशत्रु नामका राजा । सबका वर्णन पूर्ववत् समझना । काकंदी नगरीके अन्दर बडीही धनाढ्य भद्रा नामकी सार्थवाहिणी वसती थी वह नगरीमें अच्छी प्रतिष्ठित थी । उस भद्रा शेठाणीके एक स्वरूपवान धन्ना नामको पुत्र थो, उसके कला आदिका वर्णन महाबलकुमारकी माफीक यावत् बहोतिर कलामें प्रविन युवक अवस्थाको प्राप्त हो गया था । जब भद्रा शेठाणीने उस कुमारको बत्तीस इभ्यशेठोंकी कन्यावोंके साथ विवाह करनेका इरादासे बत्तीस सुन्दराकार प्रासाद बनाके विचमें धन्नाकुमारका महेल बना दिया । उस प्रासाद महेलोंके अन्दर अनेक स्थंभ पुतलीयो तोरणादिसे अच्छे शोभनिय बना दीया था उसी प्रासादोंका शिखरमानो गगनसे बातोंही न कर रहा हो अर्थात् देवप्रासादके माफीक अच्छा रमणीय था ।

बत्तीस इभ्यशेठोंकी कन्यावों जो कि रूप, यौवन, लावण्य, चातुर्यता कर ६४ कलावोंमें प्रविन कुमारके सदृश वयवाली बत्तीस कन्यावोंका पाणीग्रहण एकही दिनमें कुमारके साथ करा दिया उन्हो बत्तीस कन्यावोंका मातापिता अपरिमित दत्त दायजो दियो सो यावत् बत्तीस रंभावोंके साथ धन्नाकुमार मनुष्य

संबन्धी कामभोग भोगता रहा था अर्थात् बत्तीस प्रकारके नाटक आदि से आनन्दमें काल निर्गमन कर रहा था। यह सब पूर्व पुण्यका ही फल है।

पृथ्वीमंडलको पवित्र करते हुये बहुत शिष्योंके परिवारसे भगवान वीरप्रभुका पधारना काकंदी नगरीके सहस्राम्रवन- बागमें हुआ।

कोणिक राजाकी माफिक जितशत्रु राजा भी च्यार प्रकारकी सेनाके साथ भगवानको वन्दन करनेको जा रहा था, नगरलोक भी स्नानमज्जन कर अच्छे अच्छे वस्त्राभूषण धारण कर गज, अश्व, रथ, सिबिका, पालखी, सेविका, स्यन्दमानी आदिपर सवार हो और कितनेक पैदल भी मनुष्यसमूह होके भगवानको वन्दन करनेको जा रहे थे।

इधर धन्नाकुमार अपने प्रासादपर बैठा हुवा इस महान ज- [illegible] चतुर्दिशामें जाती हुइ देखके कंचुकी पुरुषसे दरियाफ्त करनेपर ज्ञात हुवा कि भगवान वीरप्रभुको वन्दन करनेको जन- समूह जा रहे है बादमें आप भी च्यार अश्ववाले रथपर बैठके भगवानको वन्दन करनेको परिषदाके साथमें हो गए। जहां भगवान विराजमान थे वहां आके सवारी छोडके पांच अभिगम कर तीन प्रदक्षिणा दे वन्दन नमस्कार कर सब लोग अपने अपने योग्य स्थानपर बैठ गये। आये हुवे जनसमूह धर्माभि- लाषीयोंको भगवानने भी विस्तार सहित धर्मदेशना सुनाई। जिसमें भगवानने मुख्य यह फरमाया था कि

हे भव्य जीवों! यह जीव अनादिकालसे संसारमें परिभ्रमण कर रहा है जिसका मुख्य हेतु मिथ्यात्व, अव्रत, कषाय और योग है इन्होंसे शुभाशुभ कर्मोंका संचय होता है तब कर्मों [illegible]

होके सेनापति होके पुन्यफलको भोगवता है कभी रंक दरिद्री पशुयादि होके रोग-शोकादि अनेक प्रकारके दुःख भोगवता है और अज्ञानके वस हो यह जीव इन्द्रियजनित क्षण मात्र सुखोंके लिये दीर्घकाल तक दुःख सहन करते हैं।

इसी दुःखोंसे छुडाने वाला सम्यक् ज्ञान दर्शन चारित्र है वास्ते हे भव्य जीवों! इसी सर्व सुख संपन्न चारित्रको स्वीकार कर इन्हींका ही पालन करो तांके आत्मा सदैवके लिये सुखी हो।

अमृतमय देशना श्रवण कर यथाशक्ति त्याग वैरागको धारन कर परिषदाने स्व स्व स्थान गमन कीया।

धर्मकुमर देशना श्रवणकर विचार किया कि अहो आज मेरा धन्य भाग्य है कि एसा अपूर्व व्याख्यान सुना। और जग-नाथ जिनेन्द्र देवोने फरमाया कि यह संसार स्वार्थका है पौद्गलीक सुखोंके अन्ते दुःख है क्षण मात्रके सुखोंके लिये अज्ञानी जीवों घोर कालके दुःख संचय करते है यह सब सत्य है. अब मुझे चारित्र धर्मका ही सरणा लेना चाहिये। धर्मकुमार भगवानको वन्दन नमस्कार कर बोला कि हे करुणासिन्धु! मुझे आपका प्रवचन पर श्रद्धा प्रतीत आइ और यह वचन मुझे रुचता भी है आप फरमाते है एसे ही इस संसारका स्वरुप है मैं मेरी माताको पुच्छके आपके पास दीक्षा ग्रहन करुंगा "जहासुखम्" परन्तु हे भद्र। धर्म कार्यमें प्रमाद नही करना चाहिये।

धर्मकुमर भगवान कि आज्ञाको स्वीकार कर वन्दन नम-स्कार कर अपने च्यार अश्वके रथपर बेठके स्व स्थानपर आया निज मातासे अर्ज करी कि हे माता आज मैं भगवानकि देशना श्रवन कर संसारसे भयभ्रांत हुवा हुं। वास्ते आप आज्ञा देवे मैं भगवानके पास दीक्षा ग्रहन करुं। माताने कहा कि हे लालजी

तुं मेरे एक ही पुत्र है तुझे बत्तीस ओरतो परणाइ है और यह अपरिमत्त द्रव्य जो तुमारे बापदादायोंके संचे हुये है इसको भोगवो बादमें तुमारे पुत्रादिकी वृद्धि होनेपर भुक्त भोगी हो शा- योंगे फीर हम काल धर्मको प्राप्त हो जाये बादमें दीक्षा लेना।

कुमरजीने कहा कि हे माता यह जीव भव भ्रमन करते हुये अनेक वार माता पिता स्त्रि भरतार पुत्र पितादिका सबन्ध करता आया है कोइ कीसीको तारणेको समर्थ नहीं है धन दौलत राजपाट आदि भी जीवको बहुतसी दफे मीला है इन्होंसे जीवका कल्याण नहीं है। वास्ते आप आज्ञा दो मैं भगवानके पास दीक्षा लुंगा। माताने अनुकूल प्रतिकूल बहूत समझाया परन्तु कुमरजी एक ही बातपर कायम रहा आखिर माताने यह विचारा कि यह पुत्र अब घरमें रहेनेवाला नहीं है तो मेरे हाथसे दीक्षाका महोत्सव करके ही दीक्षा दिरादुं। एसा विचार कर जैसे थावचा शेठाणी कृष्णमहाराजके पास गइ थी और थावचा पुत्रका दीक्षामहोत्सव कृष्णमहाराजने किया था इसी माफीक भद्रा शेठाणीने भी जय- शत्रुराजाके पास भेटणा (निजरांणा) लेके गइ और धन्नाकुमारका दीक्षामहोत्सव जयशत्रुराजाने कीया इसी माफीक यावत भगवान वीरप्रभुके पास धन्नोकुमर दीक्षा ग्रहनकर मुनि बनगया इर्यास- मिति यावत गुप्त ब्रह्मचर्य व्रतको पालन करने लग गया.

जिस दिन धन्नाकुमारने दीक्षा लीयी उसी दिन अभिग्रह धारण कर लीयाथा कि मुझे करने है आवर्जीव तक छठ छठ तप पारणा और पारणेके दिन भी आंबिल करना। जब पारणेके दिन आंबिलका आहार संस्पूट हस्तोंसे देनेवाला देवें। वह भी बचा हुवा अरस निरस आहार वह भी श्रमण शाक्यादि माहण ब्रा- णादि अनेक कृपण वनीमंगादि भी उस आहारकी इच्छा न करे

ऐसा पारणे आहार लेना। इस अभिग्रहमें भगवानने भी आज्ञा देदी कि 'अहासुहं'।

धन्ना अनगारने पहला छट्ठ तपका पारणा आया तब पहेले पहोरमें स्वाध्याय करी दूसरे पहोरमें ध्यान (अर्थचिंतवन) कीया तीसरे पहोरमें मुहपत्ती तथा पात्रादि प्रतिलेखन किया बादमें भगवानकी आज्ञा लेके काकंदी नगरीमें समुदानी गौचरी करनेमें प्रयत्न कर रहे थे परन्तु धन्ना मुनि आहार ऐसा लेता था कि बिलकुल रांक वनीमग पशु पंखी भी इच्छा न करे इस कारणसे मुनिको आहार मीले तो पाणी नहीं मीले और पाणी मीले तो आहार नहीं मीले तथापि उनमें दीनपणा नहीं था व्यग्रचित्त नहीं शुन्य चित्त नहीं कुलुषित चित्त नहीं विषवाद नहीं, समाधि चित्तसे यत्नाकी घटना करता हुवा यथा संयुक्त निर्दोषाहारकी खप करता हुवा यथापर्याप्ति गौचरी आ जानेपर काकंदी नगरीसे नीकल भगवानके समिप आये भगवानको आहार दीखाके अमुर्छित अगृद्धित सर्प जेसे बीलमें शीघ्रता पूर्वक जाता है इसी माफीक स्वाद नहीं करते हुवे शीघ्रता पूर्वक आहार कर तप संयमसे रमणता कर रहाथा इसी माफीक हमेशां प्रति पारणे करने लगे।

एक समय भगवान वीरप्रभु काकंदी नगरीसे विहार कर अन्य जनपद देशमें विहार करते हुवे धन्ना अनगार तपश्चर्या करता हुवा तथा रूपके स्थिवर भगवानका विनय भक्ति कर इग्यारा अंगका ज्ञान अभ्यासभी कियाथा।

धन्ना अनगारने प्रधान घोर तपश्चर्या करी जिसका शरीर इतना तो कृश-दुर्बल बन गयाकि जिस्का व्याख्यान खुद शास्त्रकारोंने इस मुजब कीया है।

(१) धन्ना अनगारका पग जेसे वृक्षकि शुकी हुइ छाला तथा

काटकी पावडीयों ओर जरग (पुराणे जुते) कि माफीक था वहांभी मांस रुधीर रहीत केवल हाड चर्मसे विटा हुवाही देखाव देताथा।

(२) धन्ना अनगारके पगकि अंगुलीयां जेसे मुग उडद चोलादि धान्यकि तरुण फलीयों तापमें शुकानेपर मोली हुइ होती है इसी माफीक मांस लोही रहीत केवल हाडपर चर्म विटा हुवा अंगुलीयोंका आकारसा मालुम होता था।

(३) धन्ना मुनिका जांघ (पींडि) जेसे काकजामकि वनस्पति तथा वायस पक्षिके जंघ माफीक तथा कंक या दोणीये पक्षि विशेष है उसके जंघा माफीक यावत् पूर्व माफीक मांस लोही रहीत थी।

(४) धन्नामुनिका जानु (गोडा) जेसे कालिपोर्र-काकजंघ वनस्पतिविशेष अर्थात् बोरकी गुटली तथा एक जातिकी वनस्पतिके गांट माफीक गोडा था यावत् मांस रहित पूर्ववत्।

(५) धन्नामुनिके उरू (साथल) जेसे प्रियंगु वृक्षकी शाखा, बोरडी वृक्षकी शाखा, संगरी वृक्षकी शाखा, तरुणकों छेदके धुपमें शुकानेके माफीक शुष्क थी यावत् मांस लोही रहित।

(६) धन्ना अनगारके कम्मर जेसे ऊंटका पांव, जरगका पांव, भेंसका पांवके माफीक यावत् मंस लोही रहित।

(७) धन्नामुनिका उदर जेसे मासम-सुकी हुइ चर्मकी दीवडी, रोटी पकानेकी केलडी, लकडेकी कटोतरी इसी माफीक यावत् मंस रक्त रहित।

(८) धन्नामुनिकी पांसलीयों जेसे वांसका करंडीया वासकी टोपली, वांसके पासे, वांसका मुंढला यावत् मंस रक्तरहित थे।

(९) धन्नामुनिके पृष्टविभाग जेसे वांसकी कांटी, पाणागर गंखोंकी अंणि इत्यादि मंस रक्त रहित।

(१०) धन्नामुनिका हृदय (छाती) बींजनेकी चटाइ, पत्ते-का पंखा, सुपडपंखा, ताडपत्तेका पंखा माफीक यावत् पूर्ववत्।

(११) धन्नामुनिके बाहु जैसे समसेकी फली, बहाडकी फली, अगस्तीयांकी फली इसी माफीक यावत् मांस रक्त रहित।

(१२) धन्नामुनिका हाथ जैसे सुका छाणा, वडके पत्ते, पोलासके पत्ते माफीक यावत् मांस रक्त रहित।

(१३) धन्नामुनिकी हस्तांगुलीयों जैसे तुवर, मुंग, मठ, उडदकी तरुण फली, कादके छेदपते सुकाइके माफीक पूर्ववत्।

(१४) धन्नामुनिकी ग्रीवा (गरदन) जैसे लोटाका गला, कुडाका गला, कमंडलके गला इत्यादि मांस रहित पूर्ववत्।

(१५) धन्नामुनिके होठ जैसे सुकी जलोस, सुका श्लेष्म, लाखकी गोली इसी माफीक यावत्—

(१६) धन्नामुनिकी जिह्वा सुका वडका पत्ता, पोलासका पत्ता, गोलरका पत्ता, सागका पत्ता यावत्—

(१७) धन्नामुनिका नाक जैसे आम्बकी फाचली, अंबाडीकी फाचली, बीजोरेकी फाचली, हरीतिकके सुकाइ हो इस माफीक—

(१८) धन्नामुनिकी आंखो (नेत्र) बीणाका छिद्र, बांसलीके छिद्र, प्रभातका तारा इसी माफीक—

(१९) धन्नामुनिका कान मूलेकी छाल, चरभुडेकी छाल, कारेलाकी छाल इसी माफीक—

(२०) धन्नामुनिका शिर (मस्तक) जैसे तुंबाका फल, कोलाका फल, सुका हुवा होता है इसी माफीक—

(२१) धन्नामुनिका सर्व शरीर सुका, भुक्खा, लुक्खा, मांस रक्त रहित था।

श्री रत्नप्रभाकर ज्ञान पुष्पमाला पु. नं. ६१

श्री ककसूरीश्वर सद्गुरुभ्यो नमः

अथ श्री

शीघ्रबोध भाग १८ वां

श्रीसिद्धसूरीश्वर सद्गुरुभ्यो नमः

अथश्री

निरयावलिका सूत्र.

(संक्षित सार)

—⁂◎⁂—

पांचमा गणधर सौधर्मस्वामि अपने शिष्य जम्बुप्रते कह
हे है कि हे चीरंजीव जम्बु ! श्रमण भगवान वीरप्रभु निरयाव-
का सूत्रके दश अध्ययन फरमाये है वह मैं तुम प्रति कहता हुं।

इस जम्बुद्विपमें भारतभूमिके अलंकाररूप अंगदेशमें अल-
पुरी सदृश चम्पा नामकि नगरी थी. जिस्के बाहार इशान-
नमें पूर्णभद्र नामका उद्यान. जिस्के अन्दर पूर्णभद्र यक्षका
क्षायतन. अशोकवृक्ष और पृथ्वीशिलापट्ट. इन सबका वर्णन
उववाइ सूत्र ' में सविस्तार किया हूवा है शास्त्रकारोंने इस
नमें देखनेकि सूचना करी है।

उस चम्पानगरीके अन्दर कोणक नामका राजा राज कर रहाथा जिस्के पद्मावति नामकि पट्टराणी अति सुकुमाल और सुन्दराङ्गी, पांचेन्द्रिय परिपूर्ण. महीलावोंके गुण संयुक्त अपने पतिके साथ अनुरक्त भोग भोगव रहीथी।

उस चंपा नगरीमें श्रेणकराजाका पुत्र काली राणीका अंगज. काली नामका कुँमर वसताथा। एक समयकि वात है कि काली-कुमार तीन हजार हस्ती. तीन हजार अश्व. तीन हजार रथ. और तीन क्रोड पैदलके परिवारसे. कोणकराजाके साथ रथमु-शल संग्रामके गया था।

कालीकुँमारकी माता कालीराणी एक समय कुटम्ब चिंतामें वरतती हुइ एसा विचार कियाकि मेरा पुत्र रथमुशल संग्राममें गया है वह संग्राममें जय करेगा या नहीं ? जीवेगा या नहीं ? मैं मेरा कुँमरको जीता हुवा देखुगा या नहीं ? इस वातोंका आर्त-ध्यान करने लगी।

भगवान् वीरप्रभु अपने शिष्य समुदायके समुहसे पृथ्वी-मंडलको पवित्र करते हुवे चम्पानगरीके पुर्णभद्र उद्यानमें पधारे।

परिषदावृन्द भगवन्तको वन्दन करनेको गये. इदर काली-राणीने भगवन्तके आगमनकि वार्ता सुनके विचार किया कि भग-वान सर्वज्ञ है चलो अपने मनका प्रश्न पुच्छ इस वातका निर्णय करे कि यावत् मेरा पुत्र जीवताको मैं देखुगी या नहीं।

कालीराणीने अपने अनुचरोंको आदेश दीया कि मैं भग-वानको वन्दन करनेके लिये जाती हु वास्ते धार्मीक प्रधानरथ. अच्छी सजावटकर तैयार कर जल्दी लावो।

कालीराणी आप मज्जन घरके अन्दर प्रवेश किया स्नान मज्जन कर अपने धारण करने योग वस्त्राभूषण आदि बहुत कि-

राजाश्रेणिकने और भी दोय तीनवार कहा परन्तु राणीने कुच्छ भी जवाब नही दीया। आखिर राजाने कहा, हे राणी! क्या मेरे एसी भी रहस्यकी बात है कि मेरेसेंभी नही कहती है! राणीने कहा कि हे प्राणनाथ मेरे एसी कोइ भी बात नही है कि मैं आपसे गुप्त रखुं परन्तु क्या करुं वह बात आपको कहने योग्य नही है। राजाने कहा कि एसी कोनसी बात है कि मेरे सुनने लायक नही है मेरी आज्ञा है कि जो बात हो सो मुझे कह दो। यह सुनके राणीने कहा कि हे स्वामि! उस स्वप्न प्रभावसे मेरे जो गर्भ के तीन मास साधिक होनेसे मुझे दोहला उत्पन्न हुवा है कि मैं आपके उदरके मांसके शुले मदिराके साथ भोगवती रहुं। यह दोहला पुर्ण न होनेसे मेरी यह दशा हुई है।

राजा श्रेणिक यह बात सुनके बोला कि हे देवी! अब आप इस बात कि बिलकुल चिंता मत करो. जिस रीतीसे यह तुमारा दोहला सम्पूर्ण होगा. एसा ही मैं उपाय करुंगा इत्यादि मधुर शब्दोंसे विश्वास देके राजाश्रेणिक अपने कचेरीका स्थान था वहां पर आ गये।

राजाश्रेणिक सिंहासन पर बैठके विचार करने लगा कि अब इस दोहले को कोंन उपायसे पुर्ण करना. उत्पातिक, विनयिक, कर्मीक, परिणामिक इस च्यारों बुद्धियोंके अन्दर राजाने शुभ उपाय सोच कर यह निश्चय किया कि यातो अपने उदरका मांस देना पडेगा या अपनि जबान जावेगा. तीसरा कोइ उपाय राजाने नही देखा। इस लिये राजा दुःख्योपयोग होके चिंता कर रहा था।

इतनेमें अभयकुमार राजाको नमस्कार करनेके लिये आया. राजाको चिन्तातुर देखके कुमर बोला। हे तातजी! आप

दिनोंमें जब मैं आपके चरण कमलों में मेरा शिर देता हु तब आप मुझे बतलाते है राज कि वार्ता अलाप करते है। आजतो कुच्छ भि नही. इतना ही नही बल्के मेरे आनेका भि आपको ज्यादह ही ख्याल होगा। तो इस्का कारण क्या है मेरे मोजुदगीमें आपको इतनि क्या फीकर है?

राजाश्रेणिकने चेलनाराणीके दोहले सबन्धी सब बात कही है पुत्र! मैं इसी चितामें हुं कि अब राणी चेलनाका दोहला कैसे पुर्ण करना चाहिये। यह वृत्तान्त सुनके अभयकुमार बोला है पिताजी! आप इस बातका किंचित भी फीकर न करे. इस दोहलाको मैं पुर्ण करुगा यह सुन राजाको पूर्ण विश्वास होगया. अभयकुमार राजाको नमस्कार कर अपने स्थानपर गया. वहां जाके विचार करने पर एक उपाय सोचके अपने रहस्यके कार्य करनेवाले पुरुषोंको बुलवाये। और कहेने लगे कि तुम जावो मांस वेचनेवालोंके वह तत्कालिन मांस रुधिर संयुक्त गुप्तपणे ले आवो. इदर राजा श्रेणिकसे संकेत कर दीया कि जब आपके हृदय पर हम मंस रक्तके काटेंगे तब आप जोरसे पुकार करते रहना, राणी चेलनाको एक किनातके अन्दरमें बेठादी इतनेमें वह पुरुष मांस ले आये. बुद्धिके सागर अभयकुमरने इसी प्रकारसे राणी चेलनाका दोहला पुर्ण कर दहाया कि राजाके उदर पर वह लाया हुवा मंस रक्त उसको काट काटके शुले बनाके राणीको दीया राणी गर्भके प्रभावसे उस्को आचरन कर अपने दोहलेको पुर्ण कीया। तब राणीके दोहलेको शान्ति हुइ।

नोट—शास्त्रकारोंने स्थान स्थान पर फरमाया है कि हे भव्य जीवो! कोसी जीवोंके साथ वैर मत करो. [illegible] राजाको न जाने वह वैर तथा कर्म किस प्रकारसे ब. [illegible]

एकान्त डालनेसे कुर्कटने अंगुली काटडाली थी, वास्ते इस कुमारका नाम "कोणक" दीया था.

क्रमसर वृद्धि होते हुयेके अनेक महोत्सव करते हुये. युवक अवस्था होनेपर आठ राजकन्यायोंके साथ विवाह कर दिये, यावत् मनुष्य संबन्धी कामभोग भोगवता हुवा सुखपूर्वक काल निर्गमन करने लगा.

एक समय कोणककुमारके दिलमें यह विचार हुवा कि श्रेणिकराजाके मोजुदगीमें मैं स्वयं राज नहीं करसक्ता हुं, वास्ते कोइ मोका पाके श्रेणिकराजाको निवडवन्धन कर मैं स्वयं राज्याभिषेक करवाके राज करता हुवा विचरुं। केइ दिन इस बातकी कोशीष करी, परन्तु एसा अवसर ही नहीं बना। तब कोणकने काली आदि दश कुमारोंको बुलवायके अपने दीलका विचार सुनाके कहा कि अगर तुम दशो भाइ हमारी मददमें रहो तो मैं अपने राजका इग्यारा भाग कर एक भाग मैं रखुंगा और दश भाग तुम दशो भाइयोंको भेंट दुंगा। दशो भाइयोंने भी राजके लोभमें आके इस बातको स्वीकार कर कोणकको मददमें होगये। "परिग्रह दुनियांमें पापका मूल कारण है परिग्रहके लिये कैसे कैसे अनर्थ किये जाते है."

एक समय कोणकने श्रेणिकराजाको पकड निवडवन्धन बाधके पिंजरेमें बन्ध कर दिया, और आप राज्याभिषेक करवाके स्वयं राजा बन गया. एक दिन आप स्नानमज्जन कर अच्छे वस्त्राभूषण धारण कर अपनी माता चेलनाराणीके चरण ग्रहन करनेको गया था. राणी चेलनाने कोणकका कुच्छ भी सत्कार या आशिर्वाद नहीं दिया। इसपर कोणक बोला कि हे माता! आज तेरे पुत्रको राज प्राप्त हुवा है तो तेरेको हर्ष क्यों नहीं

होता है। चेलनाने उत्तर दिया कि हे पुत्र! तुमने कोनसा अच्छा काम किया है कि जिसके जरिये मुझे खुशी हो। क्यों कि मैं तो गर्भमें आया था जबहीसे तुझे जानती थी, परन्तु तेरे पिताने तेरेपर बहुतही अनुराग रखा था जिस्का फल तेरे हाथोंसे मीला है अर्थात् तेरे देवगुरु तुल्य तेरा पिता है उन्होंको पिंजरेमें बन्ध कर तुं राजमान कीया है, यह कितने दुःखकी बात है, अब तुंही कह के मुझे किस बातकी खुशी आवें।

कोणककि पूर्वभवका वैर श्रेणिकराजासे था वह निवृत्ति हो गया, अब चेलनाराणीके वचनका कारण मीलनेसे कोणकने पुच्छा कि हे माता! श्रेणिकराजाका मेरेपर केसा अनुराग था, तब गर्भसे लेके सब बात राणी चेलनाने सुनाइ। इतना सुनतेही अत्यन्त भक्तिभावसे कोणक बोला कि हे माता! अब मैं मेरे हाथसे पिताका बन्धन छेदन करुंगा। एसा कहके कोणकने एक कुवांट (फर्सी) हाथमें लेके श्रेणिकराजाके पास जाने लगा। उधर राजा श्रेणिकने कोणकको आता हुवा देखके विचार किया कि पेस्तर तो इस दुष्टने मुझे बन्धन बांधके पिंजरमें पुर दीया है अब यह कुवांट लेके आरहा है सो न जाने मुझे कीस कुमौतसे मारेगा, इससे मुझे स्वयंही मर जाना अच्छा है, एसा विचारके अपने पास मुद्रिकामें भेग-हीरकणी थी वह भक्षण कर तत्काल शरिरका त्याग कर दीया. जब कोणक नजदीक आके देखे तो श्रेणिक निश्चेष्ट अर्थात् मृत्यु पाये हुवे शरीरही देखाइ देने लगा, उस समय कोणकने बहुत रुदन-विलाप किया परन्तु मृत्युवालो कोन मीला सके. उस समय मातागण आदि बहुत होके कोणकको आश्वासना दी, तब कोणकने रुदन करता हुवा बडा उत्सव महोत्सवसे श्रेणिकका निर्वाण कार्य अर्थात् मृत्युक्रिया करी। तत्पश्चात् कितनेक रोजके बाद कोणकराजा राजगृहीमें निवास

करने कूणिकको बडाही मानसिक दुःख होने लगा. फलत बारबार दीलमें आति है कि मैं कैसा अधन्य हूं, अपुन्य हूं, अकृतार्थ हूं, कि मेरे पिता-देवगुरुकी माफीक मेरेपर पूर्ण प्रेम रखनेवाले होनेपर भी मेरी कितनी कृतघ्नता है। इत्यादि दीलको बहुत रंज होनेके कारणसे आप अपनी राजधानी चम्पानगरीमें ले गये और वहांही निवास करने लगा। वहांपर काली आदि दश भाइयोंको बुलायके राजके इग्यारा भाग कर एक भाग आप रखके शेष दश भाग दश भाइयोंको भेट दीया, और राज आप आपने स्वतन्त्रतासे करने लगगये, और दशों भाइओंने कोणककी आज्ञा स्वीकार करी।

चम्पानगरीके अन्दर श्रेणिकराजाका पुत्र चेलनाराणीका अंगज वहल्लकुमार जोके कोणकराजाके छोटाभाइ निवास करता था श्रेणिकराजा जीवतों 'सींचाणक गन्ध हस्ती और अठारे सरीवाला हार देदीया था। सींचाणक गन्ध हस्ती कैसे प्राप्त हुवा यह बात मूलपाठमें नहीं है तथापि यहां पर सक्षिप्त रूप रूपसे लिखते है।

एक वनमें हस्तीयोंका यूथ रहता था उस यूथके मालीक हस्तीको अपने यूथका रखना तो ममत्व भाव था कि कोभी भी हस्तनीके बचा होनेपर वह तुरत मारडालता था कारण अगर वह बचा बडा होनेपर मुझे मारके यूथका मालिक बन जावेगा। जब हस्तनीयोंके अन्दर एक हस्तनी गर्भवन्ती हो अपने पगोंसे लंगडी हो १-२ दिन यूथसे पीछे रेहने लगी, हस्तीने विचार किया कि यह पगोंसे कमजोर होगी। हस्तनीने गर्भ दिन पूर्ण होनेके बाद एक तापसोंके वृक्षजालीके अन्दर पुत्रको जन्म दीया, और आप यूथमें सामिल हो गइ। तापसोंने उस हस्ती बच्चेको पोषन कर बडा किया और उसके सूंडके अन्दर वह

बालटी डालके नदीसे पाणी मंगवायके बगेचेको पाणी पीलाना शरू कर दीया बगेचेको पाणी सींचन करनेसे ही इसका नाम तापसोने सींचाणा हस्ती रखाथा। कितनेक कालके बाद हस्ती बडा, मदमें आया हुवा, उन्ही तापसोंके आश्रम और बगेचेका भंग कर दीया, तापस क्रोधके मारा राजा श्रेणिक पास जाके कहा कि यह हस्ती आपके राजमें रखने योग्य है राजाने हुकम कर हस्तीको मंगवायके संकल डाल बन्ध कर दीया उसी रहस्ते तापस निकलते हस्तीको उद्देश कर बोला रे पापी ले तेरे कीये हुये दुष्कृत्यका फल तुजे मीला है जो कि स्वतंत्रतासे रहेनेवाले तुझको आज इस कारागृहमें बन्ध होना पडा है यह सुन हस्ती अमर्षके मारे संकलोंको तोड जंगलमें भाग गया. राजा श्रेणिकको इस बातका बडाही रज हुवा तब अभयकुमार देवीकि आराधना कर हस्तीके पास भेजी देवी हस्तीको बोध दीया और पुर्वभव व-हलकुमरका संबन्ध बतलाया इतनेमें हस्तीको जातिस्मरण ज्ञान हुवा. देवीके कहनेसे हस्ती अपने आप राजाके यहां आ गया. राजा भी उसको राज अभिशेष कर पट्टधारी हस्ती बना लिया इति।

हारकि उत्पत्ति—भगवान वीरप्रभु एक समय राजगृह-नगर पधारे थे राजा श्रेणिक बडाही आडंबरसे भगवानको वन्दन करनेको गया।

सौधर्म इन्द्र एक वखत सम्यक्त्वकि दृढताका व्याख्यान करते हुये राजा श्रेणिककि तारीफ करी कि कोइ देव दानव भि समर्थ नही है कि राजा श्रेणिकको समकितसे क्षोभित करसके।

सर्व परिषदोंके देवोंने यह बात स्वीकार करलीथी. परन्तु कोय मिथ्यादृष्टी देवोंने इस बातको न मानते हुये अभिमान कर मृत्युलोकमें आने लगे।

करी परन्तु राजाने तो इस बातपर पूर्ण कान भी नहीं दिया। जब राणीने अपना स्त्रीचरित्रका प्रयोग किया, राजाने कहा कि आप इतना विश्वास रख छोडा है. भाइ भाइ करते है परन्तु आपके भाइका आपकी तर्फ कितना भक्तिभाव है ? मुझे उमेद नहीं है कि आपके मंगानेपर हार-हस्ती भेज देवे. अगर मेरे कहनेपर आपका इतबार न हो तो एक दफे मंगवाके देख लिजिये।

एसा सुनाके मारा राजा कोणक एक आदमीको वहलकुमारके पास भेजा. उनके साथ संदेशा कहलाया था कि हे, लघुभ्रात ! तुं जाणता है कि राजमें जो रत्नादिकी प्राप्ति होती है वह सब राजाकी ही होती है, तो तेरे पास जो हारहस्ती है वह मेरेको सुप्रत कर दे, अर्थात् मुझे दे दो। इत्यादि। वह प्रतिहार जाके कोणकराजाका संदेशा वहलकुमारको सुना दिया।

वहलकुमारने नम्रताके साथ अपने वृद्धभ्रात (कोणकराजा) को अर्ज करवाइ कि आप भी श्रेणिकराजाके पुत्र, चेलनाराणीके अंगज हो और मैं भी श्रेणिकराजाके पुत्र-चेलनाराणीके अंगज हुं और यह हारहस्ती अपने मातापिताकी मोजुदगीमें हमको दिया है इसके बदलेमें आपने राजलक्ष्मीका मेरेको कुच्छ भी विभाग नहीं देते हुये आप अपने स्वतंत्र राज कर रहे हो। यद्यपि आपके मातापितायोंने किया हुवा विभाग नामंजुर हो तो अबी भी आप मुझे आधा राज दे देवे और हारहस्ती ले लिजिये।

प्रतिहारी कोणकराजाके पास आके सर्व वार्ता कह दी. जब राणी पद्मावतीको खबर हुइ, तब एक दो तूंबा और भी मारा कि लो, आपके भाइने आपके हुकमके साथ ही हारहस्ती भेज दिया है इत्यादि।

राजा कोणकने दोय तीन दफे अपना प्रतिहारके साथ कह-

लाया, परन्तु वहलकुमर कि तर्फसे यह ही उत्तर मीला कि यातो अपने मातापिताके इन्साफ पर कायम रेहे, हारहस्ती मेरे पास रेहने दो, आप अपने राज्यसे ही संतोष रखो. अगर आपको अपने मातापिताके इन्साफ मंजुर न रखना हो तो आधा राज्य हमको देदो और हारहस्ती लेलो इत्यादि।

राजा कोणक इस बात पर ध्यान नही देता हुवा हारहस्ती लेनेकि ही कोशीष करता रहा।

वहलकुमरने अपने दीलमें सोचा कि यह कोणक जब अपने पिताको निबड बन्धन कर पिंजरेमें डालनेमें किंचत् मात्र शरम नहीं रखी तो मेरे पाससे हारहस्ती जबर जस्ती लेले इसमें क्या आश्चर्य है? क्यों कि राजसत्ता सैन्यादि सब इसके हाथमें है। इस लिये मुझे चाहिये कि कोणककि गेरहाजरीमें मैं अपना अन्तेवर आदि सब जायदाद लेके वैशालानगरीका राजा चेटक जो हमारे नानाजी है उन्होंके पास चला जाउं। कारण चेटकराजा धर्मिष्ट न्यायशील है वह मेरा इन्साफ कर मेरा रक्षण करेगा। अलम्। अवसर पाके वहलकुमर अपने अन्तेवर और हारहस्ती आदि सब सामग्री ले चम्पानगरीसे निकल वैशालानगरी चला गया. वहां जाके अपने नानाजी चेटकराजाको सब हकिकत सुनादि. चेटकराजाने वहलकुमारका न्यायपक्ष जान अपने पास रख लिया।

पीच्छेसे इस बातकी राजा कोणकको खबर हुइ तब बहुत ही गुस्सा किया कि वहलकुमरने मुझे पुच्छा भी नही और वैशाला चला गया उसी वखत एक दूतको बोलाया और कहा कि तुम वैशालानगरी जाओ हमारे नानाजी चेटकराजा प्रत्ये हमारा नमस्कार करो और नानाजीसे कहो कि वहलकुमर कोणकराजाको

निगर पुछाा आया है तो आप कृपाकर हारहस्ती और वहल-कुमारको वापीस भेज दीरावे।

दूत वैशाला जा के राजा चेटकको नमस्कार कर कोणकका संदेशा कह दीया उसके उत्तरमें राजा चेटक बोला कि हे दूत! तुम कोणकको कहदेना कि जैसे श्रेणिकराजाका पुत्र चेलना देवीका अंगज कोणक है ऐसाही श्रेणिकराजाका पुत्र चेलना-राणीका अंगज वहलकुमार है इसवास्ते खास यह है कि हार-हस्ती अव्वल तो कोणकको लेना ही नही चाहिये क्यों कि वहल-कुमर कोणकका लघु भ्रात है और माता पिताओंने दिया हुवा है अगर हारहस्ती लेना ही चाहते हो तो आधा राज वहलकुमरको दे देना चाहिये। इन दोनों वातोंसे एक वात कोणक मंजुर करता हो तो हम वहलकुमरको चम्पानगरी भेज सक्ते है इतना कहके दूतको वहांसे विदाय कर दीया।

दूत वैशाला नगरीसे रवाना हो चम्पानगरी कोणकराजाके पास आयके सब हाल सुना दिया और कह दिया कि चेटक-राजा वहलकुमारको नहीं भेजेगा. इसपर कोणकराजाको और भी गुस्सा हुवा. तब दूतको बुलायके कहा कि तुम वैशाला नगरी जाओ. चेटकराजा समेत कहना कि आप वृद्ध अवस्थामें हो राज-नीतिके जानकार हो. आप जानते हो कि राजमें कोइ प्रकारके पदार्थ उत्पन्न होते है. वह सब राजाका ही होता है तो आप हारहस्ती और वहलकुमारको कृपा कर भेज दीरावे. इत्यादि कहके दूतको दुसरीवार भेजा.

दूत कोणकराजाका आदेशको सविनय स्वीकार कर दुसरी दफे वैशाला नगरी गया. सब हाल चेटकराजाको सुना दिये दुसरी दफे चेटकराजाने वही उत्तर दिया कि मेरे तो कोणक

और वहल दोनों सगवा हैं. परन्तु इन्साफकी बात है कि आधा राज दे दे और हारहस्ती ले ले. एसा कहके दूतको रवाना किया।

दूत चम्पानगरी आके कोणकराजाको कह दिया कि सिवाय आधा राजके हारहस्ती और वहलकुमारको नहीं भेजेगा. एसा आपके नानाजी चेटकराजाका मत है।

यह सुनके कोणकराजाको बहुत ही गुस्सा हुवा. तब तीसरीवार दूतको बुलायके कहा कि जावो. तुम वैशाला नगरी राजा चेटकके सिंहासन पादपीठको डाबे पगकी ठोकर देके भालाके अन्दर पोके यह लेख देनेके बाद कह देना कि हे चेटक-राजा! तुं मृत्युकी प्रार्थना करनेको साहसिक क्यों हुवा है. क्या तुं कोणकराजाको नहीं जानता है अगर या तो तुं हारहस्ती और वहलकुमारको कोणकराजाकी सेवामें भेजदे नहीं तो कोणकरा-जासे संग्राम करनेको तैयार हो जाय. इत्यादि समाचार कहना।

दूत तीसरी दफे वैशाला नगरी आया. अपनी तर्फसे चेट-कराजाको नमस्कार कर फीर अपने मालिक कोणकराजाका सब हुकम सुनाया।

दूतका वचन सुनके चेटकराजा गुस्सेके अन्दर आके दूतसे कहा कि जब तक आधा राज कोणक वहलकुमारको न देवेगा, वहांतक हारहस्ती और वहलकुमार कोणकको कभी नहीं मीलेगा। दूतका बडा ही तिरस्कार कर नगरकी बारी द्वारा निकाल दिया।

दूत चम्पानगरी आके राजा कोणकको सर्व बात निवेदन कर कह दिया कि राजा चेटक कभी भी हारहस्ती नहीं भेजेगा। यह बात सुन कोणकराजा अति कोपित हो काली आदि दश भाइयोंको बुलवायके सर्व वृत्तान्त सुनाया और चेटकराजासे

संग्राम करनेको तैयार होनेका आदेश दिया. काली आदि दशों भाइ राजके दश भाग लिया था वास्ते उन्होंको कोणकका हुकम मानके संग्रामकी तैयारी करना ही पडा। राजा कोणकने कहा कि हे बन्धुओ ! आप अपने अपने देशमें जाके तीन तीन हजार गज, अश्व, रथ और तीन क्रोड पैदलसे युद्धकि तैयारी करो, एसा हुकम कोणकराजाका पा के अपने अपने राजधानीमें जा के सैना कि तैयारी कर कोणकराजाके पास आये। कोणकराजा दशों भाइयोंको आता हुवा देखके आप भी तैयार हो गया, सर्व सैन्य तेतीस हजार हस्ती तेतीस हजार अश्व, तेतीस हजार संग्रामीक रथ, तेतीस क्रोड पैदल इस सब सैनाको एकत्र कर अंगदेशके मध्य भागसे चलते हुये विदेह देशकि तर्फ आ रहाथा।

इधर चेटकराजाको ज्ञात हुवा कि कोणकराजा कालीआदि दश भाइयोंके साथ युद्ध करनेको आ रहा है। तब चेटकराजा कासी, कोशाल, अठारा देशके राजाओं जो कि अपने स्वधर्मी थे उन्होंको दूतों द्वारा बुलवाये। अठारा देशके राजा धर्मप्रेमी बुलवानेके साथ ही चेटकराजाकी सेवामें हाजर हुवे। और बोले कि हे स्वामि ! क्या कार्य है सो फरमाए।

चेटकराजाने वहलकुमारकी सब हकिकत कह सुनाइ कि अब क्या करना अगर आप लोगोंकी सलाह हो तो वहलकुमरको दे देवे. और आप लोगोंकी मरजी हो तो कोणकसे संग्राम करे। यह सुनके कर्मवीर अठारा देशोंके राजा सलाह कर बोले कि इस्माफके तौरपर न्यायपक्ष रख सरणे आयाका प्रतिपालन करना आपका फर्ज है अगर कोणक राजा अन्याय कर आपके उपर युद्ध करनेको आता होतो हम अठारा देशोंके राजा आपकि तर्फ

से युद्ध करनेको तैयार है। चेटक राजाने कहा कि अगर आप कि पनी मरजी हो तो अपने अपने राजधानीमें जाके सब सब सेना तैयार कर जल्दी आजाओ। इतना सुनतेही सब राजा सब सब स्थान गये. वहांपर तीन तीन हजार हस्ती, अश्व रथ, और तीन तीन क्रोड पैदल तैयार कर राजा चेटकके पास आ पहूंचे. राजा चेटक भी अपनी सेना तैयार कर सर्व सतावन हजार हस्ती, सतावन हजार अश्व सतावन हजार रथ सतावन क्रोड पैदल का दल लेके रवाना हुआ वहभि अपने देशान्त विभागमें अपना डेरा तंबु पडाव कर दिया। उधर अंग देशान्त विभागमें कोणक राजाका पडाव होगया है। दोनों दलके निशान ध्वजा पताकाओं लगगइ है। संग्रामकि तयारी हो रही है

हस्ती वालोंसे हस्तीवाले, अश्ववालोंसे अश्ववाले, रथवालों से रथवाले पैदल सुभटोंसे पैदलवाले. इत्यादि सादृश युगल चलके संग्राम प्रारंभ समय योद्धा पुरुषोंका सिंहनादसे गगन गर्जना कर रहा था अनेक प्रकारके वाजिंत्र वाज रहे थे. कर्म सुभटोंका उन्माद संग्रामके अन्दर बढ रहा था. आपसमें शस्त्रोंकि वर्षाद हो रहीथी अनेक लोकोंका शिर पृथ्वीपर गिर रहाथा. रौद्रसे धरतीपर कीच मचरहा था हां हां कार शब्द होरहा था.

कोणक राजाकी तर्फसे सेनापति कालीकुमार नियत किया गया था. इधर [illegible] तर्फसे चेटकराजा सेनाका अधेश्वर था और [illegible] नरेन्द्रोंका आपसमें संवाद होने चेटक राजाके [illegible] अपराधिको नहीं मारनाहु. यह सुन कालीकुमार [illegible]

१ चेटक राजाके [illegible]

२ कोणक राजाके सेना [illegible]

अपने धनुष्यपर बाणको चढाके बडे ही जोरसे बाण फैंका किन्तु चेटक राजाको बाण लगा नही परन्तु अपराधि जाणके चेटक-राजाने एकही बाणमें कालीकुमारको मृत्युके धामपर पहुंचादिया अब कालीकुमार सेनापति गिर पडा. तब उस रोज संग्राम बन्ध हो गया।

भगवान् फरमाते है कि हे गौतम! कालीकुमारने इस संग्रामके अन्दर महान् आरंभ, सारंभ, समारंभ कर अपने अध्यवसायोंको मलीन कर महान् अशुभ कर्म उपार्जन कर काल प्राप्त हो. चोथी पंकप्रभा नरकके अन्दर दश सागरोपमकी स्थितिवाला नैरिया हुवा है।

गौतमस्वामिने प्रश्न किया कि हे भगवान्! यह कालीकुमारका जीव चोथी नरकसे निकल कर कहां जायेगा।

भगवानने उत्तर दिया कि हे गौतम! कालीकुमारका जीव नरकसे निकलके महाविदेह क्षेत्रमें उत्तम जाति-कुलके अन्दर जन्म धारण करेगा. (कारण अशुभ कर्म बन्धे थे वह नरकके अन्दर भोगव लिया था) वहांपर अच्छा सत्संग पाके मुनियोंकी उपासना कर आत्मभाव प्राप्त हो, दीक्षा धारण करेगा. महान् तपश्चर्या कर घनघातीयां कर्म क्षय कर केवलज्ञान प्राप्त कर अनेक भव्य जीवोंको उपदेश दे. अपने आयुष्यके अन्तिम श्वासोश्वासका त्याग कर मोक्षमें जायेगा.

यह सुन भगवान् गौतमस्वामी प्रभुको वन्दन-नमस्कार कर अपनी ध्यानवृत्तिके अन्दर रमणता करने लगगये।

इति निरयावलिका सूत्र प्रथम अध्ययन।

(२) दुसरा अध्ययन—सुकालीकुमारका. इन्होंकी माताका नाम सुकालीराणी है. भगवानका पधारणा, सुकालीका पुत्रके लिये

प्रश्न करना. भगवान् उत्तर देना. गौतमस्वामिका प्रश्न पुछना. भगवान् सविस्तर उत्तर देना. यह सब प्रथमाध्ययनकी माफीक. अर्थात् प्रथम दिनके संग्राममें कालीकुमारका मृत्यु हुवा था और दुसरे दिन सुकालीकुमारका मृत्यु हुवा था। इति।

(३) तीसरा अध्ययन—महाकालीराणीका पुत्र महाकालीकुमारका है।

(४) चोथा अध्ययन—कृष्णाराणीके पुत्र कृष्णकुमारका है।

(५) पांचवा अध्ययन—सुकृष्णाराणीका पुत्र सुकृष्णकुमारका है।

(६) छठा अध्ययन—महाकृष्णाराणीके पुत्र महाकृष्णकुमारका है।

(७) सातवां अध्ययन-वीरकृष्णाराणीके पुत्र वीरकृष्णका है।

(८) आठवां अध्ययन-रामकृष्णाराणीका पुत्र रामकृष्णका है।

(९) नववां अध्ययन—पद्मश्रेणकृष्णाराणीके पुत्र पद्मश्रेणकृष्णकुमारका है।

(१०) दशवां अध्ययन महाश्रेण कृष्णा राणीके पुत्र महाश्रेण कृष्णका है॥ यह श्रेणिक राजाकी दश राणीयोंके दश पुत्र है. दशों पुत्र चेटकराजाके हाथसे दश दिनोंमें मारा गया है. दशों राणीयोंने भगवानसे प्रश्न किया है. भगवानने प्रथमाध्ययनकी माफीक उत्तर दीया है. दशों कुमार चोथी नरक गये है. महाविदेहमें दशों जीव मोक्ष जावेगा. काली आदि दशों राणीयों पुत्रके निमित्त वीर वचन सुन अन्तगढ दशांगके आठवा वर्गमें दीक्षा ले तपश्चर्या कर अन्तिम केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष गइ है. इति निरयावलीका सूत्रके दश अध्ययन समाप्त हुवे.

नोटः—दश दिनोंमें दश भाइ खतम हो गये फिर उस

इन संग्राममें कोणककी जय और चेटक तथा अठारा देशोंके राजाओंका पराजय हुआ था। प्रायः सर्व जीव नरक तथा तीर्यचमें गये। दुसरे दिन भूताइन्द्र हस्ती पर, बीचमें कोणक राजा आगे शकेन्द्र पीछे चमरेन्द्र एवं तीन इन्द्र संग्राम करनेको गये. इस संग्रामका नाम रथमुशल संग्राम था दूसरे दिन ९६०००००० मनुष्योंकी हत्या हुइ थी जिस्में १०००० जीव तो एक मच्छीकी कुक्षी में उत्पन्न हुये थे. एक वर्णनागनत्वो देवलोकमें और उसका बाल मित्री मनुष्य गतिमें गया शेष जीव बहुलता नरक तीर्यंच गतिमें उत्पन्न हुया।

उत्तराध्ययन सूत्रकी टीकामें दोषाधिकार है तथा कीतनीक बातें श्रेणिक चरित्रमें भी है प्रसंगोपात कुच्छ यहां लिखी जाती है।

जब काशी-कोशाल देशके अठारा राजाओंके साथ चेटक राजाका पराजय हो गया तब इन्द्रने अपने स्थान जानेकी रजा मांगी. उस पर कोणक बोला कि मैं चक्रवर्ति हुं। इन्द्रोंने कहा कि चक्रवर्ति तो बारह हो चुके है, तेरहवा चक्रवर्ति न हुवा न होगा, यह सुनके कोणक बोला कि मैं तेरहवा चक्रवर्ति होउंगा, वास्ते आप मुझे चौदा रत्न दीजीये दोनो इन्द्रोंने बहुतसा समझाया परन्तु कोणकने अपना हठको नहीं छोडा तब इन्द्रोंने एकेन्द्रियादि रत्नकृतव्यी बनाके दे दीया और अपना संबन्ध तोडके. इन्द्र स्वस्थान गमन करते कह दीया :कि अब हमको न बुलाना न हम आवेंगे यह बात एक कथाके अन्दर है. अगर कोणकने दिग्विजयका प्रयाणके समय कृत्व्य रत्न बनाया हो तो भी बन सक्ता है.

जब चेटकराजाका दल कमजोर होगया और वहभि जान

समर हुवा कि भगवानका पूर्ण भक्त बन गया. उपपातिक सूत्र में एसा उल्लेख है कि कोणक राजाकी एसा नियम था कि जबतक भगवान कहां विराजते हैं उनका निर्णय नहीं हो वहांतक मुहमें अन्न जलभी नहीं लेता था. अर्थात प्रतिदिन भगवानकि खबर मंगवाके ही भोजन करता था। जब भगवान चम्पा नगरी पधारतेथे तब बडा ही आडंबरसे भगवानको वन्दन करनेको जाता था। इत्यादि पूर्ण भक्तिवान था। वन्दनाधिकारमें जहां तहां कोणक राजाकि औपमा दि जाती है. इसका सविस्तार व्याख्यान उववाइ सूत्रमें है।

अन्तिम [1]अवस्था में कोणक राजा कृतघ्न रत्नोंसे आप चक्रवर्ति हो देश साधन करनेको गया था तमस्त्रप्रभा गुफाके पास आके दरवाजा खोलनेको दंडरत्नसे कीमाड खोलने लगा. उस वख्त देवतावोंने कहा कि बारह चक्रवर्ति हो गया है. तुम पीच्छे हटजावो नही तो यहां कोइ उपद्रव होगा. परन्तु भवितव्यताके आधिन हो कोणकने यह बात नही मांनी तब अन्दरसे अग्निकि झाला निकली जीससे कोणक वहां ही कालकर छठी तमःप्रभा नरकमें जा पहुंचा।

एक स्थलपर एसाभि उल्लेख है कि कोणकका जीव चौदा भव कर मोक्ष जावेगा तत्व केवली गम्ये।

प्रसंगोपात संबंध समाप्त।

इति श्रीनिरयावलिकासूत्र संक्षिप्त सार समाप्तम्।

---

[1] केवल १६ वर्ष कि अवस्थामें राजगद्दी बैठा १६ वर्षोंके [illegible] अनुमान था। एसा जैन कहते है।

गयाथा कि कोणकको इन्द्र साहिता कर रहा है। तब चेटकराजा अपनि शेष रही हुइ सैना ले वैशाला नगरीमें प्रवेश कर नगरीका दरवाजा बंध कर दीया वैशाला नगरीमें श्री मुनिसुव्रत भगवानका स्थुभ था, उसके प्रभावसे कोणकराजा नगरीका भंग करनेमें असमर्थ था वास्ते नगरीके बहार निवास कर बेठा था अठारा देशके राजा अपने अपने राजधानीपर चले गयेथे।

वहलकुमर रात्रीके समय सेचानकगन्ध हस्तीपर आरूढ हो, कोणकराजाकि सैना जो वैशाला नगरीके चोतर्फ घेरा दे रखाथा उसी सैनाके अन्दर आके बहुतसे सामन्तोंको मार डालता था, एसे कीतनेही दीन हो जानेसे राजा कोणकको खबर हुइ तब कोणकने आगमनके रहस्तेके अन्दर खाइ खोदाके अन्दर अग्नि प्रज्वलित करउपर आछादीत करदीया इरादायाकि इस रस्ते आते समय अग्निमें पडके मर जायगा, " क्या कर्मोकि विचित्र गति है. और कैसे अनर्थ कार्यकमें कराते है " रात्री समय वहलकुँमार उसी रहस्तेसे आ रहाथा परन्तु हस्तीको जातिस्मरण ज्ञान हो-नेसे अग्निके स्थानपर आके वह ठेर गया वहलकुँमरने बहुतसे अंकुश लगाया परन्तु हस्ती एक कदमभी आगे नही धरा वहलकुँ-मार बोला रे हस्ती ! तेरे लिये इतना अनर्थ हुवा है अब तुं मुझे इस समय क्यों उत्तर देता है यह सुनके हस्ती अपनि सुंढसे वहलकुँमरको दूर रख, आप आगे चलता हुवा उस अच्छादित अग्निमे जा पडा शुभ ध्यानसे मरके देवगतिमें उत्पन्न हुवा वहलकुँमरको देवता भगवानके समोसरणमें ले गया वह वहा-पर दीक्षा धारण करली अठारा सरवालाहार जिस देवताने दीया था वह पाछा ले गया।

पाठको ! संसारकी वृत्तिको ध्यान देके देखिये जिसहार और

इन्हिके लिये इतना अनर्थ हुवाथा वह हस्ती आगमें जल गया, हार देवता ले गया, वहलकुंमर दीक्षा धारन करली है। तथापि कोणक राजाका कोप शान्त नहीं हुवा।

कोणक राजा एक निमित्तियाको बुलवायके पुच्छा कि हे नैमित्तीक इस वैशाल नगरीका भंग कैसे हो सक्ता है, निमित्तीयाने कहाकि हे राजन् कोइ पतित साधु हो वह इस नगरीको भांग कर नेमें साहित हो सक्ता है राजा कोणकने यह बात सुन एक कमल-लता वैश्याको बुलवाके उसको कहा कि कोइ तपस्वी साधुको लावो, वैश्या राजाका आदेश पाके वहांसे साधुकि शोध करनेको गइ तो एक नदीके पास एक स्थानपर कुलबालुक नामका साधु ध्यान करताथा उस साधुका संबन्ध एसा है कि—

कुलवालुक साधु अपने वृद्ध गुरुके साथ तीर्थयात्रा करनेको गयाथा एक पर्वत उत्तरतों आगे गुरु चल रहेथे, कुशीष्यने पीच्छेसे एक पत्थर (बडीशीला गुरुके पीछे डाली, गुरुका आ-युष्य अधिक होनेसे शीलाको आति हुइ देख रहस्तेसे दुर हो गये, जब शिष्य आया तब गुरुने उपालंभ दीयाकि हे दुरात्मन् तुं मेरेको मारनेका विचार कीया था, जा कीसी औरतके योग्यसे तेरा चारित्र भ्रष्ट होगा एसा कहके उस कुपात्र शिष्यको निकाल दीया,

वह शिष्य गुरुके वचन असत्य करनेको एकान्त स्थानपर तपश्चर्या कर रहा था। वहांपर कमललता वैश्या आके साधुको देखा, वह तपस्वी साधु तीन दिनोंसे उसरके एक शीलाको अपनि जबांनसे तीनवार स्वाद लेके फीर तपश्चर्याकि भूमिकापर स्थित हो जाता था, वैश्याने उस शीलापर कुच्छ औषधिका प्रयोग (लेपन) कर दीया जब साधु आके उस शीलापर जबानसे स्वाद लेने लगा वह स्वाद मधुर होनेसे साधुको विचार हुवाकि

यहांपर तपस्याका प्रभाव है, उस औषधिके प्रयोगसे साधुको टट्टी और उल्टी इतनी होगइ कि अपना होश भूलगया, तब वेश्याने उस साधुकि होशाशिलकर सचेतनकिया. साधुउसका उपकार मानके बोलाकि तेरे कुच्छ काम होतो मुझे कहदे, तेरे उपकार का बदला दुं। वेश्या बोलीके चलीये। बस। राजा कोणकके पास ले आइ, कोणकने कहाकि हे मुनि इस नगरीका भंग करा दो। वह साधु वहांसे नगरीमें गया नगरीके लोक १२ वर्ष हो जानेसे बहुत व्याकुल हो रहे थे. उस निमत्तीयाका रूप धारण करनेवाले साधुसे लोकोंने पुच्छा कि हे साधु इस नगरीको सुख कब होगा। उत्तर दिया कि यह मुनि सुव्रतस्वामिका स्थुभको गिरा दोगे तब तुमको सुख होगा। मुर्खाभिमानी लोकोंने उस स्थुभको गिरा दीया. तब राजा कोणकने उस नगरीका भंग करना प्रारंभ कर दीया, मुनि अपना फर्ज अदा कर वहांसे चलगया।

यह बात देख चेटकराजा एक कूवाके अन्दर पड आपघात करना शरू कीया था परन्तु भुवनपति देव उसको अपने भुवनमें ले गया बस। चेटकराजाने वहां पर ही अनसन कर देवगति को प्राप्त हो गये।

राजा कोणक निराश हो के चम्पानगरी चला गया यह संसारीक स्थिति है कहा हार, कहां हस्ती, कहां वहलकुमार कहां चेटकराजा, कहा कोणक, कहा पद्मावती रांणी क्रोडो मनुष्यों की हत्या होने पर भी कीस मनुष्यने लाभ उठाया? इस लिये ही महान पुरुषोंने इस संसारका परित्याग कर मोक्षवृत्ति स्वीकार करी है।

चम्पानगरी आनेके बाद कोणक राजाको भगवान वीर प्रभुका दर्शन हुवा और भगवानका उपदेशसे कोणकको इतना तो

तंतर हुवा कि भगवानका पूर्ण भक्त बन गया. उपपातिक सूत्र में ऐसा उल्लेख है कि कोणक राजाको ऐसा नियम था कि जबतक भगवान कहां विराजते हैं उसका निर्णय नही हो वहांतक मुहमें अन्न जलभी नही लेता था. अर्थात् प्रतिदिन भगवानकि खबर मंगवाके ही भोजन करता था। जब भगवान चम्पा नगरी पधारनेथे तब बडा ही आडम्बरसे भगवानको वन्दन करनेको जाता था। इत्यादि पूर्ण भक्तिवान था। वन्दनाधिकारमें जहां तहां कोणक राजाकि औपमा दि जाती है. इसका सविस्तार व्याख्यान उववाइ सूत्रमें है।

अन्तिम [1]अवस्था में कोणक राजा कृतघ्न रत्नोंसे आप चक्रवर्ति हो देश साधन करनेको गया था तमस्प्रभा गुफाके पास जाके दरवाजा खोलनेको दंडरत्नसे धौसाह खोलने लगा, उस वखत देवताओंने कहा कि बारह चक्रवर्ति हो गया है. तुम पीच्छे हटजावो नही तो यहां कोइ उपद्रव होगा. परन्तु भवितव्यताके आधिन हो कोणकने यह बात नही मानी तब अन्दरसे अग्निकि ज्वाला निकली जीससे कोणक वहां ही कालकर छठी तमःप्रभा नरकमें जा पहुंचा।

एक स्थलपर ऐसाभि उल्लेख है कि कोणकका जीव चौदा भव कर मोक्ष जावेगा तत्व केवली गम्यं।

प्रसंगोपात संबंध समाप्तं।

इति श्रीनिरयावलिकासूत्र संक्षिप्त सार समाप्तम्।

[1] कोणक ३६ वर्ष [illegible] इत्यादि वर्णन [illegible]

अथश्री

कप्पवडिंसिया सूत्र.

(दश अध्ययन)

प्रथमाध्ययन—चंम्पा नगरी पुर्णभद्र उद्यान पुर्णभद्रयक्ष कोणक राजा पद्मावती राणी श्रेणक राजाकि काली राणी जिस्के काली कुमार पुत्र इस मयका वर्णन प्रथम अध्ययनसे समझना।

कालीकुमार के प्रभावति राणी जिसको सिंह स्वप्न सूचित पद्मनामका कुमारका जन्म हुवा. माता पिताने बडाही महोत्सव किया. यावत् युवक अवस्था होनेसे आठ राजकन्यावोंके साथ पाणिग्रहन करा दिया. यावत पंचेन्द्रियके सुख भोगवते हुवे, काल निर्गमन कर रहे थे।

भगवान वीर प्रभु अपने शिष्य मंडलके परिवारसे भव्य जीवोंका उद्धार करते हुये चम्पानगरी के पुर्णभद्र उद्यानमें पधारे।

कोणक राजा बडाही उत्सावसे च्यार प्रकारकी सेना ले भगवानको वन्दन करनेको जारहा था. नगर निवासी लोगभी एकत्र मीलके भगवानको वन्दन निमत्त मध्य बजारमें आरहे थे. इस मनुष्यों के वृन्द को पद्मकुमार देखके अपने अनुचरोंसे पुच्छा कि आज चम्पानगरी के अन्दर क्या महोत्सव है? अनुचरोंने उत्तर दीया कि हे स्वामिन् आज भगवान वीर प्रभु पधारे है वास्ते जनसमूह एकत्रहो भगवानको वन्दन करनेको जारहे है। यह सुनके पद्मकुमार भी च्यार अश्वोंके रथपर आरूढ हो भग वानको वन्दन करनेको सर्व लोकोंके साथमें गया भगवानको प्रदिक्षणा दे वन्दना कर अपने अपने योग्य स्थानपर बेठ गये।

भगवान वीरप्रभुने उस विस्तारवाली परिषदाकों विचित्र प्रकारसे धर्मदेशना सुनाइ. मौख्य यह उपदेश दीयाथा कि हे भव्य जीवो! इस घोर संसारके अन्दर परीभ्रमन करते हुवे प्राणीयोंकों मनुष्यजन्मादि सामग्री मीलना दुर्लभ्य है अगर कीसी पुन्योदयसे मील भी जावे तों उसकों सफल करना अति दुर्लभ्य है वास्ते यथाशक्ति व्रत प्रत्याख्यान कर अपनि आत्माकों निर्मल बनाना चाहिये। इत्यादि—

परिषदा वीरवाणीका अमृतपान कर यथाशक्ति त्याग वैराग धारण कर भगवानको वन्दन नमस्कार कर अपने अपने स्थानपर गमन करने लगे।

पद्मकुंमार भगवानकि देशना श्रवणकर परम वैरागको प्राप्त हुवा. उठके भगवानकों वन्दन नमस्कार कर बोलाकि हे भगवान आपने फरमाया वह सत्य है मैं मेरे मातापिताबोंकों पुच्छ आपकि समिप दीक्षा लेउंगा. भगवानने फरमाया "जहा सुखं" जैसे गौतमकुंमरने मातापितावोंसे आज्ञा ले दीक्षा लीयी इसी माफीक पद्मकुमरभी मातापितावोंसे नम्रता पूर्वका आज्ञा प्राप्त करी. मातापितावोंने बडाही महोत्सव कर पद्मकुमारकों भगवानके पास दीक्षा दरादी। पद्म अनगार इर्यासमिति यावत् साधु बन गया. तथा रूपके स्थविरोंके पास विनय भक्ति कर इग्यारा अङ्गका अध्ययन कीया. औरभी अनेक प्रकारकि तपश्चर्या कर अपने शरीरकों खदककी माफक कृष बना दीया. अन्तिम एक मासका अनसन कर समाधि पूर्वक कालकर प्रथम सौधर्म देवलोकमें दोय सागरोपमकि स्थितिवाला [1]देवता हुवा. वह देवतोंके सुखोंका

[1] देवता शय्यामें उत्पन्न होते है उस समय अंगुलके असंख्यातमें भाग प्रमाण [illegible] होती है। अन्तर महुर्तमें आहार पर्याप्ती, शरीर पर्याप्ती, इन्द्रिय पर्याप्ती, श्वासोश्वास पर्याप्ती, भाषा और मनपर्याप्ती [illegible] में बान्धते है वास्ते [illegible]

अनुभवकर महाविदेह क्षेत्रमें उत्तम जाति-कुलमें जन्म धारण कर फीर वहांभी केवलीप्ररूपीत धर्म सेवनकर दीक्षा ग्रहनकर केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जायेगा इति प्रथम अध्ययन समाप्तं।

नं०	कुमारके अध्ययन	माताका नाम	पिताका नाम	देवलोक गये.	दीक्षाकाल
१	पद्म कुमार	पद्मावती	काली कुमार	सौधर्म देवलोक	५ वर्ष
२	महापद्म ,,	महापद्मावती	सुकाली ,,	इशान ,,	५ ,,
३	भद्र ,,	भद्रा	महाकाली ,,	सनत्कुमार ,,	४ ,,
४	सुभद्र ,,	सुभद्रा	कृष्ण ,,	महेन्द्र ,,	४ ,,
५	पद्मभद्र	पद्मभद्रा	सुकृष्ण ,,	ब्रह्म ,,	४ ,,
६	पद्मसेन ,,	पद्मसेना	महाकृष्ण ,,	लान्तक ,,	३ ,,
७	पद्मगुल्म ,,	पद्मगुल्मा	वीरकृष्ण ,,	महाशुक ,,	३ ,,
८	निलनिगु० ,,	निलनिगुल्मा	रामकृष्ण ,,	सहस्र ,,	३ ,,
९	आनन्द ,,	आनन्दा	पितृसेनकृ० ,,	प्राणत ,,	२ ,,
१०	नन्दन ,,	नन्दना	महासेनकृ० ,,	अच्युत	२ ,,

यह दशों कुमार श्रेणक राजाके पोते है भगवान वीर प्रभुकी देशना सुन संसारका त्याग कर भगवानके पास दीक्षा ग्रहण कर अन्तिम एक मासका अनशन कर देवलोकमें गये है। वहांसे सीधे ही महाविदेह क्षेत्रमें मनुष्यभव कर फीर दीक्षा ग्रहन कर कर्मरिपुको जीत केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जायेगा. इति।

इतिश्री कप्पवडिंसीया सूत्र संक्षिप्त सार समाप्तम्।

पाच पर्वांकी अनन्तर महूर्तमें कल्पके पदकम गुरुकाये धारण कर सके. यहां है और स्वयंको उन्नत होनेका अधिकार मात्र वहीपर लगाही समझना।

अथश्री

पुष्फिया सूत्रम्।

—०—

(दश अध्ययन)

(१) प्रथम अध्ययन। एक समयकी बात है कि श्रमण भगवान वीरप्रभु राजगृह नगरके गुणशील उद्यानमें पधारे। राजा श्रेणिकादि पुरवासी लोक भगवानको वन्दन करनेको गये। विद्याधर तथा चार निकायके देव भी भगवानकी अमृतमय देशनाभिलाषी हो वहां पर उपस्थित हुवे थे।

भगवान वीरप्रभु उस बारह प्रकारकी परिषदाको विविध प्रकारका धर्म सुनाया. श्रोतागण धर्मदेशना श्रवण कर त्याग वैराग्य प्रत्याख्यान आदि यथाशक्ति धारण कर स्वस्वस्थान गमन करते हुवे।

उसी समयकी बात है कि च्यार हजार सामानिक देव, सोलाहजार आत्मरक्षक देव, तीन परिषदाके देवों च्यार महत्तरिक देवांगना सपरिवार अन्य भी चन्द्र वैमानवासी देवता देवीयोंके वृन्दमें बेठा हुवा ज्योतीषीयोंका राजा ज्योतीषीयोंका इन्द्र अपना चंद्रवतंस वैमानकी सौधर्मी सभामें अनेक प्रकारके गीत ग्यान वाजींत्र तथा नाटकादि देव संबन्धी ऋद्धिको भोगव रहा था।

उस समय चन्द्र अवधिज्ञानसे इस जम्बुद्वीपके भरतक्षेत्रमें राजगृह नगरके गुणशीलोद्यानमें भगवान वीरप्रभुको बिराजमान देखके आत्मप्रदेशोंमें बडाही हर्षित हुवा, [illegible] जिस दिशामें भगवान विराजते थे उस दिशामें [illegible]

सामने जाके भगवानको वन्दन नमस्कार कर बोला कि हे भग-
वान आप वहां पर विराजमान हैं मैं यहां पर बैठा आपको
वन्दन करता हूं. आप मेरी वन्दन स्वीकृत करावें। यहां पर सब
अधिकार सूर्याभ देवताकी माफीक कहना। कारण देव आग-
मनके अधिकारमें सविस्तर अधिकार रायप्पसेणी सूत्र सूर्याभा-
धिकारमें ही कीया है. इतना विशेष है कि सुस्वर नामकी घंटा
बजाइ थी वैक्रयसे एक हजार योजन लंबा चौडा साढा बासठ
योजन ऊंचा वैमान बनाया था. पचवीस योजनकी ऊंची महेन्द्र
ध्वजा थी. इत्यादि बहुतसे देवी देवताओंके वृन्दसे भगवानको
वन्दन करनेको आया. वन्दन नमस्कार कर देशना सुनी. फिर
सूर्याभकी माफीक गौतमादि मुनियोंको भक्तिपूर्वक बत्तीस प्रका-
रका नाटक बतलाके भगवानको वन्दन नमस्कार कर अपने
स्थान जानेको गमन किया।

भगवानसे गौतमस्वामिने प्रश्न किया कि हे करुणासिन्धु
यह चन्द्रमा इतने रूप कहांसे बनाये. कहां प्रवेश कर दीये।

प्रभुने उत्तर दिया कि हे गौतम! जैसे कुडागरशाल (गुफाघर)
होती है उसके अन्दर मनुष्य प्रवेश भी हो सक्ता है और निकल
भी सक्ता है इसी माफीक देवोंको भी वैक्रिय लब्धि है जिससे
वैक्रिय शरीरसे अनेक रूप बनाय भि सके और पीछा प्रवेश भी
कर सके।

पुनः गौतमस्वामिने प्रश्न किया कि हे दयालु! इस चन्द्रने
पूर्वभवमें इतना क्या पुन्य किया था कि जिसके जरिये यह देव-
ऋद्धि प्राप्त हुइ है!

भगवानने उत्तर दिया कि हे गौतम! सुन। इस जम्बुद्वीप-
का भरतक्षेत्रके अन्दर सावत्थी नामकी नगरी थी वहां पर सब

गौतमस्वामिने प्रश्न किया कि हे भगवान! चन्द्रदेवकी स्थिति कितनी है।

हे गौतम! एक पल्योपम और एकलक्ष वर्षकि स्थिति चन्द्रकी है।

पुन प्रश्न किया कि हे भगवान! यह चन्द्रदेव ज्योतिषीयों का इन्द्र यहांसे भव स्थिति आयुष्य क्षय होने पर कहां जावेगा?

हे गौतम! यहांसे आयुष्य क्षय कर चन्द्रदेव महाविदेह क्षेत्रमें उत्तम जाति-कुलके अन्दर जन्म धारण करेगा। भोगविलाससे विरक्त हो केवली प्ररूपीत धर्म श्रवण कर संसार त्याग कर दीक्षा ग्रहण करेगा। च्यार घनघाती कर्म क्षय कर केवलज्ञान प्राप्त कर सिधा ही मोक्ष जायेगा। इति प्रथम अध्ययन समाप्तम्।

(२) दुसरा अध्ययनमें, ज्योतिषीयोंका इन्द्र सूर्यका अधिकार है चन्द्रकि माफीक सूर्यभि भगवानको वन्दन करनेको आयाथा बत्तीस प्रकारका नाटक कियाथा, गौतमस्वामिको पृच्छा भगवानका उत्तर पूर्ववत् परन्तु सूर्य पूर्वभवमें सावत्थी नगरीका सुप्रतिष्ट नामका गाथापति था। पार्श्वप्रभुके पास दीक्षा, इग्यारा अंगका ज्ञान, बहुत वर्ष दीक्षा पाली, अन्तिम आधा मासका अनसन, विराधि भावसे कालकर सूर्य हुवा है एक पल्योपम एक हजार वर्षकि स्थिति. यहांसे चवके महाविदेह क्षेत्रमें चन्द्रकि माफीक केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जावेगा इति द्वितीयाध्ययन समाप्तम् ॥

(३) तीसरा अध्ययन। भगवान वीर प्रभु राजगृह नगर गुणशीला चैत्यके अन्दर पधारे राजादि वन्दनको गया।

चन्द्रकि माफीक महाशुक्र नामका ग्रह देवता भगवानको वन्दन करने को आया यावत् बत्तीस प्रकारका नाटक कर वापिस चला गया।

गौतमस्वामिने पुर्वभवको पृच्छा करी

भगवानने उत्तर फरमाया कि हे गौतम ! इस जम्बुद्विप के भरत क्षेत्रमें बनारस नामकि नगरी थी। उस नगरी के अन्दर बडाही धनाढय च्यार वेद इतिहास पुराणका ज्ञाता सोमल नामका ब्राह्मण बसता था. वह अपने ब्राह्मणोंका धर्म में बडाही श्रद्धावन्त था।

उसी समय पार्श्व प्रभुका पधारणा बनारसी नगरी के उद्यानमें हुवा था. च्यार प्रकारके देवता. विद्याधर और राजादि भगवानको वन्दन करनेको आयाथा।

भगवानके आगमन कि वार्ता सोमल ब्राह्मणने सुनके विचारा कि पार्श्वप्रभु यहांपर पधारे हैं तो चलके अपने दीलके अन्दर जो जो शक है वह प्रश्न पुच्छे। एसा इरादा कर आप भगवानके पास गया (जैसे कि भगवतीसूत्रमें सोमल ब्राह्मण वीरप्रभुके पास गया था) परन्तु इतना विशेष है कि इसके साथ कोइ शिष्य नहीं था।

सोमल ब्राह्मण पार्श्वनाथ प्रभुके पास गया था: परन्तु वन्दन-नमस्कार नहीं करता हुवा प्रश्न किया।

हे भगवान् ! आपके यात्रा है ? ज्रपनि है ? अव्याबाध है ? फासुक विहार है।

भगवानने उत्तर दिया हां सोमल ! हमारे यात्रा भी है. ज्रपनि भि है. अव्याबाध भि है और फासुक विहार भी है।

सोमलने कहा कि कोनसे कोनसे है ?

भगवानने कहा कि हे सोमल—

(१) हमारे यात्रा—जो कि तप नियम संयम स्वध्याय ध्यान आवश्यकादि के अन्दर योगोंका व्यापार यत्न पुर्वक करना यह यात्रा है। यहां आदि शब्द में औरभी बोल समावेश हो सक्ते हैं।

(२) जपनि हमारे दोय प्रकारकि है (१) इन्द्रियापेक्षा (२) नोइन्द्रियापेक्षा। जिसमें इन्द्रियापेक्षाका पांच भेद है (१) श्रोत्रेन्द्रिय (२) चक्षुइन्द्रिय (३) घ्राणेन्द्रिय (४) रसेन्द्रिय (५) स्पर्शेन्द्रिय यह पांचों इन्द्रिय स्व स्व विषयमें प्रवृति करती हुइको ज्ञानके जरिये अपने कब्जे कर लेना इसको इन्द्रिय जपनि कहते है, और क्रोध मान माया लोभ उच्छेद हो गया है उसकि उदिरणा नही होती है अर्थात् इस इन्द्रिय और कषाय रुपी योधोंको हम जीतलिये है।

(३) अव्याबाध ? जो वायु पित कफ सन्निपात आदि सर्व रोग क्षय तथा उपसम है किन्तु उदिरणा नहीं है।

(४) फासुक विहार। जहां आराम उद्यान देवकुल सभा पाणी वगेरे के पर्व, जहां स्त्रि नपुंसक पशु आदि नहीं वसी वस्ती हो वह हमारे फासुक विहार है।

(प्र०) हे भगवान ? सरसव आपके भक्षण करने योग्य है या अभक्ष है?

(उ०) हे सोमल ? सरसव भक्षभी है तथा अभक्ष भी है।

(प्र०) हे भगवान ! क्या कारण है ?

(उ०) हे सोमल ? सोमलको विशेष प्रतिबोध के लिये कहते है कि तुमारे ब्राह्मणोंके न्यायशास्त्रमें सरसव दो प्रकारके है (१) मित्र सरसवा (२) धान्य सरसवा। जिसमें मित्र सरसवाका तीन भेद है (१) साथमें जन्मा (२) साथमें वृद्धिहुइ (३) साथमें धुला-दिमें खेलना। यह तीन हमारे श्रमण निग्रन्थोंका अभक्ष है और

जो धान्य सरसव है वह दोय प्रकारके है (१) शस्त्र लगा हुवा और अशस्त्रका । जिसमें अचित हो जाता है। (२) शस्त्र नहीं लगा-हो (सचित) वह हमारे श्र० नि० अभक्ष है। जो शस्त्र लगाहुवा है उसका दो भेद है (१) एषणीक येयानाम दोषरहीत (२) अने-षणीक. जो अनेषणीक है वह हमारे श्र० नि० अभक्ष है। जो एष-णीक है उसका दोय भेद है (१) याचीहुइ (२) अयाचीहुइ. जो अयाचीहुइ है वह श्र० नि० अभक्ष है। जो याचीहुइ है उसका दो भेद है (१) याचना करनेपर भी दातार देवे वह लद्धिया और न-देवे वह अलद्धिया. जिसमें अलद्धिया तो श्र० नि० अभक्ष है और लद्धिया है वह भक्ष है इस वास्ते हे सोमल सरसव भक्षभि है अभक्षभि है।

(प्र०) हे भगवान ! मासा आपको भक्ष है या अभक्ष है ?

(उ०) हे सोमल ! स्यात् भक्ष भी है स्यात् अभक्ष भी है।

(प्र०) क्या कारण है एसा होनेका ?

(उ०) हे सोमल ! तुमारे ब्राह्मणोंके न्याय ग्रंथमें मासा दोय प्रकारके है (१) द्रव्यमासा (२) कालमासा, जिसमें कालमासा तो श्रावणमासा से यावत् आसाढमासा तक एवं बारहमासा श्र० नि० अभक्ष है और जो द्रव्यमासा है जिस्का दोय भेद है (१) अर्थ-मासा (२) धान्यमासा. अर्थमासा तो जैसे सुवर्ण चांदीके साथ तोल किया जाता है वह श्र० नि० अभक्ष है और धान्यमासा (उडद) सरसवकी माफीक जो लद्धिया है वह भक्ष है। इसवास्ते हे सो-मल मासा भक्ष भी है अभक्ष भी है।

(प्र०) हे भगवान ! कुलत्थ भक्ष है या अभक्ष है।

(उ०) हे सोमल ! कुलत्थ भक्ष भी है अभक्ष भि है।

(प्र०) हे भगवान ! एसा होनेका क्या कारण है ?

(उ०) हे सोमल ! तुमारे ब्राह्मणोंके न्यायशास्त्रमें कुलत्थ दोय प्रकारका कहा है (१) स्त्रिकुलत्थ (२) धान्य कुलत्थ । जिस्में स्त्रिकुलत्थके तीन भेद है। कुलकन्या कुलवहु, कुलमाता, यह श्रमण निग्रन्थोंको अभक्ष है और धान्यकुलत्थ जो सरसव धान्यकि माफक जो लद्धिया है वह भक्ष है शेष अभक्ष है इसवास्ते हे सोमल कुलत्थ भक्ष भी है तथा अभक्ष भी है।

(प्र०) हे भगवान ! आप एकाहो ? दोयहो ? अक्षयहो ? अवेद हो ? अवस्थितहो ? अनेक भावभूतहो ?

(उ०) हां सोमल ! मैं एक भिहूं यावत अनेक० ।

(प्र०) हे भगवान ! एसा होनेका क्या कारण है ।

(उ०) हे सोमल ! द्रव्यापेक्षामें एक हू। ज्ञानदर्शनापेक्षामें दोय हूं. आत्मप्रदेशापेक्षामें अक्षय, अवेद, अवस्थित हूं० और उपयोग अपेक्षामें अनेक भावभूत हूं, कारण उपयोग लोकालोक व्याप्त है वास्ते हे सोमल एक भी मैं हु यावत् अनेक भावभूत भी मैं हू.

इस प्रश्नोंका उत्तर श्रवणकर सोमल ब्राह्मण प्रतिबोधीत होगया। भगवान को वन्दन नमस्कार कर बोला कि हे प्रभु ! मैं आपकि वाणीका प्यासा हूं वास्ते कृपाकर मुझे धर्म सुनावों

भगवानने सोमलको विचित्र प्रकारका धर्म सुनाया सोमल धर्म श्रवणकर बोलाकि हे भगवान ! धन्य है आपके पास समारीक उपाधियों छोड दीक्षा लेते हैं उन्हको ।

हे भगवान । मैं आपके पास दीक्षा लेनेमें तो असमर्थ हूं किन्तु मैं आपकेपास श्रावकव्रत ग्रहन करूंगा। भगवानने फरमाया कि " जहासुख " सोमल ब्राह्मण परमेश्वर पार्श्वनाथ जीके

भक्ति भावसमेत प्रदक्षिणाकर भगवानको वन्दन नमस्कारकर अपने स्थानपर गमन करता हुवा।

तत्पश्चात् पार्श्वप्रभु श्री बनारसी नगरीके उद्यानसे अन्य जनपद देशमें विहार कीया

भगवान पार्श्वप्रभु विहार करनेके बाद में कीतनेही समय बनारसी नगरीमें साधुवोंका आगमन नही होनेसे सोमल ब्राह्मणकी श्रद्धा शीतल होती रहा, आखिर यह नतीजा हुवाकि पूर्वकी मांफिक (सम्यक्त्वका त्यागकर) मिथ्यात्वी बन गया।

एक समय कि बात है कि सोमलको रात्रीके वखत कुटम्ब-ध्यान करते हुवे एसा विचार हुवा कि मैं इस बनारसी नग-रीके अन्दर पवित्र ब्राह्मणकुलमें जन्म लिया है विवाह-शादी करी है मैंने पुत्रभि हुवा है मैं वेद पुराणादिका पठनपाठनभि कीया है अश्वमेधादि पशु होमके यज्ञभि कराया है। वृद्ध ब्राह्मणों-को दक्षणादिके पादसेवन भि कीया है इत्यादि बहुतसे अच्छे अच्छे कार्य किया है अबीभि सूर्योदय होनेपर इस बनारसी नगरीके बाहार आम्रादि अनेक जातिके वृक्ष तथा लतावों पुष्प फलादि-वाला सुन्दर बगेचा बनाके तापसव्रतकरू। एसा विचारकर सू-र्योदय होनेपर एसाही कीया अर्थात् बगेचा तैयार करवायके उसकी वृद्धिके लिये संरक्षण करते हुवे वह बगेचा स्वल्पही सम-यमें वृक्ष लता पुष्प फलकर अच्छा मनोहर बनगया। जिससे सोमल ब्राह्मणकि दुनियोंमें तारीफ होने लग गइ। तत्पश्चात सोम-ल ब्राह्मण एक समय रात्रीमें कुटम्ब चिन्तवन करताहुवाको एसा वि-चार हुवा कि मैंने बहुतसे अच्छे अच्छे काम करलिया है यावत् जन्मसे लेके बगेचे तक। अब मुझे उचित है कि कल सूर्योदय होतेही बहुतसे तापसों संबन्धी भंडोपकरण बनवायके बहुतसे प्रकारका असनादि भोजन बनवाके न्यातजातके लोकोंको भो-

जनप्रमाद करवायके मेरा जेष्टपुत्रको गृहभार सुप्रतकरके । ताप सों संयन्धी, भंडोमत्त कारण, वनवासकर जो गंगा नदीपर रहेने-वाले तापस है उनके नाम (१) होमकरनेवाले (२) वस्त्र धारण करनेवाले (३) भूमि शयन करनेवाले (४) यज्ञ करनेवाले (५) ज-नोइ धारण करनेवाले (६) श्रद्धावान (७) ब्रह्मचारी (८) लोहेके उपकरणवाले (९) एक कमंडल रखनेवाले १० फलाहार (११) एकवार पाणीमें पेसनिकल भोजन करे (१२) एवं बहुतवार० (१३) स्वल्पकाल पाणीमे रहै १४) दीर्घकाल रहै (१५) मटी घसके स्नान करे (१६) गंगाके दक्षिण तटपर रहेनेवाले (१७) एवं उत्तर तटपर रहेनेवाले (१८) संख वाजाके भोजन करे १९) गृहस्थके कुलमे जाके भोजन करे (२० मृगा मारके उसका भोजन करे (२१) हस्ती मारके उसका भोजन करे २२) उर्ध्वदंड रखनेवाले २३) दिशापोषण करनेवाले (२४) पाणीमे वसनेवाले २५ बील गुफा-वासी (२६) वृक्षनिचे वसनेवाले (२७ वल्कलके वस्त्र वृक्षकि छा-लके वस्त्र धारण करनेवाले (२८) अंबु भक्षणकरे २९ वायु भक्षण करे (३०) सेवाल भक्षण करे (३१) मूल कन्द त्वचा पत्र पुष्प फल वीजका भक्षण करनेवाले तथा सडे हूवे गिरेहुवे एसा कन्द-मूल फल पुष्पादि भक्षण करनेवाले ३२) जलाभिषेक करनेवाले (३३) दंत कावड धारण करनेवाले ३४ आतापना लेनेवाले (३५) पंचाग्नि तापनेवाले (३६) इंगाले कोलसे कष्टशय्या इत्यादि जो कष्ट करनेवाले तापस है जिस्के अन्दर जो दिशापोषण कर नेवाले तापस है उन्होंके पास मेरे तापसी दीक्षा लेना और सा-थमे एसा अभिग्रहभि करना, कि कल्पे मुझे जावजीव तक सूर्य सन्मुख आतापना लेनाहूवा छठ छठ पारणा करना आरतरा रहा-त, पारणाके दिन स्यागीतके क्रम.सर दिशायोंकि मालक देवोंतस है उन्होंका पोषण करना जेसे जिसरोज छठका पारणा आवे उस

रोज आतापनाकि भूमिसे निचा उतरना वागलवस्त्र पहेरके अपनि कुटी (झुपडी) से मांसकि कावड लेना पुर्वदिशोके मालक सोमनामके दिगपालकि आज्ञा लेना कि हे देव ! यह सोमल महाऋषि अगर तुमारी दिशासे जोकुच्छ कन्दमूलादि ग्रहन करे तो आज्ञा है । एसा कहके पुर्वदिशामें जाके वह कन्दमूलादिसे कावड भरके अपनि कुटीपे आना कावड वहांपर रख डाभका तृण उसके उपर रखे । एक डाभका तृण लेके गंगानदीपर जाना वहांपर मलमज्जन. जलाभिषेक. जलक्रीडाकर परमसुचि होके. जलकलस भर. उसपर डाभतृण रखके पीच्छा अपनि कुटीपर आना। वहांपर एक वेलु रेतकी वेदिका बनाना. अरण्यके काष्टसे अग्नि प्रज्वलित करना समाधिके लकडी प्रक्षेप करना अग्निके दक्षिणपासे दंड-कमंडलादि सात उपकरण रखना, फीर आहुती देताहुवा घृत मधु तंदुल आदिका होम करना. इत्यादि प्रार्थना करताहुवा बलीदान देनेके बाद वह कन्दमूलादिका भोजन करना एसा विचार सोमलने रात्री समय किया. जेसा विचार कियाथा वेसाहि सुर्योदय होतेही आप तापसी दीक्षालेली छठ छठ पारना प्रारंभ करदीया । प्रथम छठके पारना तब पुर्व बनाइहुइ कियाकर फीर छठका नियमकर आतापना लेने लगगया, जब दुसरा छठका पारना आया तब वहही किया करी परन्तु वह दक्षिणदिशा यमलोकपाल कि आज्ञा लीथी । इसी मापीक तीसरे पारणे परन्तु पश्चिमदिशा वरून लोकपालकी आज्ञा और चोथे पारणे उत्तरदिशा कुबेरदिगपालकि आज्ञा लीथी. इसीमाफीक पुर्वादि च्यारो दिशोमें क्रमःसर पारना करताहुवा. सोमल माहनऋषि विहार करता था ।

एक समयकि बात है कि सोमल माहनऋषि रात्री समयमें अनित्य जागृना करते हुवेको एसा विचार उत्पन्न हुवा कि मैं बनारसी नगरीके अच्छे ब्राह्मनकुलमें जन्म पाके सच अच्छे काम

कीया है यावत् तापसी दीक्षा लेली है तो अय मुझे सूर्योदय हो-
तेही पूर्वसंगातीया तापस तथा पीच्छेमें संगती करनेवाला ताप-
स ओरभि आश्रमस्थितोंको पुच्छके वागलवस्त्र; थांमकि कावड
लेके, काष्टकि मुहपत्ति मुहपर बन्धके उत्तरदिशाकि तर्फ मुह कर-
के प्रस्थान करू एसा विचारकरा।

सूर्योदय होतेही अपने रात्रीमें कियाहुवा विचारमाफीक
वागलवस्त्र पहेरके थांमकी कावड लेके. काष्टकि मुहपतिसे मुहब-
न्धके उत्तरदीशा सन्मुख मुहकरके सोमल महाणऋषि चलना
प्रारंभकीया उस समय औरभि अभिग्रह करलिया कि चलते
चलते, जल आवे, स्थल आवे, पर्वत आवे, खाडआवे, दरी आवे
विषमस्थान आवे अर्थात कोइ प्रकारका उपद्रव आवे तोभी.
पीच्छा नही हटना. एसा अभिग्रहकर चला जाते जाते चरम प-
होरहुवा उससमय अपने नियमानुस्सार अशोकवृक्षके निचे एक
वेलुरेतीकी वेदका रची उसपर कावडधरी डाबतृण रखा. आप
गंगानदीमें जाके पूर्ववत् जलमज्जन जलक्रीडा करी फीर उस अ-
शोकवृक्षके नीचे आके काष्टकि मुहपतिसे मुहबन्ध लगाके चूप-
चाप बेटगया।

आदी रात्रीके समय सोमल ऋषिके पास एक देवता आया.
वह देवता सोमलऋषिसतें एसा बोलताहुवा। भो ' सोमल माह-
णऋषि ! तेरी प्रवृज्या (अर्थात् यह तापसी दीक्षा) है वह दुष्ट प्रवृ-
ज्या है. सोमलने सुना परन्तु कुच्छभी उत्तर न दीया. मौन कर
ली। देवताने दुसरी–तीसरीवार कहा परन्तु सोमल इस बातपर
ध्यान नही दीया। तब देव अपने स्थान चला गया.

सूर्योदय होतेही सोमल वागलके वस्त्र पहेर कावडादि उप-
करण ले काष्टकी मुहपतिसे मुहबन्ध उत्तरदिशाकों स्वीकारकर
चलना प्रारंभ करदीया, चलते चलते पीच्छले पहोर सीतावनवृक्ष-

के निचे पूर्वोक्त रीतो निवास कीया. देवता आया पूर्ववत् दोय ती-नवार कहके अपने स्थान चलागया. एवं तीनरेदिन अशोकवृक्षके निचे वहांभी देवताने दोतीनवार कहा. चौथेदिन. वडवृक्षके निचे निवास किया वहांभी देव आया दोतीन दफे कहा. परन्तु सो-मलतो मौनमेंही रहा. देव अपने स्थान चला गया । पांचवेदिन उम्बरवृक्षके निचे सोमलने निवास कीया सब क्रिया पहेले दिन के माफीक करी । रात्री समय देवता आया और बोलाकि हे सोमल ! तेरी प्रवृज्या है सो दुष्ट प्रवृज्या है एसा दोय तीनवार कहा. इसपर सोमलमहात्मऋषि विचार कियाकि. यह कौन है और किसवास्ते मेरी उत्तम तापसी प्रवृज्याको दुष्ट बतलाता है ? वास्ते मुझे पुच्छना चाहिये. सोमलः उस देवसे पुच्छाकि तुम मेरी उत्तम प्रवृज्याको दुष्ट क्यों कहते हो ! उत्तरमें देवता जबाब दियाकि हे सोमल. पेस्तर तुमने पार्श्वनाथस्वामिके समिप श्रा-वकके व्रत धारण कियाथा. बाद में साधुवोंके न आनेसे मिथ्या-त्वी लोकोंकि संगतकर मिथ्यात्वी बन यावत् यह तापसी दीक्षा से अज्ञान कष्टकर रहा है तो इसमें तुमकोक्या फायदा है तु. साधु नाम धरावे. अनन्तजीवों संयुक्त कन्द मूलादिका भक्षन कर-तेहैं. अग्नि जलके आरंभ करतेहैं. वास्ते तुमारी यह अज्ञान-मय प्रवृज्या दुष्टप्रवृज्या है ।

सोमल देवताका वचन सुनके बोलाकि अब मेरी प्रवृज्या कैसे अच्छी हो सकता है, अर्थात् मेरा आत्मकल्याण कैसे हो-सकता है ।

देवने कहा कि हे सोमल अगर तुं तेरा आत्मकल्याण करना चाहता है तो जो पूर्व पार्श्वप्रभुके पास श्रावकके बारह व्रत धारन किये थे. उसको अबी भि पालन करो और इस दुष्ट कर्तव्यको

छोड दे. तब तुमारी सुन्दर प्रवृज्या हो सक्ती है। देवने अपने ज्ञानसे सामलके अच्छे प्रणाम जान वन्दन नमस्कारकर निज स्थानको गमन करता हुवा।

सोमलने पूर्व ग्रहन किये हुवे श्रावकव्रतोंको पुनः स्वीकारकर अपनि श्रद्धाको मजबुत बनाके पार्श्वप्रभुसे ग्रहन किया हुवा तत्त्वज्ञानमे रमणता करताहुवा विचरने लगा।

सोमल श्रावक बहुतसे चोत्थ छठ अठम अर्धमास मासक्षमणकी तपश्चर्या करता हुवा, बहुत कालतक श्रावकव्रत पालता हुवा अन्तिम आधा मास (१५ दिन) का अनसन किया परन्तु पहले जो मिथ्यात्वकी क्रिया करीथी उसकी आलोचना न करी, प्रायश्चित नलिया. विराधिक अवस्थामें कालकर महाशुक्र वैमान उत्पात सभाकि देवशय्यामें अंगुलके असंख्यात भागकि अवगाहनामें उत्पन्न हुवा, अन्तरमहुर्तमें पांचों पर्याप्तीको पूर्णकर युवक वय धारण करता हुवा देवभवका अनुभव करनेलगा।

हे गौतम ! यह महाशुक्र नामका ग्रह देवको जो ऋद्धि ज्योती प्राप्ती मीली है यावत् उपभोगमें आइ है इसका मूल कारण पूर्व भवमें वीतरागकि आज्ञा संयुक्त श्रावकव्रत पालाथा। यद्यपि श्रावककी जघन्य सौधर्म देवलोक, उत्कृष्ट अच्युत देवलोककि गति है परन्तु सामलने आलोचना न करनेसे ज्योतीषी देवो में उत्पन्न हुवा है। परन्तु यहांसे चवके महाविदेह क्षेत्रमें दृढपइन्न कि माफीक मोक्ष जावेगा इति तीसराध्ययन समाप्तम्।

(४) अध्ययन चौथा—राजग्रहनगर के गुणशीलोद्यानमें भगवान वीरप्रभुका आगमन हुवा, राजा श्रेणकादि पौरजन भगवानको वन्दन करनेको गये।

उस समय च्यार हजार सामानिकदेव सोला हजार आत्म-

रक्षकदेव. तीन परिषदाके देव, च्यार महत्तरीक देवीयों और भि बहुपुत्तीया वैमानवासी देव देवीयोंके वृन्दसे परिवृत बहुपुत्तीया नामकि देवी. सौधर्म देवलोकके बहुपुत्तीय वैमानकी सौधर्मी सभाके अन्दर नाना प्रकारके गीतग्यान नाटकादि देव-संबन्धी सुख भोगव रही थी. अन्यदा अवधिज्ञानसे आप जम्बुद्विपके भरतक्षेत्र राजग्रहनगरका गुणशीलोद्यानमें भगवान वीरप्रभुको विराजमान देख. हर्ष-संतोष को प्राप्त हो सिंहासनसे उतर सात आठ कदम सन्मुख जाके वन्दन नमस्कार कर बोली कि. हे भगवान ! आप यहांपर विराजते है. मैं यहांपर उपस्थित हो आपको वन्दन करती हुं आप सर्वज्ञ हैं मेरी वन्दन स्वीकार करावे ।

बहुपुत्तीयादेवीने भगवन्तको वंदनकी तैयारी जैसे सुरियाभदेवने करीथी इसी मार्फीक करी । अपने अनुचर देवोंको आज्ञा दि कि तुम भगवानके पास जाओ हमारा नाम गौत्र सुनाके वन्दन नमस्कार करके एक जोजन परिमाणका मंडला तैयार करो. जिसमें साफकर सुगन्धी जल पुष्प धूप आदिसे देव आने योग्य बनावो. देव आज्ञा स्वीकारकर वहां गये और कहनेके मार्फीक सब कार्यकर वापीस आके आज्ञा सुप्रत कर दी.

बहुपुत्तीयादेवी एकहजार जोजनका वैमान बनायके अपने सब परिवारवाले देवता देवोंयोंको साथ ले भगवानके पास आ. भगवानको वन्दन नमस्कारकर सेवा करने लगी.

भगवानने उस बारह प्रकारकी परिषदाको विचित्र प्रकारका धर्म सुनाया । देशना सुन लोकोंने यथाशक्ति प्रत्याख्यान कर अपने अपने स्थान जानेकी तैयारी करी ।

बहुपुत्तीयादेवी भगवानसे धर्म सुन भगवानको वन्दन नम-

स्कार कर बोली कि हे भगवान ! आप सर्वज्ञ हो मेरी भक्तिको समय समय जानते हो परन्तु गौतमादि छद्मस्थ मुनियोंको हम हमारी भक्तिपूर्वक बत्तीस प्रकारका नाटक बतलायेगी. भगवानने मौन रखीथी।

भगवानने निषेध न करनेसे बहुपुत्तीयादेवी एकान्त जाके वैक्रिय समुद्घातकर जीमणी भूजासे एकसो आठ देवकुमार डाबी भुजासे एकसो आठ देवकुमारी और भी बालक रूपवाले अनेक देवदेवी वैक्रिय बनाये तथा ४९ जातिके वाजींत्र और उन्होंके बजानेवाला देवदेवी बनाके गौतमादि मुनियोंके आगे बत्तीस प्रकारका नाटककर अपना भक्तिभाव दर्शाया. तत्पश्चात् अपनी सर्व ऋद्धिको शरीरमें प्रवेशकर भगवानको वन्दन नमस्कारकर अपने स्थान गमन करती हुइ।

गौतमस्वामिने प्रश्न किया कि हे भगवान ! यह बहुपुत्तीयादेवी इतनि ऋद्धि कहांसे निकाली और कहां प्रवेश करी।

भगवानने उत्तर दिया कि हे गौतम ! यहां वैक्रिय शरीरका महत्व है कि जैसे कुडागशालामें मनुष्य प्रवेश भी करसक्ते है और निकल भी सक्ते हैं। यह दृष्टान्त रायपसेनीसूत्रमें सविस्तार कहा गया है।

गौतमस्वामीने औरभी प्रश्न किया कि हे करुणासिन्धु ! इस बहुपुत्तीयादेवीने पुर्व भवमें एसा क्या पुन्य उपार्जन कियाथा कि जिस्के जरिये इतनि ऋद्धि प्राप्त हुइ है।

भगवानने फरमाया कि हे गौतम ! इस जम्बुद्विपके भरतक्षेत्रमें बनारसी नगरीथी, उस नगरीके बाहार आम्रशाल नामका उद्यान था, बनारसी नगरीके अन्दर भद्र नामका एक बडाही धनाढ्य सेठ (सार्थवाह) निवास करता था, उस भद्र सेठके सुभद्रा नाम-

हमलोग तो मोक्षमार्ग साधन करनेके लिये केवली प्ररूपीत धर्म सुनानेका व्यापार करते हैं। सुभद्राने कहा कि खेर! आपना धर्म ही सुनाइये।

तब साध्वियोंने उस पुत्रपीपासी सुभद्राको बडे बडे धर्म सुनाना प्रारंभ किया हे सुभद्रा! यह संसार असार है एकेक जीव जगतके सब जीवोंके साथ माताका भव. पिताका भव. पुत्रका भव. पुत्रीका भव इत्यादि अनन्ती अनन्तीवार संबन्ध कीया है अनन्तीवार देवतावोंकी ऋद्धि भोगवी है अनन्तीवार नरक निगोदका दुःख भी सहन किया है. परन्तु वीतरागका धर्म जिस जीवोंने अंगीकार नही कीया हैं यह जीव भविष्यके लिये ही इस संसारमें परिभ्रमन करता ही रेहगा. वास्ते हे सुभद्रा! तुं इस संसारको अनित्य–असार समज वीतरागके धर्मको स्वीकार करता जीससे तेरा कल्याण हो इत्यादि।

यह शान्ति रसमय देशना सुन सुभद्रा हर्ष-संतोपको प्राप्त हो बोली कि हे आर्य! आपने आज मुझे यह अपूर्व धर्म सुनाके अच्छी कृतार्थ करी है। हे आर्य! इतना तो मुझे विचार हुवा है कि जो प्राणी इस संसारके अन्दर दुःखी है, तृष्णादि नदीमें डूब रहे है यह सब मोहनिय कर्मकाही फल है। हे महाराज! आपका वचनमें श्रद्धा हैं मुझे प्रतित आइ है मेरे अन्तरआत्मामें रूची हुइ है धन्य है आपके पास दीक्षा लेते है। मैं इस वातमें तो असमर्थ हुं परन्तु आपके पास मैं श्रावकधर्मको स्वीकार करुंगी।

साध्वियोंने कहा कि हे बहन! सुखहो एसा करो परन्तु शुभकार्यमें विलम्ब करना ठीक नहीं है। इसपर सुभद्रा सेठाणीने श्रावकके बारह व्रतको यथा इच्छा मर्यादकर धारण करलिया।

सुभद्राको श्रावकव्रत पालन करते कितनाएक काल निर्ग-

मन होनेसे यह भावना उत्पन्न हुइ कि मैं इतने काल मेरे पतिके साथ भोग भोगवनेपर मेरे एकभी बालक न हुवा तो अब मुझे साध्वीजीके पास दीक्षा लेनाही ठीक है । एसा विचारकर अपने पति भद्रसेठसे पुच्छा कि मेरा विचार दीक्षालेनेका है आप मुझे आज्ञा दीरावे.

भद्रसेठने कहा हे सेठाणी! दीक्षाका काम वडाहि कठिन है तुम हालमें मेरे साथ भोग भोगवो फीर भुक्तभोगी होनेपर दीक्षा लेना। इत्यादि वहुत समझाइ परन्तु हठ करना स्त्रियोंके अन्दर एक स्वाभाविक गुण होताहै । वास्ते अपने पतिकी एकभी बातको न मानि. तब भद्रसेठ दीक्षाका अच्छा मोहत्सवकर हजार पुरुष उठावे एसी शीबिकाके अन्दर बैठाके बडेही मोहत्सवके साथ साध्वियोंके उपासरे जाके अपनी इष्ट भार्याको साध्वियोंकों शिष्यणीरूप भिक्षा अर्पण करदी अर्थात् सुभद्रा सेठाणी सुव्रतासाध्विजीके पास दीक्षा लेली । सुभद्राने पहले भी कुच्छ ज्ञान ध्यान नही कीया था अब भी ज्ञान ध्यान कुछ भी नही केवल पुत्रके दुःखके मारी. दुःखगर्भित वैरागसे दीक्षा ली थी पेस्तर एक स्वघरमें ही निवास करती थी अब तो अनेक श्रावक श्राविकावोंका घरोंमें गमनागमन करनेका अवसर प्राप्त हो गया था ।

सुभद्रासाध्वि आहारपाणी निमित्त गृहस्थ लोगोंके घरोंमें जाती है वहां गृहस्थोंके लडके लडकियोंको देख अपना स्नेहभावसे उनको अपने उपासरेमें एकत्र करती है फीर उस बच्चोंके लिये वहुतसा पाणी स्नान करानेको अलताका रंग उस बच्चोंके हाथपग रंगनेको. दुध दहीं खांड खाजा आदि अनेक पदार्थ उस बच्चोंके खीलानेके लिये तथा अनेक खेलखीलुने उस बच्चोंको खेलनेके लिये यह सब गृहस्थीयोंके यहांसे याचना करलाना प्रारंभ करदीया । अर्थात् सुभद्रासाध्वि उस गृहस्थोंके लडके लड-

उस धातिकर्मके कार्यकी आलोचना न करतो हुइ विराधिभावमें काल्कर सौधर्म देवलोकके बहुपुत्तीया वैमानमें बहुपुत्तीया देवी-पणे उत्पन्न हुइ है यहांपर च्यार पल्योपमकी स्थिति है.

हे भगवान! देवतावोंमें पुत्रपुत्री तो नही होते है फीर इस देवीका नाम बहुपुत्तीया कैसे हुआ?

हे गौतम! यह देवी शक्रेन्द्रकी आज्ञाधारक है। जिस वखत शक्रेन्द्र इस देवीको बोलाते है उस समय पूर्वभवकी पीपासा-वाली देवी बहुतसे देवकुंमर देवकुंमारी बनाके जाती है इसवा-स्ते देवतावोंने भी इसका नाम बहुपुत्तीया रख दीया है।

हे भगवान! यह बहुपुत्तीयादेवी यहांसे चवके कहां जावेगी?

हे गौतम! इसी जम्बुद्विपके भरतक्षेत्रमें विंधाचल नामका पर्वतके पास वैभिल नामका सन्निवेसके अन्दर एक ब्राह्मणकुलमें पुत्रीपणे जन्म लेगी. उसका मातापिता मोहत्सवादि करता हुवा सोमा नाम रखेगा अच्छी सुन्दर स्वरूपवन्त होगी. यह ल-डकी यौवन वय प्राप्त करेगी उस समय पुत्रीका मातापिता अपने कुलके भाणेज रटकुटके साथ पाणीग्रहन करा देगा। रटकुट उस सोमा भार्याको बडे ही हिफाजतके साथ रखे-गा। सोमा भार्या अपने पति रटकुटके साथ मनुष्य संबधि भोग भोगवते प्रतिवर्ष एकेक युगलका जन्म होनेसे सोला वर्ष में उस सोमाब्राह्मणीके बत्तीस पुत्र पुत्रीयोंका जन्म होगा। जब सोमा उस पुत्र पुत्रीयोंका पुरण तौरपर पालन कर न सकेगा। वह बत्तीस बालक सोमामातासे कोइ दुद्ध मांगेगा कोइ खांड मांगेगा. कोइ खाजा मांगेगा. कोइ हसेगा. कोइ रोवेगा. कोइ सोमाको ताडना करेगा. कोइ तरजन करेगा. कोइ घरमें

टटी करेगा, कोइ पेशाब करेगा, कोइ श्लेष्म करेगा इस पुत्र पुत्रीयोंके मारे सोमा महा दुःखणि होगी, उसका घर बडाही, दुर्गन्ध वाला होगा. इन बाल बचोंके अवादासे सोमा अपने पति रटकुटके साथ मनोइच्छित सुख भोगवनेमें असमर्थ होगी। उस समय सुव्रता नामकि साध्वी एक सिंघाडासे गौचरी आवेगी, उसको भिक्षा देके वह सोमा बोलेगी कि हे आर्य ! आप बहुत शास्त्रका जानकार हो मुझे बडाही दुःख है कि मैं इस पुत्र पुत्रीयोंके मारी मेरे पतिके साथ मनुष्य संबंधि भोग भोगव नहीं सक्ती हु वास्ते कोइ एसा उपाय बतलावो कि अब मेरे बालक नहीं इत्यादि, साध्वि पूर्ववत् केवली प्ररूपित धर्म सुनाया. सोमा धर्म सुन दीक्षा लेनेका विचार करेगी साध्विजीसे कहा कि मेरे पतिकी आज्ञा ले मैं दीक्षा लेहुगी। पतिसे पुच्छने पर ना कहेगा कारण माता दीक्षा ले तो बालकोंका पोषण कोन करे।

सोमा साध्विजीके वन्दन करनेकों उपासरे जावेगी धर्मदेशना सुनेगी श्रावकधर्म बारह व्रत ग्रहन करेगी। जीवादि पदार्थोका अच्छा ज्ञान करेगी।

साध्वि वहांसे विहार करेगी. सोमा अच्छी जानकार होजायगी. कितनेक समयके बाद वह सुव्रता साध्विजी फीर आवेगी. सोमा श्राविका वादनकों जावेगी धर्म देशना श्रवणकर अपने पतिकि अनुमति लेके उस साध्विजीके पास दीक्षा धारण करेगी. विनय भक्तिकर इग्यारा अंगका अभ्यास करेगी। बहुतसे चाथ छठ, अठम मासखमण अदमासखमणादि तपश्चर्या कर अन्तिम आलोचन कर आदा मासका अनसन कर समाधिमें काल कर सौधर्म देवलोकमें शक्रेन्द्रके सामानिक देव दो सागरोपमकि स्थितिमें देवपणे उत्पन्न होगी। वहांपर देवसंबन्धि सुखोंका

अनुभोगकर चवेगी यह महाविदेह क्षेत्रमें उत्तम जातिकुलमें अवतार लेगी यहां भी केवली प्ररूपित धर्म स्वीकार कर कर्मशत्रुवोंका पराजय कर केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जावेगी । इति चतुर्थाध्ययनं समाप्तम् ।

(५) अध्ययन—भगवान वीरप्रभु राजग्रहन करके गुणशीलोद्यान में बिराजमान है परिषदाका भगवांनको वन्दन करनेको आना भगवानका धर्मदेशना देना यह सब पूर्ववत् समझना ।

उस समय सौधर्म कल्पके पुर्णभद्रवैमान में पुर्णभद्रदेव अपने देव देवीयोंके साथ भोगविलास नाटक आदि देव संबधि सुख भोगव रहाथा ।

पुर्णभद्र देव अवधिज्ञानसे भगवानको देखा सुरियाभदेवकि माफीक भगवानको वन्दन करनेको आना. बत्तीस प्रकारका नाटक कर पीच्छा अपने स्थानपर गमन करना । गौतमस्वामिका पुर्वभव पृच्छाका प्रश्न करना. उसपर भगवानके मुखार्विन्दसे उत्तर का देना यह सर्व पूर्वकि माफिक समझना ।

परन्तु पुर्नभद्र पूर्वभववर्न । मनिवनि नगरी चन्द्रोतर उद्यांन. पुर्णभद्र नामका बड़ा धनाढ्य गाथापति. स्थिवर भगवानका आगमन. पुर्णभद्र धर्मदेशना श्रवन करना जेष्ट पुत्रको गृहभार सुप्रतकर आप दीक्षा ग्रहन करके इग्यार अंगका ज्ञानाभ्यासकर अन्तिम आलोचना पुर्वक एक मासका अनसन कर समाधि पुर्वक काल कर सौधर्म देवलोकमें पुर्णभद्र देव हुवा है ।

हे भगवान ! यह पुर्णभद्र देव यहांसे चवके कहा जावेगा ?

हे गौतम ! महा विदहक्षेत्रमें उत्तम जाति कुलके अन्दर जन्म धारनकर केवली परुपीत धर्मको अंगीकार कर. दीक्षा धारनकर. केवलज्ञान प्रात कर मोक्ष जावेगा. इति पांचमाध्ययन समाप्तम् ।

(६) इसी माफीक मणिभद्र देवका अध्ययन भी समझना. यह भि पुर्वभवमें मणिपति नगरीमें मणिभद्र गाथापतिया स्थिवरोंके पास दीक्षा लेके सौधर्म कल्पमे देवता हुवाया. वहांसे महाविदेहमें मोक्ष जावेगा इति । ६ ।

(७) एवं दत्तदेव (८) बलनाम देव (९) शिवदेव (१०) अनाढीत देव पुर्वभवमें सब गाथा पति थे दीक्षा ले सौधर्म देवलोकमे देव हुवे है. भगवानको वन्दन करनेको गयेथे, वतीस प्रकारके नाटक कर भक्ति करीथी देवभवसे चवके महा विदेह क्षेत्रमें सब मोक्ष जावेगा इति । १० ।

॥ इति श्री पुष्पिया नामका सूत्रका संक्षिप्त सार ॥

॥ अथश्री ॥

पुष्पचूलिया सूत्रका संक्षिप्त सार.

(दश अध्ययन)

१ प्रथम अध्ययन। श्री वीरप्रभु अपने शिष्यमंडलके परिवारसे एक समय राजगृह नगरके गुणशीलोद्यानमें पधारे. च्यार जातिके देवता, विद्याधर, राजा श्रेणिक और नगरनिवासी लोक भगवानको वन्दन करनेको आये।

इस समय सौधर्मदेवलोके, श्रीवतंस वैमानमें च्यार हजार सामानिक देव, सोलाहजार आत्म रक्षक देव, च्यार महत्तरिक देवीयों और भी स्वर्वमानवासी देवदेवीयोंके अन्दर गीतग्यान नाटकादि देव संबन्धी भोग भोगवती श्रीनामकि देवी अवधिज्ञान से भगवानको देख यावत् बहु पुत्रीयादेवीकि माफीक भगवानको वन्दन करनेको गइ बत्तीस प्रकारका नाटककर अपने स्थानपर गमन किया।

गौतमस्वामिने उस श्रीदेवीका पूर्वभव पुच्छा।

भगवानने फरमाया। कि इसी राजगृह नगरके अन्दर जय-शत्रुराजा राज करता था उस समयकि बात है कि इस नगरीमें बडाही धनाढ्य और नगरमें प्रतिष्ठित एक सुदर्शन नामका गाथा-पति निवास करता था उसके प्रभा नामकि भार्या थी और इन्द-निसे उत्पन्न हुइ भूता नामकि पुत्री थी वह पुत्री कैसी थी कि यु-वा होनेपरभी वृद्धवय नारीके जैसा शरीर ढीलासा दीखाइ देना

इच्छा स्वछंदे पासत्यपणे विहार करती हुइ बहुत वर्षों तक तप-श्चर्या कर अन्तमें आद्धा मासका अनसनकर पापस्थान अनाआलो-चीत कालकर सौधर्म देवलोकमें श्रीयतंस वैमानमें श्री देवीपणे उत्पन्न हुइ है यहां च्यार पल्योपमका आयुष्य पुरण कर महावि-देह क्षेत्रमें उत्तम जाति कुलमें उत्पन्न होगा. केवली परूपित धर्म स्वीकार कर दीक्षा ग्रहन करेगी शुद्ध चारित्र पालके केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जावेगी इति प्रथमाध्ययनं समाप्तम ।

एवं हरीदेवी. धृतिदेवी. कीर्तिदेवी. बुद्धिदेवी. लक्ष्मिदेवी. एलादेवी. सुरादेवी. रसादेवी, गन्धादेवी. यह दशों देवीयों भ-गवानको वन्दन करनेको आइ. बत्तीस प्रकारका नाटक किया. गौतमस्वामि इन्होंके पूर्वभवकि पुच्छा करी भगवानने उत्तर फरमाया दशों पूर्व भवमें गाथापतियोंके पुत्रीयों थी जेसेकि भूता. पार्श्वनाथ प्रभुके पास दिक्षा ग्रहन कर शरीरकि सुश्रुषा ...धि हो सौधर्म देवलोक गइ वहांसे चवके महाविदेह ...पद ग्रहन कर केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जावेगी।

...।

...रिया सूत्र संक्षिप्त सार समाप्तम् ॥

इसका स्वरूप पासत्थपणे विहार करती हुइ बहुत वर्षों तक तप-
श्चर्या कर अन्तमें आधा मासका अनसनकर पापस्थान अनाआलो-
चीत कालकर सौधर्म देवलोकमें श्रीवतंस विमानमें श्री देवीपने
उत्पन्न हुइ है यहां च्यार पल्योपमका आयुष्य पुरण कर महावि-
देह क्षेत्रमें उत्तम जाति कुलमें उत्पन्न होगा. केवली परूपित धर्म
स्वीकार कर दीक्षा ग्रहन करेगी शुद्ध चारित्र पालके केवलज्ञान
प्राप्त कर मोक्ष जावेगी इति प्रथमाध्ययनं समाप्तम् ।

एवं ह्रीदेवी. धृतिदेवी. कीर्तिदेवी. बुद्धिदेवी. लक्ष्मिदेवी,
इलादेवी. सुरादेवी. रसादेवी, गन्धादेवी. यह दशों देवीयों भ-
गवानको वन्दन करनेको आइ. बतीस प्रकारका नाटक किया.
गौतमस्वामि इन्होंकि पूर्वभवकि पृच्छा करी भगवानने उत्तर
फरमाया दशों पूर्व भवमें साधारनिर्दोषि पुत्रीयों थी जिनेकि भूता.
पार्श्वनाथ प्रभुके पास दिक्षा ग्रहन कर शरीरकि शुश्रूषा
करि हो सौधर्म देवलोक गइ वहांसे चवके महाविदेह
क्षेत्रमें दिक्षापद ग्रहन कर केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जावेगी ।
है ।

चिथा सूत्र संक्षिप्त सार समाप्तम् ॥

प्रकारसे धर्मदेशना दी अन्तमे फरमाया कि हे भव्य जीवों इस संसारके अन्दर पौद्गलीक. अस्थिर सुखोंको, दुनिया सुख मान रही है परन्तु वस्तुत्व यह एक दुःखका घर है. वास्ते आत्मतत्व वस्तुको पेछान इस कस्मे सुखोंका त्यागकर अपने अबाधित सुखोंको ग्रहन करो. अक्षय सुखोंको प्राप्त करनेवालेको पेस्तर चारित्र नज़ाते मीलना चाहिये अर्थात् दीक्षा लेना चाहिये। इत्यादि।

भ्रातागण देशना सुन यथाशक्ति व्रत प्रत्याख्यान ग्रहनकर भगवानको वन्दन नमस्कार कर निज स्थान गमन करते हुवे।

निषेदकुमर देशना सुन वन्दन नमन कर बोला कि हे भगवान आप फरमाया वह सत्य है यह नाशमान पौद्गलीक सुख दुःखोंका खजाना ही है। हे प्रभु धन्य है जो राजा महाराजा सेठ सेनापति जोकि अपके समिप दीक्षा लेते है. हे दयालु मैं दीक्षा लेनेमें असमर्थ हु परन्तु मैं आपकि समीप श्रावकधर्म अर्थात् बारहव्रत ग्रहन करुंगा। भगवानने फरमाया कि " जहासुखम् "

निषेदकुंमर स्वइच्छा मर्याद रखके श्रावकके बारह व्रत धारण कर भगवानको वन्दन नः कर अपने र्थ परारूढ हो अपने स्थान पर चला गया।

भगवान नेमिनाथ प्रभुका जेष्ट शिष्य वरदत्त नामका मुनि भगवानको वन्दन नमस्कार कर प्रश्न करता हुवा कि हे प्रभो! यह निषेढ कुमर पुर्व भवमें क्या पुन्य किया है कि बहुतसे लोगोंको प्रिय लगता है सुन्दर स्वरूप यश कीर्ति आदि सामग्री प्राप्त हुइ है।

भगवानने फरमायाकि हे वरदत्त! इस जम्बुद्विपके भरतक्षे-

धर्मे धन धान्यसे समृद्ध ऐसा राइसडा नामका नगर था, जिसके बाहार मेघवनोद्यान, मणिदत्त नामके यक्षका सुन्दर यक्षायतन था।

उस नगरमें बडाही पराक्रमी न्यायशील प्रजापालक महाबल नामका राजा राज करता था। जिस राजाके महिला गुण संयुक्त सुशीला पद्मावती नामकि राणी थी। उस राणीके सिंह स्वप्न सूचित कुंमरका जन्म हुआ. अनेक महोत्सव कर कुंमरका नाम 'वीरंगत्त' दीया था सुख पुर्वक चम्पकलताकि माफीक वृद्धिको प्राप्त होता बहोत्तर कलामे निपुण हो गया।

अब वीरंगत्त कुंमरकि युवक अवस्था हुइ देखके राजाने बत्तीस राज कन्याओंके साथ पाणिग्रहन करा दिया. इतनाही दत्त आया, कुंमर निराबाधित सुख भोगव रहाथा कि जिस्को काल जानेकि खबरही नही थी।

उसी समय ऐसी श्रमणके माफीक बहु श्रुति बहुत शिष्योंकि परिवारसे प्रवृत सिद्धार्थ नामका आचार्य महाराज उस रोहीसडे नगरके उद्यानमें पधारे. राजादि नगरलोक और वीरंगत कुंमर आचार्य महाराजको वन्दन करनेको गये। आचार्यश्रीने विस्तार पुर्वक धर्मदेशना प्रदान करी। परिषदा यथाशक्ति त्याग वैराग धारण कर विसर्जन हुइ।

वीरंगत राजकुंमार, देशना सुन परम वैराग रंगमें रंगाहुवा माता-पिताकि आज्ञा पुर्वक बडेही महोत्सवके साथ आचार्यश्रीके पास दीक्षा ग्रहन करी इर्यासमिति यावत् गुप्त ब्रह्मचर्य व्रत पालन करने लगा विशेष विनय भक्ति कर स्थिवरोंसे इग्यारा अंगका ज्ञानाभ्यास कीया। विचित्र प्रकार तपश्चर्या कर अन्तमें आलोचना पुर्वक ४५ वर्ष दीक्षा पालके दोय मासका अनसन कर

समाधि पुर्वक काल कर पांचवा ब्रह्मदेवलोकमे दस सागरोपमकि स्थितिके स्थान देवतापणे उत्पन्न हुवा। वहांसे आयुष्य पुर्ण कर इस द्वारकानगरीमें बलदेवराजाकि रेवन्ती नाम की राणीके पुत्रपने उत्पन्न हुवा है हे वरदत्त पुर्व भवमें तप संयमका यह प्रत्यक्ष फल मीला है।

वरदत्तमुनिने प्रश्न कीयाकि हे भगवान यह निषदकुंमर आपके पास दीक्षा लेगा? भगवानने उत्तर दीयाकि हां यह वरदत्त मेरे पास दीक्षा लेगा। एसा सुन वरदत्तमुनि भगवानको वन्दन नमस्कार कर आत्मध्यानमे रमणता करने लगा। अन्यदा भगवान वहांसे विहार कर व अन्य देशमें विचरने लगे।

निषेदकुंमर श्रावक होनेपर जाना है जीवाजीव पुन्य पाप आश्रव संवर निर्झरा वन्ध मोक्ष तथा अधिकरणादि क्रियाके भेदोको समझा है यावत्। श्रावक व्रतोंका निर्मल पालन करने लगा।

एक समय चतुर्दशी आदि पर्व तीथीके रोज पौषदशालामे सुखदु कुमारकि माफीक 'पौषदकर धर्म चिंतवन करतों' यह भावना ध्यान हुइकि धन्य है जिस ग्राम नगर यावत् जहांपर नेमिनाथप्रभु विहार करते है अर्थात् उस जमीनको धन्य है कि जहांपर भगवान चरन रखते है। एवं धन्य हैं जिस राजा महाराजा सेठ सेनापतिको की जो भगवानके समिप दीक्षा लेते है। धन्य है जो भगवानके समीप श्रावक व्रत धारन करते है। धन्य है जो भगवानकि देशना श्रवन करते है। अगर भगवान यहांपर पधार जावे तों मैं भगवानके पास दीक्षा ग्रहन करु एसा विचार रात्रीमें हुवाथा।

सुर्योदय होते ही भगवान पधारने कि वधाइ आगइ. राजा प्रजा और निषेदकुंमर भगवानको वन्दन करनेको गया. भगवा-

सने देशना दी. निषेदकुमर देशना सुनि, मातापिता कि आज्ञा प्राप्त कर पहले ही आदेश्वरके साथ मातापिताने थावचा पुत्र कुमर कि माफीक महोत्सव कर भगवानके समिप दीक्षा दीराई। निषेदमुनि सामायिकादि इग्यारा अंगका ज्ञानाभ्यास कर पुर्ण नौ वर्ष दीक्षा पाल अन्तिम आलोचना पुर्वक इकवीस दिनका अन-सनकर समाधि सहीत कालकर सर्वार्थसिद्ध नामका महावैमान तेतीस सागरोपमकि स्थितिमें देवपणे उत्पन्न हुवा।

वहां देवतावोंसे आयुष्य पुर्णकर महाविदेहक्षेत्रमें उत्तम जातिकुल विशुद्ध वंसमे कुमरपणे उत्पन्न होगा भोगोंसे अरुची होगा केवली प्ररुपित धर्म स्वीकारकर, दीक्षा ग्रहनकर घोर तप श्चर्या करेगा जिस कार्यके लिये यह दीक्षाके परिसह सहन करेगा उस कार्यको साधन करलेगा अर्थात् केवलज्ञान प्राप्तकर अन्तिम श्वासोश्वास और इस ' संसारका त्यागकर मोक्ष पधार ' जावेगा इति प्रथम अध्ययनं समाप्तम्।

इसी माफीक (२) अनिवहकुमर (३) वहकुमर (४) प्रगति कुमर (५) युक्तिकुमर (६) दशरथकुमर (७) दृढरथकुमर (८) महाधनुकुमर (९) सप्तधनुकुमर (१०) दशधनुकुमर (११) नाम कुमर (१२) शतधनुकुमर।

यह बारहकुमर बलदेवराजाकि रेवन्तीराणीके पुत्र है पचास पचास अन्तेवर त्याग श्री नेमिनाथ प्रभु पासे दीक्षा ले अन्तिम सर्वार्थसिद्ध वैमान गये थे वहांसे चवके महाविदेह क्षत्रमें सिद्ध इसी माफीक सब मोक्ष जावेगा।

इति श्री वन्हिदशासूत्रका संक्षिप्त सार समाप्तम्.

होके विहार करना, भिक्षाटन करना और व्याख्यान देना नहीं कल्पता.

आचारांग, लघुनिशिथ सूत्रमे अनभिज्ञ साधु यदि पूर्वोक्त कार्य करे तो उसे चतुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है. और गच्छनायक आचार्यादि उक्त अज्ञान साधुवोंको पूर्वोक्त कार्योंके विषय आज्ञा भी न दे. और यदि दे तो उन आज्ञा देनेवालोंकोभी चतुर्मासिक प्राय-श्चित होता है. इसलिये सर्व साधु साध्वियोंको चाहिये कि वे योग्यता पूर्वक गुरुगमनासे इन छे छेदोंका अवश्य पठन पाठन करें, विना इनके अध्ययन किये साधु मार्गका यथावत् पालन भी नहीं कर सक्ते. कारण जबतक जिस वस्तुका यथावत् ज्ञान न हो उसका पालन भी ठीक ठीक कैसे हो सक्ता है!

अगर कोइ शीथिलाचारी खुद स्वछन्दताको स्विकार कर अपने साधु साध्वियोंको आचारके अन्धकारमें रख अपनी मन मानी प्रवृत्ति करना चाहे उनको यह कहना अवश्य होगा कि साधु साध्वियोंको छेदसूत्र न पढाने चाहिये. उनसे यह पूछा जाय कि छेदसूत्र किस लिये? अगर ऐसाही होता तो श्रीगणधर आगमोंमेंसे पैंतालीस आगमका पठन पाठन न रखकर उन चारोंसबको ही रख देते तो यह [illegible] था!

अब सवाल यह रहा कि छेद सूत्रोंमें कइ बातें ऐसी अपवाद है कि वह अल्पज्ञोंको नहीं पढाइ जाती (समाधान) सूत्र सूत्रोंमें तो ऐसी कोइभी अपवादकी बात नहीं है कि जो साधुवोंको न पढाई

होके विहार करना, भिक्षाटन करना और व्याख्यान देना नहीं कल्पता.

आचारांग, लघुनिशिथ सूत्रसे अनभिज्ञ साधु यदि पूर्वोक्त कार्य करे तो उसे चतुर्मासिक प्रायश्चित होता है. और गच्छनायक आचार्यादि उक्त अज्ञात साधुवोंको पूर्वोक्त कार्योंके विषय आज्ञा भी न दे. और यदि दे तो उन आज्ञा देनेवालोंकोभी चतुर्मासिक प्रायश्चित होता है. इसलिये सर्व साधु साध्वियोंको चाहिये कि वे योग्यता पूर्वक गुरुगमतासे इन छे छेदोंका अवश्य पठन पाठन करें, विना इनके अध्ययन किये साधु मार्गका यथावत् पालन भी नहीं कर सकते. कारण जबतक जिस वस्तुका यथावत् ज्ञान न हो उसका पालन भी ठीक ठीक कैसे हो सक्ता है?

अगर कोइ शीथिलाचारी खुद स्वच्छन्दताको स्विकार कर अपने साधु साध्वियोंको आचारके अन्धकारमें रख अपनी मन मानी प्रवृत्ति करना चाहे, उसको यह कहना आसान होगा कि साधु साध्वियोंको छेदसूत्र न पढाने चाहिये. उनसे यह पूछा जाय कि छेदसूत्र है किस लिये? अगर ऐसाही होता तो चौरासी आगमोंमेंसे पैंतालीश आगमका पठन पाठन न रखकर उन चालीसका ही रख देते तो क्या हरज थी!

अब सवाल यह रहा कि छेद सूत्रोंमें कइ बातें ऐसी अपवाद है कि वह अल्पज्ञोंको नहीं पढाइ जाती (समाधान) मूल सूत्रोमे तो ऐसी कोइभी अपवादकी बात नहीं है कि जो साधुवोंको न पढाई

जाय. अगर भाष्य चूर्णि आदि विवरणोंमें द्रव्य क्षेत्र समयानुसार दुष्कालादिके कारणसे अपवाद मार्गका प्रतिपादन किया है वह " असक्त परिहार " इस विकट अवस्थाके लिये ही है; परन्तु सूत्रोंमें "सुत्थो खलु पढमो" ऐसाभी तो उल्लेख है कि प्रथम सूत्र और सूत्रका शब्दार्थ कहना. इस आदेशसे अगर मूल सूत्र और सूत्रका शब्दार्थसे ही शिष्यको छेद सूत्रोंकी वाचना दे तो क्या हर्ज है? क्योंकि इतनेसे मुनियोंको अपने मार्गका सामान्यतः बोध हो सक्ता है.

बहोतसे ग्रन्थोंमें छेदसूत्रोंके परिमाणकी आवश्यकता होनेपर मूल सूत्रोंका पाठ लिख उसका शब्दार्थ कर देते हैं. इस तरह अगर सम्पूर्ण छेद सूत्रोंकी भाषा कर दी जाय तो मेरे ख्यालमें कोइ प्रकारकी हानी नही है. बल्कि अज्ञानके अन्धेरेमें गिरे हुवे महात्माओंके लिये सूर्यके समान प्रकाश होगा.

दूसरा सवाल यह रहा कि छेदसूत्रोंके पठन पाठनके अधिकारी केवल मुनिगन ही होते हैं और छपवाके प्रसिद्ध करा दिये जानेपर सर्व साधारण (श्रावक) लोकभी उनके पढनेके अधिकारी हो जावेंगे. इस बातके लिये फिकर करनेकी आवश्यकता नहीं है. यह कायदा जबकि सूत्रोंकी मालकी अपने पास थी. याने सूत्र अपनेही कब्जेमें रक्खे हुवे थे, तब तककरत सक्ती थी; परन्तु आज वे सूत्र हाथोहाथ दिखाई देते हैं. तो फिर इस बातकी खासियता क्यों? अन्य लोक भी जैनशास्त्रोंको पढते हैं तो फिर श्रावक लोगोने हीं क्या नुकसान किया है कि उनको सूत्रोंकी भाषा भी पढनेका अधिकार नही.

सूत्रोंमें ऐसा भी पाठ दिखाई देता है कि भगवान् वीरप्रभुने बहुतसे साधु, साध्वि, श्रावक, श्राविका, देव और देवांगनाओंकी परिषदामें इन सूत्रोंका व्याख्यान किया है अगर ऐसा है तो फिर दूसरे पढेंगे यह भ्रांति ही क्यों होनी चाहिये?

छेदसूत्रोंमें जैसे विशेषतासे साधुवोंके आचारका प्रतिपादन है, वैसे सामान्यतासे श्रावकोंके आचारका भी व्याख्यान है. श्रावकोंके सम्यक्त्व प्रतिपादनका अधिकार जैसा छेदसूत्रोंमें है, वैसा शायद ही दूसरे सूत्रोंमें होगा और श्रावकोंकी ग्यारह प्रतिमाका सविस्तार तथा गुरुकी तेतीस आशातना टालना और किसी आचार्यको पदवीका देना वह योग्य न होनेपर पद्विका छोडाना तथा आलोचना करवाना इत्यादि आचार छेदसूत्रोंमें है. इसलिये श्रावकभी सुननेके अधिकारी हो सकते हैं.

अब तीसरा सवाल यह रहा की श्रावकलोक मूल सूत्र वाचनेके अधिकारी है या नहीं? इस विषयमें हम इतना ही कहेंगे कि हम इन छेदसूत्रोंकी केवल भाषाही लिखना चाहते हैं. और भाषाका अधिकारी हरएक मनुष्य हो सकता है.

प्रसंगत: इन छेदसूत्रोंका कितनाक विभाग भिन्न २ ग्रन्थकारों द्वारा प्रकाशित हो चुका है. जैसे सेनप्रश्न, हीरप्रश्न प्रश्नोत्तरमाला, प्रश्नोत्तरचिन्तामणी, विशेषशतक, गणधरसार्द्धशतक और प्रश्नोत्तरसार्द्धशतकादि ग्रन्थोंमें आवश्यकता होनेपर इन छेदसूत्रोंके कतिपय मूलपाठोंको उद्धृत कर उनका शब्दार्थ और विस्तारार्थमें उल्लेख किया है.

इससे जैन समाजको बडाही लाभ हुवा और यह प्रवृत्ति भव्यात्माओं के बोधके लिये ही की गईथी.

इस लिये अब क्रमशः सम्पूर्ण सूत्रोंको भाषाद्वारा प्रकाशित करवा दिया जाय तो विशेष लाभ होगा. इसी हेतुसे इन सूत्रोंकी भाषा की जाती है. इसको लिखने समय हमको यह भी दाक्षिण्यता न रखनी चाहिये कि सूत्रोंमें बडे ही उच्च कोटीसे मूर्तिमार्गको बतलाया है. और इस समय हमसे ऐसा कठिन मार्ग पल नहीं सक्ता, इसलिये इन सूत्रोंकी भाषा प्रकाशित न करे. आज हम जितना पालते हैं. भविष्यमें मंद संहननवालोंसे इतनाभी पलना कठिन होगा, तथापि सूत्र तो यही रहेंगे. शास्त्रकारोंने यह भी फरमाया है कि " जं सक्कं तं कर्इ जं न सक्कं सद्दइ, सद्दइ माणो जीवो पावई सासयठाणं " भावार्थ— जितना बने उतना करना चाहिये, अगर जो न बन सके उसके लिये श्रद्धा रखनी चाहिये, श्रद्धा रखनेहीसे जीवोंको शाश्वत स्थानकी प्राप्ति हो सक्ती है.

उत्कृष्ट मुनिमार्गका जो प्रतिपादन आचारांग, सूत्रकृतांग, प्रश्नव्याकरण, ओघनिर्युक्ति, पिंडनिर्युक्ति आदि सूत्रोंके छपनेसे जाहिर हो चुका है, तो फिर दूसरे सूत्रोंका तो कहनाही क्या?

कितनेक तो रूढी भ्रांतिमें पड जाती है. अगर उसे दीर्घ दृष्टीसे देखा जाय तो सिवाय नुकशानके दूसरा कोइ भी लाभ नहीं है.

हम हमारे पाठक वर्गसे अनुरोध करते है कि आप एक दफे

इन शीघ्रबोधकेभागोंको क्रमश आद्योपान्त पढीये. इसके पढनेमे आपको ज्ञात हो जायगा कि सूत्रोंमें ऐसा कौनसा विषय है कि जो जनसमाजके पढने योग्य नहीं हैं? अर्थात् वीतरागकी वाणी भव्यजीवोका उद्धार करनेके लिये एक असाधारण कारण है, इसके आराधन करनेहीसे भव्यजीवोंको अक्षय सुखकी प्राप्ति हुई है—होती है—और होगी.

अन्तमें पाठकोंसे मेरा यह निवेदन है कि छद्मस्थोंमे भूल होनेका स्वाभाविक नियम है. जिसपर मेरे सरीखे अल्पज्ञसे भूल हो इसमें आश्चर्य ही क्या है? परन्तु सज्जन जन मेरी भूलकी अगर सूचना देंगे तो मैं उनका उपकार मान कर उसे स्वीकार करुंगा और द्वितीयावृत्तिमें सुधारा वधारा कर दिया जावेगा. इत्यलम्—

लेखक.

। श्रीरत्नप्रभाकर ज्ञान पुष्पमाला पुष्प नं. ६२ ।

। श्रीककसूरीश्वर सद्गुरुभ्यो नमः ।

शीघ्रबोध भाग १०वां.

श्रीबृहत्कल्पसूत्रका संक्षिप्त सार.

(उद्देशा ६ छे.)

प्रथम १ उद्देशा—इस उद्देशामें मुख्य साधु साध्वीयोंका आचारकल्प है। जो कर्मबंधके हेतु और संयमको बाध करनेवाले पदार्थ है, उसको निषेध करते हुवे शास्त्रकारोंने "नो कप्पइ" अर्थात् नहि कल्पते, और संयमके जो साधक पदार्थ हैं, उसको "कप्पइ" अर्थात् यह कल्पते है। वह दोनो प्रकार "नो कप्पइ" "कप्पइ" इसी उद्देशामें कहेंगे। यथाः—

(१) नहि कल्पै—साधु साध्वीयोंको कच्चा तालवृक्षका फल ग्रहण करना न कल्पै। भावार्थ—यहां मूलसूत्रमें तालवृक्षका फल कहा है यह किसी देश विशेषका है। क्यों कि भिन्न भिन्न देशमें भिन्न २ भाषा होती हैं। एक देशमें एक वृक्षका अमुक नाम है. तो दुसरे देशमें उसी वृक्षका अन्यही

(११) निगम—जहांपर प्रायः वैश्य लोगोंकी अधिक वस्ती हो।

(१२) राजधानी—जहांपर खास करके राजाकी राजधानी हो।

(१३) मंवहन—जहांपर प्रायः किरसानादिककी वस्ती हो।

(१४) घोषांमि—जहांपर प्रायः घोषी लोगों वस्तें हो।

(१५) पर्शायां—जहांपर आये गये मुसाफिर ठहरतें हैं।

(१६) पुटमेय—जहां खेतीवाडीके लीये अन्य ग्रामोंमें लोगों आकरके वास करतें हो।

भावार्थ—एक मासमें अधिक रहनेसें गृहस्थ लोगोंका अधिक परिचय होता है और जिससे राग द्वेषकी वृद्धि होती हैं। सुस्वर्जानीयापना घट जाता हैं। वास्ते तन्दुरस्तीके कारन विना मुनिकों शीतोष्ण कालमें एक माससे अधिक नहि ठहरना।

(७) पूर्वोक्त १६ गट, कोट शहरपनामें संयुक्त हो। कोटके बहार पुरा आदि अन्य वस्ती हो, ऐसे स्थानमें साधुको शीतोष्ण कालमें दोय मास रहेना कल्पे, एक मास कोटकी अंदर और एक मास कोटकी बहार; परंतु एक मास अन्दर रहे वहां भिक्षा अन्दर करे, और बहार रहे तब भिक्षा बहारकी करे। अगर अन्दर एक मास रहते हुवे एक रोजही बहारकी भिक्षा करी हो, तो अन्दर और बहार दोनो स्थानमें एकही मास रहेना कल्पनीय है। अगर अन्दर एक मास रहके बहार

रहते हुवे अन्दरकी भिक्षा लेवे, तो कल्पातिक्रम दोष लगता है। वास्ते जहां रहे वहांकी भिक्षा करनेकीही आज्ञा है।

(८) पूर्वोक्त १६ स्थानोंकी वहार वस्ती न हो, तो शीतोष्णकालमें साध्वीयोंको दो मास रहेना कल्पै, भावना पूर्ववत्।

(९) पूर्वोक्त १६ स्थान कोट संयुक्त हो, वहार पुरादि वस्ती हो, तो शीतोष्ण कालमें साध्वीयोंको च्यार मास रहेना कल्पै। दो मास कोटकी अन्दर और दो मास कोटकी वहार। अन्दर रहे वहांतक भिक्षा अन्दर करे और वहार रहे वहांतक भिक्षा वहार करे।

(१०) पूर्वोक्त ग्रामादिके एक कोट, एक गढ, एकही दरवाजा, एकही निकाश, प्रवेशका रस्ता हो, ऐसा ग्रामादिमें साधु, साध्वीयोंको एकत्र रहेना उचित नहि। कारण-दिन और रात्रिमें स्थंडिलादिकके लीये ग्रामसे वहार जाना हो, तो एकही दरवाजेसे आने जानेमें परिचय वढता है, इस लीये लोकापवाद और शासन लघुतादि दोषोंका संभव है।

(११) पूर्वोक्त ग्रामादिके वहुतसे दरवाजे हो, निकास, प्रवेशके वहुतसे रस्ते हो, वहांपर साधु, साध्वी, एक ग्राममें निवास कर सक्ते है। कारण-उन्होंको आने जानेको अलग अलग रस्ता मिल सक्ता है।

(१२) वाजारकी अन्दर, व्यापारीयोंकी दुकानकी

अन्दर, चोरा (हथाइकी बैठक), चौकके मकानमें और जहां-पर दोय तीन च्यार तथा बहुतसे रस्ते एकत्र होते हो, ऐसे मकानमें साध्वीयोंको उतरना और स्वल्प या बहुत काल ठहरना उचित नहीं हैं। कारण एसे स्थानोंमें रहनेसे ब्रह्मचर्यकी गुप्ति (रक्षा) रहनी मुश्कील हैं।

भावार्थ—जहांपर बहुतसे लोगोंका गमनागमन हो रहा है, वहांपर साध्वीयोंको ठहरना उचित नहि है।

(१३) पूर्वोक्त स्थानोंमें साधुवोंको रहना कल्पे।

(१४) जिस मकानके दरवाजोंके किवाड न हो अर्थात् रात दिन खुला रहेते हो, ऐसे मकानमें साध्वीयोंको शीलरक्षाके लीये रहेना कल्पे नहीं।

(१५) उक्त मकानमें साधुवोंको रहेना कल्पे।

(१६) साध्वीयों जिस मकानमें उतरो हो उसी मकानका किवाड अगर खुला रखना चाहती हो तो एक वस्त्रका छेडा अन्दर बांधे और दुसरा छेडा बहार बांधे। कारण—अगर कोइ पुरुष कारणवशात् साध्वीयोंके मकानमें आना चाहता हो, तोभी एकदम वो नहीं आसकता।

भावार्थ—यह सूत्र साध्वीयोंके शीलकी रक्षाके लीये फरमाया है।

(१७) घडाके मुख माफिक संकुचित मुखवाला मात्राका

भाजन अन्दरसे लींपा हुवा, साधुवोंको रखना कल्पे नहीं। कारण-पिसाव करते वखत चित्तवृत्ति मलिन न हो।

(१८) उक्त भाजन साध्वीयोंको रखना कल्पे।

(१९) उपरसे सुपेतादिसे लिप्त किया हुवा नालीका आकार समान मात्राका भाजन साध्वीयोंको रखना कल्पे नहीं। भावना पूर्ववत्।

(२०) उक्त मात्राका भाजन साधुवोंको कल्पे।

(२१) साधु साध्वीयोंको वस्त्रकी चलमीली अर्थात् आहारादि करते समय मुनिको वो गुप्त स्थानमें करना चाहिये। अगर ऐसा मकान न मिले तो एक वस्त्रका पडदा बांधके आहार करना चाहिये। उस वस्त्रको शास्त्रकारोंने चलमील कहा है।

(२२) साधु, साध्वीयोंको पाणीके स्थान जैसे नदी, तलाव, कुवा, कुण्ड, पाणीकी पोवाआदि स्थानपर बैठके नीचे लिखे हुवे कार्य नहीं करना। कारण-इसीसे लोगोंको शंका उत्पन्न होती है कि साधु वहांपर कचा पानीका उपयोग करते होंगे? इत्यादि।

(१) मलमूत्र (टटी पेसाव) वहांपर करना, (२) बैठना, (३) उभा रहेना, (४) सोना, (५) निद्रा लेना, (६) विशेष निद्रा लेना, (७) अशनादि च्यार प्रकारके आहार करना, (११) स्वाध्याय करना, (१२) ध्यान करना, (१३)

कायोत्सर्ग करना, (१४) आसन लगाना, (१५) धर्मदेशना देना, (१६) वाचना देना, (१७) वाचना लेना-यह १७ बोल जलाश्रय पर न करनेके लीये है।

(२३) साधु साध्वीयोंको सचित्र-अर्थात् नाना प्रकारके चित्रोंसे चित्रा हुवा मकानमें रहेना कल्पे नहीं।

भावार्थ—स्वाध्याय ध्यानमें वह चित्र विभ्रभूत है, चित्तवृत्तिको मलिन करनेका कारण है।

(२४) साधु साध्वीयोंको चित्र रहित मकानमें रहेना कल्पे। जहांपर रहनेसे स्वाध्याय ध्यान समाधिपूर्वक हो सके।

(२५) साध्वीयोंको गृहस्थोंकी निश्रा विना नहीं रहेना, अर्थात् जहां आसपास गृहस्थोंका घर न हो ऐसे एकांतके मकानमें साध्वीयोंको नहीं रहेना चाहिये। कारण-अगर केइ ऐसेभी ग्रामादि होवे कि जहांपर अनेक प्रकारके लोग वसते हैं, अगर रात दिनमें कारण हो, तो किसके पास जावे। वास्ते आसपास गृहस्थोंका घर होवे, ऐसे मकाममें साध्वीयोंको रहना चाहिये।

(२६) साधुवोंको चाहे एकान्त हो, चाहे आसपास गृहस्थोंका घर हो, कैसाही मकान हो तो साधु ठहर सके। कारण-साधु जंगलमेंभी रह सकता, तो ग्रामादिकका तो कहना ही क्या ? पुरुषकी प्रधानता है।

(२७) साधु साध्वीयोंको जहांपर गृहस्थोंका धन-द्रव्य,

भूषणादि कींमती माल होवे, ऐसा उपाश्रय-मकानमें रहेना कल्पे नहीं। कारण अगर कोइ तस्करादि चोरी कर जाय तो साधु रहेनेके कारणसे अन्य साधुवोंकी भी अप्रतीति हो जाती है, इसलीये दूसरी दफे वस्ती (स्थान) मुश्केलीसे मिलता है।

(२८) साधु साध्वीयोंको जो गृहस्थोंका धन, धान्यादिसे रहित मकान हो, वहांपर रहेना कल्पे।

(२९) साधुवोंको जो स्त्री सहित मकान होवे, वहां नहीं ठहरना चाहिये। (३०) अगर पुरुष सहित होवे तो कल्पे भी।

(३१) साध्वीयोंको पुरुष संयुक्त मकानमें नहीं रहेना। (३२) अगर ऐसाही हो तो स्त्रीसंयुक्त मकानमें ठहर सके।

भावार्थ—प्रथम तो साधु साध्वीयोंको जहां गृहस्थ रहेते हो, ऐसा मकानमें नहीं रहेना चाहिये। कारण—गृहस्थसें परिचयकी बिलकुल मना है। अगर दूसरे मकानके अभावसे ठहरना हो तो उक्त च्यार सूत्रके अमलसे ठहर सके।

(३३) साधुवोंको जो पासके मकानमें औरतों रहेती हो ऐसा मकानमें भी ठहरना नहीं चाहिये। कारण—रात्रिके समय पेसाब विगेरे करनेको आते जाते वखत लोगोंको अप्रतीतिका कारण होता है।

(३४) साध्वीयों उक्त मकानमें ठहर सकती है।

(३५) साधुवोंको जो गृहस्थोंके घर या मकानके बीचमें हो के आने जानेका रस्ता हो, ऐसा मकानमें नहीं ठहरना

चाहिये। कारन—गृहस्थोंकी बहिन, बेटी, बहुवोंका हरदम वहां रहेना होता है। वह किस अवस्थामें बैठ रहेती है, और महिला परिचय होता है।

(३६) साध्वीयोंको ऐसा मकान हो, तो भी ठहरना कल्पै।

(३७) दो साधुवोंको आपसमें कषाय (क्रोधादि) हो गया होवे, तो प्रथम लघु (शिष्यादि) को वृद्ध (गुर्वादि) के पास जाके अपने अपराधकी क्षमा याचनी चाहिये। अगर लघु शिष्य न आवे तो वृद्ध गुर्वादिको जाके क्षमा देनी लेनी चाहिये। वृद्ध जावे उस समय लघु साधु उस वृद्ध महात्माका आदर सत्कार करे, चाहे न भी करे; उठके खडा होवे चाहे न भी होवे; वन्दन नमस्कार करे चाहे न भी करे, साथमें भोजन करे, चाहे न भी करे, साथमें रहे, चाहे न भी रहे; तोभी वृद्धोंको जाके अपने निर्मल अन्तःकरणसे खमावना चाहिये।

प्रश्न—स्थान स्थान वृद्धोंका विनय करना शास्त्रकारोंने बतलाया है, तो यहांपर वृद्ध मुनि सामने जाके खमावे इसका क्या कारन है ?

उत्तर—संयमकासार यह है कि क्रोधादिको उपशमाना, यहांपर बडे छोटेका कारन नहीं है। जो उपशमावेगा—खमतखामणा करेगा, उसकी आराधना होगी; और जो वैर विरोध रक्खेगा अर्थात् नहीं खमावेगा, उसकी आराधना नहीं होगी। वास्ते सर्व जीवोंसे मैत्रीभाव रखना यही संयमका सार है।

(३८) साधु साध्वीयोंको चतुर्मासमें विहार करना नहीं कल्पे। कारन-चातुर्मासमें जीवादिककी उत्पत्ति अधिक होती है।

(३९) शीतोष्णकालमें आठ मास विहार करना कल्पे।

(४०) साधु साध्वीयोंको जो दोय राजावोंका विरुद्ध पक्ष चलता हो. अर्थात् दोय राजाका आपसमें युद्ध होता हो, या युद्धकी तैयारी होती हो, ऐसे क्षेत्रमें वार वार गमनागमन करना नहीं कल्पे। कारन-एक पक्षवालोंको शंका होवे कि यह साधु वार वार आते जाते है, तो क्या हमारे यहांके समाचार परपक्षवालोंको कहते होंगे? इत्यादि। अगर कोइ साधु साध्वी दोय राजावोंके विरुद्ध होनेपर वार वार गमनागमन करेगा, उसीको तीर्थंकरोंकी और उस राजावोंकी आज्ञाका भंग करनेका पाप लगेगा, जिससे गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित आवेगा।

(४१) साधु गृहस्थोंके वहां गोचरी जाते है। अगर वहां कोइ गृहस्थ वस्त्र. पात्र, कंबल रजोहरनकी आमंत्रणा करे, तो कहना कि यह वस्तु हम लेते है, परन्तु हमारे आचार्यादि वृद्ध मुनियोंके पास ले जाते हैं। अगर खप होगा तो रख लेंगे खप न होगा तो तुमको वापिस ला देंगे। कारन-आहारादि वस्तु लेनेके बाद वापिस नहीं दी जाती है, परन्तु वस्त्र पात्रादि वस्तु उस रोजके लिये करार कर लाया हो, तो खप न होनेपर वापिस भी दे सकते है। वस्त्रादि लाके आचा-

एकेला साधु कितना वख्त और कहांपर जाते है इत्यादि। वास्ते चाहिये कि आपसहित दो या तीन साधुओंको साथ जाना। कारन-दूसरेकी लज्जासे भी दोष लगाते हुवे रुक जाते है। तथा एक साधुको राजादिके मनुष्य दराल करता हो, तो दूसरा साधु स्थानपर जाके गुर्वादिको इतल्ला कर सकता है।

(५०) इसी माफिक साध्वीयों दोष हो सो भी नहीं कल्पे, परन्तु आप सहित तीन च्यार साध्वीयोंको साथमें रात्रि या वैकालमें जाना चाहिये। इसीसे अपना आचार (ब्रह्मचर्य) व्रत पालन हो सकता है।

(५१) साधुसाध्वीयोंको पूर्व दिशामें अंगदेश चंपा-नगरी, तथा राजगृह नगर, दक्षिण दिशामें कोसम्बी नगरी, पश्चिम दिशामें स्थूणा नगरी, और उत्तर दिशामें कुणाला नगरी. च्यार दिशामें इस मर्यादा पूर्वक विहार करना कल्पै। कारन-यहांपर प्रायः आर्य मनुष्योंका निवास है. इन्हके सिवा अनार्य लोगोंका रहना है, वहां जानेसे ज्ञानादि उत्तम गुनोंका घात होता है. अर्थात् जहांपर जानेसे ज्ञानादिकी हानि होती हो, वहां जानेके लीये मना है। अगर उपकारका कारन हो, ज्ञाना-दि गुनकी वृद्धि हो, और परीसह सहन करनेमें मजबूत हो, दियाका चमत्कार हो, अन्य मिथ्यात्वी जीवोंको बोध देनेमें समर्थ हो, शासनकी प्रभावना होती हो, अपना चारित्रमें दोष न लगता हो, वहांपर विहार करना योग्य है।

। इति श्री बृहत्कल्पसूत्रमें प्रथम उद्देशाका संक्षिप्त सार।

दूसरा उद्देशा.

(१) साधु साध्वी जिस मकानमें ठहरना चाहते है. उस मकानमें शालि आदि धान इधर उधर पसरा हुवा हो, जहांपर पांव रखनेका स्थान न हो, वहांपर हाथकी रेखा सुके इतना वखत भी नहीं ठरना चाहिये। अगर वह धानका एक तर्फ ढग किया हो, उसपर राख डालके मुद्रित किया गया हो, कपडेसे ढका हुवा हो, तो साधुको एक मास और साध्वीको दोय मास ठहरना कल्पेः परन्तु चातुर्मास ठहरना नहीं कल्पे। अगर उस धानको किसी कोठेमें डाला हो, ताला कुंचीसे जाबता किया हो, तो चातुर्मास रहेना भी कल्पे। भावार्थ-गृहस्थका धानादि अगर कोइ चोर ले जाता हो तो भी उसको रोक-टोक करना साधुको कल्पे नहीं। गृहस्थको नुकशान होनेसे साधुकी अप्रतीति हो और दुसरी दफे मकान मिलना दुष्कर होता है।

प्रश्न—जो ऐसा हो तो साधु एक मास कैसे ठहर सकता है?।

उत्तर—आचारांगसूत्रमें ऐसे मकानमें ठहरनेकी मिल-

---

१ गृहस्थ लोग अपने उपभोगके लीये बनाया हुवा मकानमें गृहस्थोंकी आज्ञा लेके साधु ठहर सकते है। उस मकानको शास्त्रकारोंने उपासरा (उपाश्रय) कहा है।

कुल मना की गइ है, परन्तु यहांपर अपवाद है कि दुसरा मकान न मिलता हो या दुसरे गाम जानेमें असमर्थ हो तो ऐसे अपवादका सेवन करके मुनि अपना संयमका निर्वाह कर सकता है।

(२) साधु साध्वीयों जिस मकानमें ठहरना चाहते हैं, उस मकानमें सुरा जातिकी मदिरा, सोवीर जातिकी मदिराके पात्र (बरतन) पडा हो. शीतल पाणी. उष्ण पाणीके घडे पडे हो, रात्रि भर अग्नि प्रज्वलित हो, सर्व रात्रि दीपक जलते हो, ऐसा मकानमें हाथकी रेखा सुझे वहां तक भी साधु साध्वीयोंको नहीं ठहरना चाहिये। अपने ठहरनेके लिये दुसरा मकानकी याचना करनी। अगर याचना करनेपर भी दुसरा मकान न मिले और ग्रामान्तर विहार करनेमें असमर्थ हो, तो उक्त मकानमें एक रात्रि या दोय रात्रि अपवाद सेवन करके ठहर सकते हैं, अधिक नहिं। अगर एक दो रात्रिसे अधिक रहे तो उस साधु साध्वीको जितने दिन रहे. उतने दिनका [1]छेद तथा तपका प्रायश्चित होता है। ३। ४। ५।

(६) साधु साध्वीयों जिस मकानमें ठहरना चाहे उस मकानमें लड्डु, शीरा, दुध, दहीं, घृत, तेल, संकुली, तील, पापडी, गुलधाणी, सीरखण आदि खुले पडे हो ऐसा मकानमें हाथकी रेखा सुझे वहांतक भी ठहरना नहीं कल्पे। मा-

---

१—दीक्षाकी अन्दर छेद कर देना अर्थात् इतने दिनोंकी दीक्षा कम समजी जाती है।

चना पूर्ववत्। अगर दुसरा मकानकी अप्राप्ति होवे, तो वहां लड्डु आदि एक तर्फ रखा हुवा हो, राशि आदि करी हुइ हो तो शीतोष्ण कालमें साधुको एक मास और साध्वीयोंको दोय मास रहेना कल्पे। अगर कोठेमें रखके तालेसे बंध करके पक्का बंदोवस्त किया हो वहांपर चातुर्मास करना भी कल्पे. इसमें भी लाभालाभका कारन और लोगोंकी भावनाका विचार विचक्षण मुनियोंको पेस्तर करना चाहिये।

(७) साध्वीयोंको (१) पन्थी लोग उतरते हो एसा मुसाफिरखानेमें, (२) वंशादिकी झाडीमें, (३) वृक्षके नीचे, और (४) चोतर्फ खुला हो ऐसा मकानमें रहेना नहीं कल्पे। कारन-उक्त स्थान पर शीलादिकी रक्षा कभी कभी मुश्कील-से होती है।

(८) उक्त च्यारों स्थान पर साधुओंको रहेना कल्पै।

(९) मकानके दाता शय्यातर कहा जाता। ऐसा शय्यातरके वहांका आहार पाणी साधु साध्वीयोंको लेना नहीं कल्पै। अगर शय्यातरके वहां भोजनादि तैयार हुवा है उन्होंने अपने वहांसे किसी दुसरे सज्जनको देनेके लिये भेजा नहीं है और सज्जनने लिया भी नहीं है, केवल शय्यातर एक पात्रमें रख भेजनेका विचार किया है, वह भोजन साधु साध्वीयोंको लेना नहीं कल्पे। कारन-वह अभी तक शय्यातरका ही है।

(१०) उक्त आहार शय्यातरने अपने वहांसे सज्जनके

वहां भेज दीया, परन्तु अभी तक सज्जनने पूर्ण तौर पर स्वीकार नहीं कीया हो, जैसे कि–भोजन आनेपर कहते है कि यहां पर रख दो, हमारे कुटुम्बवालोंकी मरजी होगी तो रख लेंगे, नहीं तो वापिस भेज देंगे ऐसा भोजन भी साधु साध्वीयोंको लेना नहीं कल्पै ।

(११) उक्त भोजन सज्जनने रख लिया हो, उसके अन्दरसे नीकला हो, और प्रवेश किया हो तो वह भोजन साधु साध्वीयोंको ग्रहण करना कल्पै ।

(१२) उक्त भोजनमें सज्जनने हानि वृद्धि न करी हो, परन्तु साधु साध्वीयोंने अपनी आम्नायसे प्रेरणा करके उसमें न्यूनाधिक करवायके वह भोजन स्वयं ग्रहण करे तो उसको दोय आज्ञाका अतिक्रम दोष लगता है, एक गृहस्थकी और दूसरी भगवानकी आज्ञा विरुद्ध दोष लगे। जिसका गुरु चतुर्मासिक प्रायश्चित होता है ।

(१३) जो दोय, तीन, च्यार या बहुत लोग एकत्र होके भोजन बनवाया है, जिसमें शय्यातर भी सामिल है, जैसे सर्व मासकी पंचायत और सन्धा कर भोजन बनाते है, उसमें शय्यातर भी सामिल होता है, वह भोजन साधु साध्वीयोंको ग्रहण करना नहीं कल्पै । अगर शय्यातर सामिल न हो तथा उसका विभाग अलग कर दीया हो, तो लेना कल्पै ।

(१४) जो कोइ शय्यातरके सज्जनने अपने वहांसे सुखडी प्रमुख शय्यातरके वहां भेजी है, उसको शय्यातरने अपनी करके रख ली हो, तो साधु साध्वीयोंको लेना नहीं कल्पै ।

(१५) अगर शय्यातरने नहीं रखी हो तो कल्पै ।

(१६) शय्यातरने अपने वहांसे सुजनके (स्वजनके) वहां भेजी हो वह नहीं रखी हो तो साधुको लेना नहीं कल्पै ।

(१७) अगर रख ली हो तो साधुको कल्पै ।

(१८) शय्यातरके मिजमान कलाचार्य विगेरे आये हो उसको रसोइ बनवानेको शय्यातरने सामान दीया है, और कहा कि-' आप रसोइ बनाओ, आपको जरूरत हो वह आप काममें लेना, शेष बचा हुवा भोजन हमारे सुप्रत कर देना ' । उस भोजनसे अगर वो शय्यातर देवे, तो साधुओंको लेना नहीं कल्पै ।

(१९) मिजवान देवे तो नहीं कल्पै ।

(२०) सामान देते वखत कहा होवे कि 'हमें तो आपको दे दिया है अब बचे उस भोजनको आपकी इच्छानुनुसार काममें लेना' । उस आहारसे शय्यातर देता हो तो साधुको नहीं कल्पै । कारन—दुसराका आहार भी शय्यातरके हाथसे साधु नहीं ले सकते है ।

(२१) परन्तु शय्यातरके सिवा कोइ देता हो तो साधु-

ओंको कल्प ग्रहन करना। शय्यातरका इतना परेज रखनेका कारन–अगर जिस मकानमें साधु ठहरे उसके घरका आहार लेनेमें प्रथम तो आधाकर्मी आदि दोष लगनेका संभव है, दुसरा मकान मिलना दुर्लभ होगा इत्यादि।

(२२) साधु साध्वीयोंको पांच प्रकारके वस्त्र ग्रहन करना कल्पे (१) कपासका, (२) उनका, (३) अलसीकी छालका, (४) सणका, (५) अर्कतूलका।

(२३) साधु साध्वीयोंको पांच प्रकारके रजोहरन रखना कल्पे (१) उनका, (२) ओटोजटका, (३) सणका, (४) मुंजका, (५) तृणोंका।

। इति श्री बृहत्कल्पसूत्रमें दूसरा उद्देशाका संक्षिप्त सार।

तीसरा उद्देशा.

(१) साधुओंको न कल्पे कि वो साध्वीयोंके मकान पर जाके उभा रहे, बैठे, सोवे, निद्रा लेवे, विशेष प्रचला करे, असन, पान, खादिम, स्वादिम करे, लघुनीति या वडी नीति करे, परठे, स्वाध्याय करे, ध्यान या कायोत्सर्ग करे, आसन लगावे, धर्मचिन्तन करे–इत्यादि कोइ भी कार्य वहां पर नहीं करना चाहिये।

(२) उक्त कार्य साध्वीयों भी साधुके मकान पर न
रे–कारन इसीसे अधिक परिचय बढ जाता है। दूसरे भी
नेक दूषण उत्पन्न होते है। अगर साधुओंके स्थान पर व्या-
ख्यान और आगमवाचना होती हो, तो साध्वीयों जा सकती
, व्यवहारसूत्रमें एसा उल्लेख है।

(३) साध्वीयोंको रोमयुक्त चर्मपर बैठना नहीं कल्पै।
भावार्थ—अगर कोइ शरीरके कारनसे चर्म रखना पडे तो भी
रोमसंयुक्त नहीं कल्पै।

(४) साधुओंको अगर किसी कारणवशात् चर्म लाना
हो तो गृहस्थोंके वहां वापरा हुवा, वह भी एक रात्रिके लिये
मांगके लावे। वह रोमसंयुक्त हो तो भी साधुओंको कल्पै।

(५) साधु साध्वीयोंको संपूर्ण चर्म, (६) सम्पूर्ण वस्त्र,
(७) अभेदा हुवा वस्त्र लेना और रखना–वापरना नहीं कल्पै।
भावार्थ– सम्पूर्ण चर्म और वस्त्र कीमती होता है, उससे चौ-
रादिका भय रहेता है, ममत्वभावकी वृद्धि होती है, उपधि
अधिक बढती है. गृहस्थोंको शंका होती है। वास्ते (८) चर्म-
खण्ड, (९) वस्त्रखण्ड, (१०) अगर अधिक रुप होनेसे सम्पूर्ण
वस्त्र ग्रहण किया हो तो भी उसका काममें आने योग्य खण्ड,
खण्ड करके साधु रख सकता है।

(११) साध्वीयोंको कान्छपाट (कच्छपटा) और
कंचुवा रखना कल्पै। स्त्रीजाति होनेसे [illegible]रक्षाके लिये

कल्पै। भावार्थ-चतुर्मास देनेवाले लोगोंको भक्तिके लिये वस्त्रादि मगवाना पडता, उससे कवगड आदि दोषका संभव है।

(१७) अगर वस्त्र लेना हो, तो चतुर्मासिक प्रतिक्रमण करनेसे पहिले ग्रहण कर लेना, अर्थात् शीतोष्णकाल आठ मासमें साधु साध्वीयोंको वस्त्र लेना कल्पै।

(१८) साधु साध्वियोंको उपयोग रखना चाहिये कि वस्त्रादि प्रथम रत्नत्रयसे वृद्ध होवे उन्होंके लिये क्रमशः लेना। एवं

(१९) शय्या-संस्तारक भी लेना।

(२०) एवं प्रथम रत्नादिको वन्दन करना। इसीसे विनय धर्मका प्रतिपादन हो सकता है।

(२१) साधु साध्वीयोंको गृहस्थके घरपे जाके बैठना, उभा रहेना, सो जाना, निद्रा लेना, प्रचला (विशेष निद्रा) करना, अशनादि च्यार आहार करना, टटी पेसाब जाना, सज्झाय ध्यान, कायोत्सर्ग और आसन लगाना तथा धर्मचिंतन करना नहीं कल्पै। कारन-उक्त कार्य करनेसे साधु धर्मसे पतित होगा। दशवैकालिकके छट्ठे अध्ययन-आचारसे भ्रष्ट, और निशीथसूत्रमें प्रायश्चित कहा है। अगर कोइ वृद्ध साधु हो, अशक्त हो, दुर्बल हो, तपस्वी हो, चक्कर आते हो, व्याधिसे पीडित हो-ऐसी हालतमें गृहस्थोंके वहां उक्त कार्य कर सकते हैं।

याचना करनी कल्पै। कारन—जीवोंकी यतना और गृहस्थोंकी प्रतीति रहै।

(२७) साधुवों जिस मकानमें ठहरे हैं, उसी मकानमें शय्या, संस्तारक आज्ञासे ग्रहण किया था, वह अपने उपभोगमें न आनेसे उसी मकानमें वापिस रख दिया, उसी दिन अन्य साधु आये और उन्हको उस शय्या संस्तारककी आवश्यकता हो, तो प्रथमके साधुसे रजा लेके भोगवे। कारन-पहिलेके साधुने अबतक गृहस्थको सुप्रत नहीं कीया। अगर पहिलेके साधुवोंका मास कल्पादि पूर्ण हो गया तो पुनः गृहस्थोंकी आज्ञा लेके उस पाटादिको वापर सकते हैं, तीसरे व्रतकी रक्षा निमित्त।

(२८) पहिलेके साधु विहार कर गये हो, उन्होंका वस्त्रादि कोइभी उपकरण रह गया हो, तो पीछेके साधुवोंको गृहस्थकी आज्ञासे लेना और जब वो साधु मिलजावे अगर उन्हका हो तो उसको दे देना चाहिये अगर उन्हका न हो, तो एकान्त स्थानपर परठ देना। भावार्थ—ग्रहण करते समय पहिले साधुवोंके नामपर लिया था, अब अपना सत्यव्रत रखनेके लिये आप काममें नहीं लेते हुवे परठना ही अच्छा है।

(२९) कोइ ऐसा मकान हो कि जिसमें कोइ रहता न हो, उसकी देखरेख भी नहीं करता हो, किसीकी मालिकी न हो, कोइ पंथी (मुसाफिर) लोक भी नहीं ठहरता हो, उस

साथमें भोजन न करना चाहिये. भावार्थ-ऐसे अयोग्यको गच्छमें रखनेसे शासनकी हीलना होती है. दुसरे साधुवोंको भी चेपी रोग लग जाता है. वास्ते जिस समय ज्ञात हो कि तीनों दुर्गुणोंसे कोइभी दुर्गण है, तो उसे मधुर वचनों द्वारा हित शिक्षा देके अपनेसे अलग कर देना. विशेष विस्तार देखो प्रवचन सारोद्धार.

(५) अविनयवंत हो, विगइके लोलुपी हो, निरंतर कषाय करनेवाला हो, इस तीन दुर्गणोंवालोंको आगम वाचनादि ज्ञान नहीं देना चाहिये. कारण-सर्पको दुध पीलानाभी विषवृद्धिका कारण होता है.

(६) विनयवान हो, विगइका प्रतिबंधी न हो, दीर्घ कषायवाला न हो, इस तीन भव्य गुणोंवालोंको आगम ज्ञानकी वाचना देना चाहिये. कारण-वाचना देना, यह एक शासनका स्तंभ-आलंबन है.

(७) दुष्ट-जिसका हृदय मलीन हो, मूढ-जिसको हिताहितका ख्याल न हो, और कदाग्रही-इस तीनोंको बोध लगना असंभव है.

(८) अदुष्ट, अमूढ और भद्रिक-सरल स्वभावी-इस तीनोंको प्रतिबोध देना सुसाध्य है.

(९) साधु बीमार होनेपर तथा किसी स्थानसे गिरिते हुवेको दुसरे साधुके अभावसे उसी साधुकी संसार अवस्थाकी

माता बहिन और पुत्री-उस साधुको ग्रहण करे. उसका कोमल स्पर्श हो तो अपने दिलमें अकृत्य (मैथुन) भावना लावे तो गुरुचातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है.

(१०) एवं साध्वीको अपना पिता, भाइ या पुत्र ग्रहण कर सके.

(११) साधु-साध्वीयोंको जो प्रथम पोरसीमें ग्रहण कीया हुवा अशनादि च्यार प्रकारके आहार, चरम (छेल्ली) पोरसी तक रखना तथा रखके भोगवना नहीं कल्पे. अगर अनजान (भूल) से रहभी जावे, तो उसको एकांत निर्जीव भूमिका देख परठे. और आप भोगवे या दुसरे साधुवोंको देवे तो गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है.

(१२) साधु-साध्वीयोंको जो अशनादि च्यार प्रकार के आहार जिस ग्रामादिमें किया हो, उससे दोय कोस उपरांत ले जाना नहीं कल्पे. अगर भूलसे ले गया हो, तो पूर्ववत् परठ देना, परंतु नहीं परठके आप भोगवे या अन्य साधुवोंको देवे तो गुरुचातुर्मासिक प्रायश्चित आता है.

(१३) साधु-साध्वी भिक्षा ग्रहण करते हुवे, अगर अनजानसे दोषित आहार ग्रहण कीया, बादमें ज्ञात होनेपर उस दोषित आहारको स्वयं नहीं भोगवे, किन्तु कोइ नव दिक्षित साधु हो (जिसको अभी बडी दीक्षा लेनी है) उसको देना कल्पे. अगर असा न हो तो पूर्ववत् परठ देना चाहिये.

(१४) प्रथम और चरम तीर्थंकरोंके साधुवोंके लीये

किसी गृहस्थोंने आहार बनाया हो तो उस साधुवोंको लेना नहीं कल्पै.

(१५) मध्यके २२ जिनोंके साधुवोंको प्रज्ञावंत और ऋजु (सरल) होनेसे कल्पै.

(१६) मध्य जिनोंके साधुवोंके लीये बनाया हुवा अशनादि बावीस तीर्थंकरोंके साधुवोंको लेना कल्पै.

(१७) परन्तु प्रथम-चरम जिनोंके साधुवोंको नहीं कल्पै.

(१८) साधु कदी ऐसी इच्छा करे कि मैं स्वगच्छसे नीकलके परगच्छमें जाउं, तो उस मुनिको—

(१) आचार्य-गच्छनायक. (२) उपाध्याय-आगमवाचनाके दाता. (३) स्थविर-सारणा वारणा दे. अस्थिरको मधुर वचनोंसे स्थिर करे. (४) प्रवर्तक-साधुवोंको अच्छे रस्तेमें चलनेकी प्रेरणा करे. (५) गणी-जिनके समीप आचार्यने पदार्थ धारण कीया हो. (६) गणधर-जो गच्छको धारण करके उनकी सार-संभाल करते हो. (७) गणविच्छेदक-जो चलाय. पांच साधुवोंको लेकर विहार करते हो. इन सात पदवीधरोंको पूछे बिगर अन्य गच्छमें जाना नहीं कल्पै. पूछनेपर भी उक्त सातों पदवीधर विशेष कारण जानके आज्ञा देवे. तो अन्य गच्छमें जाना कल्पै. अगर आज्ञा नहीं देवे तो, जाना नहीं कल्पै.

(१९) गणविच्छेदक स्वगच्छको छोडके परगच्छमें

जानेका इरादा करे तो उसको अपनी पदी दुसरेको दीया सिवाय जाना नहीं कल्पे, परंतु पदी छोडके सात पदीवालोंको पूछे, अगर आज्ञा दे, तो अन्य गच्छमें जाना कल्पे, आज्ञा नहीं देवे तो नहीं कल्पे.

(२०) आचार्य, उपाध्याय, स्वगच्छ छोडकर परगच्छमें जानेका इरादा करे, तो अपनी पदी अन्यको दीया सिवा अन्य गच्छमे जाना नहीं कल्पे. अगर पदी दुसरेको देनेपरभी पूर्ववत् सात पदीवालोंको पूछे, अगर वह सात पदीवाले आज्ञा दे, तो जाना कल्पे, आज्ञा नहीं देवे तो जाना नहीं कल्पे. भावार्थ—अन्य गच्छके नायक कालधर्म प्राप्त हो गये हो पीछे साधु समुदाय बहुत है, परंतु सर्व साधुवोंका निर्वाह करने योग्य साधुका अभाव है, इस लीये साधु गणविच्छेदक तथा आचार्य महालाभका कारण जान, अपने गच्छको छोड उपकार निमित्त परगच्छमें जावे उसका निर्वाह करे. आज्ञा देनेवाले अन्य गच्छका आचार धर्म आदिकी योग्यता देखे तो जानेकी आज्ञा देवे. अथवा नहींभी देवे

(२१) इसी माफिक साधु इरादा करेकि अन्य गच्छवालोंके साधुवोंसे संभोग (एक मंडलेमें साथमें भोजनका करना) करें, तो पेस्तर पूर्ववत् सात पदीवालोंसे आज्ञा लेवें, अगर आचार्यने, उपाध्यायने, स्थविरने [illegible] आज्ञा देवे, तो परगच्छके साथ संभोग कर सके, अगर आज्ञा नहीं देवे, तो नहीं करे.

(२२) एवं—गणविच्छेदक.

(२३) एवं—आचार्योपाध्यायभी समझना.

(२४) साधु इच्छा करेकि मैं अन्य गच्छमें साधुवोंकी वैयावच्च करनेको जाऊं, तो कल्पे—उस साधुवोंको, पूर्ववत् सात पद्वीधरोंको पूछे. अगर वह आज्ञा देवे तो जाना कल्पे, आज्ञा नहीं देवे तो नहीं कल्पे.

(२५) एवं गणविच्छेदक.

(२६) एवं आचार्योपाध्याय. परन्तु अपनी पद्वी अन्यको देके जा सके है.

(२७) साधु इच्छा करे कि मैं अन्य गच्छमें साधुवोंको ज्ञान देनको जाऊं, पूर्ववत् सात पद्वीधरोंको पूछे. अगर आज्ञा देवे तो जाना कल्पे. और आज्ञा नहीं देवे तो जाना नहीं कल्पे.

(२८) एवं गणविच्छेदक.

(२९) एवं आचार्योपाध्याय. परन्तु अपनी पद्वी दुसरेको देके आज्ञा पूर्वक जा सकते है. भावार्थ—अन्य गच्छके गीतार्थ साधु काल धर्म प्राप्त हो गये हो. शेष साधुवर्ग अगीतार्थ हो. इस हालतमें अन्याचार्य विचार कर सकते हैं. कि मेरे गच्छमें तो गीतार्थ साधु बहुत है. मैं इस अगीतार्थ साधुवाले गच्छमें जाके इसमें ज्ञानाभ्यास करनेवाले साधुवोंको ज्ञानाभ्यास करा के योग्य पदपर स्थापन कर. गच्छकी अच्छी व्यवस्था करदूं

इसीसे भविष्यमें बहुत ही लाभका कारन होगा. इस इरादेसे अन्य गच्छमें जा सकते है.

(नोट) इन्ही महात्मात्रोंकी कितनी उच्च कोटिकी भावना और शासनोन्नति, आपसमें धर्मस्नेह है. ऐसी प्रवृति होनेसे ही शासनकी प्रभावना हो सकती है.

(३०) कोइ साधु रात्रीमें या वेकाल समयमें कालधर्म प्राप्त हो जाय तो अन्य साधु गृहस्थ संबंधी एक उपकरण (वांस) मरचीना याचना करके लावे और कंबली प्रमुखकी झोली बनाके उस वांसमें एकांत निर्जीव भूमिकापर परठे. भावार्थ—वांस लाती वखत हाथमें उसा वांसको पकडे, लाते समय कोइ गृहस्थ पूछे कि–' हे मुनि ! इस वांसको आप क्या करोगे ? ' मुनि कहे–' हे भद्र ! हमारे एक साधु कालधर्म प्राप्त हो गया है, उसके लीये हम यह वांस ले जाते है. इतनेमें अगर गृहस्थ कहे कि–हे मुनि ! इस मृत मुनिकी उत्तर क्रिया हम करेंगे, हमारा आचार है तो साधुओंको उस मृत कलेवरको वहांपर ही वोसिराय देना चाहिये. नहि तो अपनी रीति माफिक ही करना उचित है.

(३१) साधुओंके आपसमें क्रोधादि कषाय हुवा हो तो उस साधुओंको विना खमतखामणा–(१) गृहस्थों के घरपर गौचरी नहीं जाना, अशनादि च्यार प्रकारका आहार करना नहीं कल्पै. टटी पैसाव करना, एक गाममें दुसरे गाम जाना, और एक गच्छ छोडके दुसरे गच्छमें जाना नहीं कल्पै. अगर

चातुर्मास करना नहीं कल्पै. भावार्थ—कालका विश्वास नहीं है. अगर अैसीही अवस्यामें काल करें, तो विराधक होता है. वास्ते खमतखामणा कर अपने आचार्योपाध्याय तथा गीतार्थ मुनियोंके पास आलोचना कर प्रायश्चित्त लेके निर्मल चित्त रखना चाहिये.

(३२) आलोचना करने परभी राग-द्वेषके कारणने आचार्यादि न्यूनाधिक प्रायश्चित्त देवे, तो नहीं लेना. अगर सूत्रानुसार प्रायश्चित्त देनेपर शिष्य स्वीकार नहीं करता हो, तो उसको गच्छके अन्दर नहीं रखना. कारण-अैसा होनेसे दुसरे साधुभी अैसाही करेंगे इसीसे भविष्यमें गच्छ-मर्यादा. और संयम व्रत पालन करना दुष्कर होगा, इत्यादि.

(३३) परिहार विशुद्ध (प्रायश्चित्तका तप करता हुवा) साधुको आहार पाणी एक दिनके लीये अन्य साधु साथमें जाके दिला सके, परन्तु हमेशां के लीये नहीं. कारण एक दिन उसको विधि बतलाय देवे. परन्तु वह साधु व्याधिग्रस्त हो डुंबर हो, कमजोर हो, तो उसको अन्य दिनोंमें भी आहार-पाणी देना दिलाना कल्पै. जब अपना प्रायश्चित्त पूर्ण हो जावे, तब वैयावच्च करनेवाला साधु भी प्रायश्चित्त लेवे, व्यवहार रखनेके कारणसे.

(३४) साधु-साध्वीयोंको एक मासकी अन्दर दोय. तीन, च्यार. पांच महानदी उतरणी नहीं कल्पै. यथा-(१) गंगा, (२) यमुना, (३) सरस्वती, (४) कोशिका, (५) मही,

इस नदीयोंकी अन्दर पाणी बहुत रहेता है, अगर आर्धी जंघ प्रमाण पानी हो, कारणात् उसमें उतरणा भी पडे, तो एक पग जलमें और दुसरा पगको उंचा रखना चाहिये. दुसरा पग पाणीमें रखा जावे तब पहिलाका पग पाणीसे निकाल उंचा रखे, जहांतक पाणीकी बुंद उस पगमे गिरनी बंध हो जाय इस विधिसे नदी उतरनेका कल्प है. इसी माफिक कुनाल देशमें ऐरावंती नदी है.

(३५) तृण, तृणपुंज, पलाल, पलालपुंज, आदिसे जो मकान बना हुवा है, और उसकी अन्दर अनेक प्रकारके जीवोंकी उत्पत्ति हो, तो ऐसा मकानमें साधु, साध्वीयोंको ठहरना नहीं कल्पै.

(३६) अगर जीवादिरहित हो, परन्तु उभा हुवा मनुष्यके कानोंसे भी नीचा हो, ऐसा मकानमें शीतोष्ण काल ठहरना नहीं कल्पै. कारण उभा होनेपर और क्रिया करते हर समय शिरमें लगता. मकानको नुकशानी होती है.

(३७) अगर कानोंसे उंचा हो, तो शीतोष्ण कालमें ठहरना कल्पै.

(३८) उक्त मकान मस्तक तक उंचा हो तो वहां चातुर्मास करना नहीं कल्पै.

(३९) परन्तु मस्तकसे एक हस्त परिमाण उंचा हो तो साधु साध्वीयोंको उस मकानमें चातुर्मास करना कल्पै.

। इति श्री बृहत्कल्पसूत्रका चौथा उद्देशाका संक्षिप्त सार ।

पांचवा उद्देशा.

(१) किसी देवताने स्त्रीका रुप वैक्रिय बनाके किसी साधुको पकडा हो, उसी समय उस वैक्रिय स्त्रीका स्पर्श होनेसे साधु मैथुनसंज्ञाकी इच्छा करे, तो गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है.

(२) एवं देव पुरुषका रुप करके साध्वीको पकडने पर भी.

(३) एवं देवी स्त्रीका रुप बनाके साधुको पकडे तो.

(४) देवी पुरुषरुप बनाके साध्वीको पकडने पर भी समझना. भावार्थ—देव देवी मोहनीय कर्म-उदीरण विषय परीपह देवे, तो भी साधुवोंको अपने व्रतोंमें मजबुत रहना चाहिये.

(५) साधु आपसमे कषाय-क्रोधादि करके स्वगच्छसे नीकलके अन्य गच्छमें गया हो तो उस गच्छके आचार्यादिकोंको जानना चाहिये कि उस आये हुवे साधुको पांच रोजका छेद प्रायश्चित्त देके स्नेहपूर्वक अपने पासमें रखे. मधुर वचनोंसे हितशिक्षा देके वापिस उसी गच्छमें भेज देवे. कारण ऐसी प्रवृत्ति रखनेसे साधु स्वच्छन्द न बने. एक दुसरे गच्छकी प्रतीति विश्वास बना रहे, इत्यादि.

(६) साधु-साध्वीयोंकी निवाहवृत्ति सूर्योदयसे अस्त तक है. अगर कोइ कारणात् समर्थ साधु निःशंकपणे-अर्थात्

बादला या पर्वतका आडसे सूर्य नहीं दिखा, परन्तु यह जाना जाता था कि सूर्य अवश्य होगा. तथा उदय हो गया है, इस इरादासे आहार-पानी ग्रहण कीया. बादमें मालुम हुवा कि सूर्य अस्त हो गया तथा अभी उदय नहीं हुवा है, तो उस आहारको भोगवता हो, तो मुंहका मुंहमें हाथका हाथमें और पात्रका पात्रमें रखे, परन्तु एक बिन्दु मात्र भी खावे नहीं, सबको अचित्त भूमिपर परठ देना चाहिये, परन्तु आप खावे नहीं, दुसरेको देवे नहीं, अगर खबर पडनेके बाद आप खावे, तथा दुसरेको देवे तो उस मुनियोंको गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त आवे.

(७) एवं समर्थ शंकावान्.

(८) एवं असमर्थ निःशंक.

(९) एवं असमर्थ शंकावान् । भावार्थ—कोइ आचार्यादिक वैयावच्च के लीये शीघ्रता पूर्वक विहार कर मुनि आ रहा है किसी ग्रामादिमें सवेरे गोचरी न मिलीथी श्यामको किसी नगरमें गया. उस समय पर्वतका आड तथा बादलमें सूर्य जानके भिक्षा ग्रहण की और सवेरे सूर्योदय पहिले वस्त्रादि ग्रहण करी हो, ग्रहन कर भोजन करनेको बेठनेके बाद ज्ञात हुवा कि शायद सूर्योदय नहीं हुवा हो अथवा अस्त हो गया हो ऐसा दुसरोंसे निश्चय हो गया हो तो उस मुंहका, हाथका और पात्रका सब आहारको निर्जीव भूमिपर परठ देनेसे आज्ञाका उल्लंघन नहीं होता है.

(१०) अगर रात्रि या वैकाल समयमें मुनिको भात-पाणीका उगाला आ गया हो. तो उसको निर्जीव भूमिपर यत-नापूर्वक परठ देना चाहिये. अगर नहीं परठे और पीछा गले उतार देवे, तो उस मुनिको रात्रि भोजनका पाप लगनेसे गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित होता है.

(११) साधु-साध्वीयोंको जीव सहित आहार-पानी ग्रहन करना नहीं कल्पै. अगर अनजानपणे आ गया हो, जैसे साकर-खांडमे कीडी प्रमुख उसको साधु समर्थ है कि जीवोंको अलग कर सके. तो जीवोंको अलग करके निर्जीव आहारको भोगवे कदाच जीव अलग नहीं होता हो तो उस आहारको एकान्त निर्जीव भूमिका देखके यतनापूर्वक परठे.

(१२) साधु-साध्वी गौचरी लेके अपने स्थानपर आ रहे है, उस समय उस आहारकी अन्दर कचे पानीकी बुंद गिर जावे, अगर वह आहार गरमागरम हो तो आप स्वयं भोगवे दुसरेको भी देवे. कारण-उस पानीके जीव उष्णाहारसे चव जाते है. परन्तु आहार शीतल हो तो न आप भोगवे, और न तो अन्य साधुवोंको देवे. उस आहारको विधिपूर्वक एकांत स्थानपर जाके परठे.

(१३) साध्वी रात्रि तथा वैकाल समय टटी-पेसाब करते समय किसी पशु-पक्षी आदिके इंद्रिय स्पर्श हो, तो आप हस्तकर्म तथा मैथुनादि दुष्ट भावना करे, तो गुरु चातु-र्मासिक प्रायश्चित होता है.

(१४ एवं शरीर शुद्धि करते वखत पशु-पक्षीकी इंद्रि यसे अकृत्य कार्य करनेसे भी चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है. यह दोनों सूत्र मोहनीय कर्मापेक्षा है. कारण-कर्मोंकी विचित्र गति है. वास्ते अैसे अकृत्य कार्योंके कारणोंको प्रथम ही शास्त्रकारोंने निषेध कीया है.

(१५) साध्वीयोंको निम्नलिखित कार्य करना नहीं कल्पै.

(१६) एकेलीको रहना,

(१७) एकेलीको टट्टी-पैसाव करनेको जाना

(१८) एकेलीको विहार करना,

(१९) वस्त्ररहित होना,

(२०) पात्ररहित गौचरी जाना,

(२१) प्रतिज्ञा कर ध्यान निमित्त कायाको वोसिरा देना,

(२२) प्रतिज्ञा कर एक पसवा (वा)डे सोना,

(२३) ग्राम यावत् राजधानीसे बाहार जाके प्रतिज्ञापूर्वक ध्यान करना नहीं कल्पै. अगर ध्यान करना हो तो अपने उपासरेकी अन्दर दरवाजा बन्ध कर ध्यान कर सकते है.

(२४) प्रतिमा धारण करना,

(२५) निषद्या-जिसके पांच भेद है-दोनों पांव बराबर रख बैठना, पांव योनिसे स्पर्श करते बैठना, पांवपर पांव चढाके बैठना, पालटी मारके बैठना, अर्द्ध पालटी मारके बैठना,

(२६) वीरासन करना,

(२७) दंडासन करना,

(२८) श्रोकडु आसन करना.

(२६) लगड आसन करना,

(३०) आम्रखुजासन करना.

(३१) उर्ध्व मुख कर मोना,

(३२) अधोमुख कर सोना.

(३३) पांव उर्ध्व करना,

(३४) टींचखोंपर होना-यह सर्व साध्वीके लीये निषेध कीया है. वह अभिग्रह-प्रतिज्ञाकी अपेक्षा है. कारण-प्रतिज्ञा करनेके बाद कितने ही उपसर्ग क्यों नहीं हो? परन्तु उससे चलित होना उचित नहीं है. अगर ऐसे आसनादि करनेपर कोइ अनार्य पुरुष अकृत्य करनेपर ब्रह्मचर्यका रक्षण करना आवश्यक है. वास्ते साध्वीयोंको ऐसे अभिग्रह करनेका निषेध कीया है. अगर मोक्षमार्ग ही साधन करना हो तो दुसरे भी अनेक कारण है. उसकी अन्दर यथाशक्ति प्रयत्न करना चाहिये.

(३५) साधु उक्त अभिग्रह-प्रतिज्ञा कर सकते है.

(३६) साधु गोडाचालक ही लगाके बेठ सकता है.

(३७) साध्वीयोंको गोडाचालक ही लगाके बेठना नहीं कल्पे.

(३८) साधुवोंको पीछाडी घाटो सहित (खुरसीके आकार) पाटपर बेठना कल्पे.

(३६) असे साध्वीयोंको नहीं कल्पै.

(४०) पाटाके शिरपर पागावोंका आकार होते है, असा पाटापर साधुवोंको बेठना सोना कल्पै.

(४१) साध्वीयोंको नहीं कल्पै.

(४२) साधुवोंको नालिका सहित तुंबडा रखना और भोगवना कल्पै.

(४३) साध्वीयोंको नहीं कल्पै.

(४४) उघाडी डंडीका राजेहरण (कारणात् १॥ मास) रखना और भोगवना कल्पै.

(४५) साध्वीयोंको नहीं कल्पै.

(४६) साधुवोंको डांडी संयुक्त पुंजणी रखना कल्पै.

(४७) साध्वीयोंको नहीं कल्पै.

(४८)साधु-साध्वीयोंको आपसमें लघु नीति (पेसाब) देना लेना नहीं कल्पै. परन्तु कोइ अतिकारन हो, तो कल्पै भी. भावार्थ—किसी समय साधु एकेला हो और सर्पादिका कारण हो, असे अवसरपर देना लेना कल्पै भी.

(४६) साधु साध्वीयोंको प्रथम प्रहरमे ग्रहन कीया हुवा अशनादि आहार, चरम प्रहरमे रखना नहीं कल्पै. परन्तु अगर कोइ अति कारन हो, जैसे साधु बिमार होवे और बतलाया हुवा भोजन दुसरे स्थानपर न मिले. इत्यादि अपवादमें कल्पै भी सही.

(५०) साधु-साध्वीयोंको ग्रहन कीये स्थानसे दो कोश उपरांत ले जाना अशनादि नहीं कल्पै. परन्तु अगर कोई विशेष कारण हो तो—जैसे किसी आचार्यादिकी वैयावच के लीये शीघ्रतापूर्वक जाना है. क्षुधासहित चल न सकै, रस्तेमें ग्रामादि न हो. तो दोय कोश उपरांत भी ले जा सक्ते है.

(५१) साधु-साध्वीयोंको प्रथम प्रहरमें ग्रहन कीया हुवा विलेपनकी जाति चरम प्रहरमें नहीं कल्पै. परन्तु कोइ विशेष कारन हो तो कल्पै. (५२) एवं तेल, घृत, मखन, चरबी. (५३) काकल द्रव्य, लोद्र इत्यादि भी समझना.

(५४) साधु अपने दोषका प्रायश्चित कर रहा है. अगर उस साधुको किसी स्थविर (वृद्ध) मुनियोंकी वैयावचमें भेजे, और वह स्थविर उस प्रायश्चित तप करनेवाले साधुका लाया आहार पानी करे. तो व्यवहार रखनेके लीये नाम मात्र प्रायश्चित उन स्थविरोंको भी देना चाहिये. इससे दुसरे साधुवोंको क्षोभ रहता है.

(५५) साध्वीयों गृहस्थोंके वहां गौचरी जानेपर किसीने सरस आहार दीया. तो उन साध्वीयोंको उस रोज इतना ही आहार करना, अगर उस आहारसे अपनी पूर्ती न हुइ. ज्ञान-ध्यान ठीक न हो. तो दुसरी दफे गौचरी जाना. भावार्थ—सरस आहार आने पर अधिक उपाधिमें आना चाहिये.

सबसे पूछना चाहिये. कारण-फिर ज्यादा हो तो परठनेमें महान् दोष है. वास्ते उणोदरी तप करना.

॥ इति श्री बृहत्कल्प सूत्रका पांचवा उद्देशाका संक्षिप्त सार॥

छट्टा उद्देशा.

(१) साधु-साध्वीयों किसी जीवोंपर

(१) अछता-कूडा कलंक देना,
(२) दुसरेकी हीलना-निंदा करना,
(३) किसीका जातिदोष प्रगट करना,
(४) किसीकोंभी कठोर वचन बोलना,
(५) गृहस्थोंकी माफिक हे माता, हे पिता, हे मामा, हे मामी-इत्यादि मकार चकारादि शब्द बोलना.
(६) उपशमा हुवा क्रोधादिककी पुनः उदीरणा करनी यह छे वचन बोलना साधु-साध्वीयोंको नहीं कल्पे. कारन-इनसे परजीवोंको दुःख होता है, साधुकी भाषासमितिका भंग होता है.

(२) साधु-साध्वीयों अगर किसी दुसरे साधुवोंका दोषको जानते हो, तोभी उसकी पूर्ण जाच करना, निर्णय करना, गवाह करना, बादहीमें गुर्वादिकको कहना चाहिये. अगर ऐसा न करता हुवा एक साधु दुसरे साधुपर आक्षेप कर दे तो गुर्वादिकको जानना चाहियेकि आक्षेप करनेवालेको प्रा

थित देवे अगर प्रायश्चित न देवेगा तो, कोइभी साधु किसीके साथ स्वल्पही द्वेष होनेसे आक्षेप कर देगा. इसके लीये कल्पके छे पत्थर कहा है. (१) कोइ साधुने आचार्यसे कहाकि अमुक साधुने जीव मारा है. जीस साधुका नाम लीया, उसको आचार्य पूछेकि- हे आर्य ! क्या तुमने जीव मारा है ? अगर वह साधु स्वीकार करेकि-हां महाराज ! यह अकृत्य मेरे हाथसे हुवा है, तो उस मुनिको आगमानुसार प्रायश्चित देवे. अगर वह साधु कहेकि—नहीं. मैंने तो जीव नहीं मारा है. तब आक्षेप करनेवाले साधुको पूछना, अगर वह पूर्ण साबुती नहीं देवे. तो जितना प्रायश्चित जीव मारनेका होता है, उतनाही प्रायश्चित उस आक्षेप करनेवाले साधुको देना चाहियेकि दूसरी वार कोइभी साधु किसीपर जुठा आक्षेप न करे. भावार्थ—निर्मल साधु तो जुठा आक्षेप करते नहीं, परन्तु कर्मोकी विचित्र गति होती है. कभी द्वेषका मारा कहभी देवे. तो गच्छ निर्वाहकारक आचार्यको इस नीतिका प्रयोग करना चाहिये. (२) एवं मृषावाद आक्षेपका, (३) एवं चोरि आक्षेपका, (४) एवं मैथुन आक्षेपका, (५) एवं नपुंसक आक्षेपका (६) एवं जातिहीन आक्षेपका—एवं छेबोल समझना.

(२) साधुके पगमें कांटा, खीला, कंच, काच–आदि लागा हो, उस समय साधु निकालनेको विद्यादि करनेको असमर्थ हो, ऐसी हालतमें साध्वी उस कांटा आदि आपसंदेको हस्ते निकाले, तो जिनाज्ञा उल्लंघन नहीं होता है. भावार्थ—

गृहस्थोंका सर्व योग सावद्य है, वास्ते गृहस्थोंसे नहीं निकलवाना, धर्मबुद्धिसे साध्वीयोंसे नीकलाना चाहिये. कारन-ऐसा कार्यतो कभी पडता है. अगर गृहस्थोंसे काम करानेमें छुट होगा, तो आखिर परिचय बढनेका संभव होता है.

(४) साधुके आँखों (नेत्रों) मे कोइ तृण, कुस, रज, बीज या सुक्ष्म जीवादि पड जावे, उस समय साधु निकालनेमें असमर्थ हो, तो पूर्ववत् साध्वीयों निकाले, तो जिनाज्ञाका उल्लंघन नहीं होता है. (कारणवशात्) एवं (५-६) दोय अलापक साध्वीयोंके कांटादि या नेत्रोंमे जीवादि पड जानेसे साध्वीयों असमर्थ हो तो, साधु निकाल सक्ता है, पूर्ववत्.

(७) साध्वी अगर पर्वतमे गिरती हो, विषम स्थानमें पडती हो, उस समय साधु धर्मपुत्री समज, उसको आलंबन दे, आधार दे, पकड ले, अर्थात् संयम रक्षण करता हुवा जिनाज्ञाका उल्लंघन नहीं होता है. अर्थात् वह जिनाज्ञाका पालन करता है.

(८) साध्वीयों पाणी सहित कर्दममें या पाणी रहित कर्दममें खुंची हो, आप व्हार निकलेमें असमर्थ हो, उस साधु धर्मपुत्री समज हाथ पकड बाहार निकाले तो भगवानकी आज्ञा उल्लंघन नही करे, किन्तु पालन करे.

(९) साध्वी नौकापर चढती उतरती, नदी में डुबती को साधु हाथ पकड निकाले तो पूर्ववत् जिनाज्ञाका पालन करता है.

(१०) साध्वीयों दत्तचित्त (विषयादिसे),

(११) क्षित चित्त (क्षोभ पानेसे),

(१२) यक्षाधिष्ठित,

(१३) उन्मत्तपनेसे,

(१४) उपसर्ग के योगसे,

(१५) अधिकरण–क्रोधादिसे,

(१६) सप्रायश्चित्तसे.

(१७) अनशन करी हुइ ग्लानपनासे,

(१८) सलोभ धनादि देखनेसे, इन कारणोंसे संयमका त्याग करती हुइ, तथा आपघात करती हुइको साधु हाथ पकड रखे, चित्तको स्थिर करे, संयमका साहित्य देवे तो भगवानकी आज्ञाका उल्लंघन न करे, अर्थात् आज्ञाका पालन करे.

(१९) साधु साधुवीयोंके कल्पके पलिमन्थु छे प्रकार के होते हैं. जैसे सूर्यकी कांतिको बादले दबा देते हैं, इसी प्रकार छे बातों साधुवोंके संयमको निस्तेज कर देती है. यथा (१) स्थान चपलता, शरीर चपलता, भाषा चपलता–यह तीनों चपलता संयमका पलिमन्थु है. अर्थात् (कुकइ) संयमका पलिमन्थु है. (२) वार वार बोलना, सत्यभाषाका पलिमन्थु है. (३) तुण तुणाट अर्थात् आतुरता करना गोचरीका पलिमन्थु है. (४) चक्षु लोलुपता–इर्यासमितिका पलिमन्थु है. (५)

इच्छा लोलुपता अर्थात् तृष्णाको बढाना, यह सर्व कार्योंका पलिमन्थु है. (६) तप-संयमादि कृत कार्यका बार बार निदान (नियाणा) करना, यह मोक्ष मार्गका पलिमन्थु है. अर्थात् यह छे बातों साधुवोंको नुकशानकारी है. वास्ते त्याग करना चाहिये.

(२०) छे प्रकार के कल्प है. (१) सामायिक कल्प, (२) छेदोपस्थापनीय कल्प, (३) नियट्टमाण, (४) नियट्टकाय, (५) जिनकल्प, (६) स्थविरकल्प इति.

इति श्री बृहत्कल्पसूत्र—छट्ठा उद्देशाका संक्षिप्त सार.

इति श्री बृहत्कल्पसूत्रका संक्षिप्त सार समाप्त.

॥ श्री देवगुप्तसूरीश्वर सद्गुरुभ्यो नमः ॥

अथश्री

शीघ्रबोध भाग १० वा।

अथश्री दशाश्रुतस्कन्धसूत्रका संक्षिप्त सार.

(अध्ययन दश.)

(१) **प्रथम अध्ययन**—पुरुष अपनी प्रकृतिसे विकृत आचरण करनेसे असमाधिका कारण होता है. इसी माफिक मुनि अपने संयम-प्रतिकूल आचरण करनेसे संयम-असमाधिको प्राप्त होता है. जिसके २० स्थान शास्त्रकारोंने बतलाया है. यथा—

(१) आतुरतापूर्वक चलनेसे असमाधि-दोष.

(२) रात्रि समय विगर पुंजी भूमिकापर चलनेसे असमाधि दोष.

(३) पुंजे तोभी अविधिसे कहांपर पुंजे, कहांपर नहीं पुंजे तो असमाधि दोष.

(४) मर्यादासे अधिक शय्या, संस्तारक भोगवे तो अस० दो०

(५) रत्नत्रयादिसे वृद्ध जनोंके सामने बोले, अविनय करे तो अस० दो०

(६) स्थविर मुनियोंकी घात चिंतवे, दुर्ध्यान करे तो अस० दोष०

(७) प्राणभूत जीव-सत्त्वकी घात चिंतवे, तो अस० दोष.

(८) किसीके पीछे अवगुण-वाद बोलनेसे अस० दोष.

(९) शंकाकारी भाषाको निश्चयकारी बोलनेसे अस० दोष.

(१०) वार वार क्रोध करनेसे अस० दोष.

(११) नया क्रोधका कारण उत्पन्न करनेसे अस० दोष.

(१२) पुराणे क्रोधादिकी उदीरणा करनेसे अस० दोष.

(१३) अकालमें सज्झाय करनेसे अस० दोष.

(१४) प्रहर रात्रि जानेके बाद उंच स्वरसे बोले तो अस० दोष लगे.

(१५) सचित्त पृथ्व्यादिसे लिप्त पावोसे आसनपर बैठे तो अस० दोष लगे.

(१६) मनसे झूझ करे किसीका खराब होना इच्छे तो अस० दोष.

(१७) वचनसे झूझ करे, किसीको दुर्वचन बोले तो अस० दोष लगे.

(१८) कायासे झूझ करे अंग मोडे कटका करे, तो अस० दोष.

(१९) सूर्योदयसे अस्ततक लाना, खानेमे मस्त रहे तो अस० दोष.

(२०) मात-पाणीकी शुद्ध गवेषणा न करनेसे असं० दोष.
इन बोलोंको सेवन करनेसे साधु, साध्वीयोंको असमाधि दोष लगता है. अर्थात् संयम असमाधि (कमजोर) को प्राप्त करता है. वास्ते मोक्षार्थी महात्मावोंको सदैवके लीये यतना पूर्वक संयमका तप करना चाहिये.

॥ इति प्रथम अध्ययनका संक्षिप्त सार ॥

---

(२) दूसरा अध्ययन.

जैसे संग्राममें गये हुवे पुरुषको गोलीकी चोट लगनेसे अथवा सबल प्रहार लगनेसे बिलकुल कमजोर हो जाता है: इसी माफिक मुनियोंके संयममें निम्न लिखित २१ सबल दोष लगनेसे चारित्र बिलकुल कमजोर हो जाता है. यथा—

(१) हस्तकर्म (कुचेष्टा) करनेसे सबल दोष.
(२) मैथुन सेवन करनेसे सबल दोष.
(३) रात्रिभोजन करनेसे ,, ,,
(४) आदाकर्मी आहार, वस्त्र, मकानादि सेवन करनेसे सबल दोष.
(५) राजपिंड भोगनेसे* सबल दोष.
(६) मूल्य देके लाया हुवा, उधारा हुवा, निर्बलके पाससे

---

* राजपिंड—(१) राज्याभिषेक करते समय. (२) राजाके [illegible] आहार [illegible] पौष्टिक हो. (३) राजाके भोजन समये बचा हुआ आहारमें पडे लोगोंका विभाग होता है.

जबरदस्तीसे लाया हुवा, भागीदारकी विगर मरजीसे लाया हुवा, और सामने लाया हुवा–येसे पांच दोष संयुक्त आहार–पाणी भोगनेसे सबल दोष लगे.

(७) प्रत्याख्यान कर वार वार भंग करनेसे सबल दोष.

(८) दीक्षा लेके छे मासमें एक गच्छसे दुसरे गच्छमें जानेसे सबल दोष लगे.

(६) एक मासमें तीन उदग (नदी) लेप+लगानेसे सबल दोष.

(१०) एक मासमें तीन मायास्थान सेवे तो सबल दोष.

(११) शय्यातरके यहांका अशनादि भोगनेसे सबल दोष.

(१२) जानता हुवा जीवको मारनेसे सबल दोष लगे.

(१३) जानता हुवा जूठ बोले तो सबल दोष.

(१४) जानता हुवा पृथ्व्यादिपर बैठ- सोवे तो सबल दोष लगे.

(१६) स्नाव पृथ्व्यादि पर बैठ, सोवे, सज्झाय करे तो सबल दोष.

(१७) त्रस, स्थावर, तथा पांच वर्णकी नील, हरी अंकुर यावत् कलोडीयें जीवोंके झालोंपर बैठ, सोवे तो सबल दोष लगे.

(१८) जानता हुवा कची वनस्पति, मूलादिको भोगनेसे सबल दोष.

(१६) एक वरसमें दश नदीके लेप लगानेसे सबल दोष.

+ लेप–जैसो कल्पसूत्रमें.

(२०) एक वर्षमें दश मायास्थान सेवन करनेसे सबल दोष.

(२१) सचित्त पृथ्वी-पाणीसे स्पर्श हुवे हाथोंसे भात, पाणी ग्रहण करे तो सबल दोष लगता है. दोषोंके साथ परिणामभी देखा जाता है और सब दोष सदृश भी नहीं होते हैं. इनकी आलोचना देनेवाले बडेही गीतार्थ होना चाहिये.

इन २१ सबल दोषोंसे मुनि महाराजोंको सदैव बचना चाहिये.

इति श्री दशा श्रुत स्कन्ध—दुसरे अध्ययनका संक्षिप्त सार.

---

(३) तीसरा अध्ययन.

गुरु महाराजकी तेतीस आशातना होती है. यथा—

(१) गुरु महाराज और शिष्य राहसे चलते समय शिष्य गुरुसे आगे चले तो आशातना होवे.

(२) बराबर चले तो आशातना, (३) पीछे चले परन्तु गुरुसे स्पर्श करता चले तो आशातना,—एवं तीन आशातना बैठनेकी, एवं तीन आशातना उभा रहनेकी—कुल आशातना ९ ।

(१०) गुरु और शिष्य साथमें जंगल गये कारणवशात् एक पात्रमें पाणी ले गये, गुरुसे पहिला शिष्य शुचि करे तो आशातना, (११) जंगलसे आयके गुरु पहिला शिष्य इरियावही प्रतिक्रमे तो आशातना.

(१२) कोइ विदेशी श्रावक आया हुवा हैं, गुरु महाराजसे वार्तालाप करनेके पेस्तर उस विदेशीसे शिष्य बात करे तो आशातना.

(१३) रात्रि समय गुरु पूछते है—भो शिष्यो ! कौन सोते कौन जागते हो ? शिष्य जाग्रत होने परभी नहीं बोले. भावार्थ—शिष्यका इरादा हो कि अबी बोलुंगा तो लघुनीति परठनेको जाना पडेगा. आशातना.

(१४) शिष्य गौचरी लाके प्रथम लघु साधुवोंको बतलाके पीछे गुरुको बतलावे तो आशातना.

(१५) एवं प्रथम लघु मुनियोंके पास गौचरी की आलोचना करे पीछे गुरुके पास आलोचना करे तो आशातना.

(१६) शिष्य गौचरी लाके प्रथम लघु मुनियोंको आमंत्रण करे और पीछे गुरुको आमंत्रण करे तो आशातना.

(१७) गुरुको विगर पूछे अपना इच्छानुसार आहार साधुवोंको भेट देवे, जिसमे भी किसीको सरस आहार और किसीको नीरस आहार देवे तो आशातना.

(१८) शिष्य और गुरु साथमे भोजन करनेको बैठे. इसमें शिष्य अपने मनोज्ञ भोजन कर लेवे तो आशातना.

(१९) गुरुके बोलानेसे शिष्य न बोले तो आशातना.

(२०) गुरुके बोलानेपर शिष्य आसनपर बैठा हुवा उत्तर दे तो आशातना.

(२१) गुरुके बोलानेपर शिष्य कहे—क्या कहते हो? दिनभर क्या कहे तो हो? आशातना.

(२२) गुरुके बोलानेपर शिष्य कहे—तुम क्या कहते हो? तुं क्या कहे? ऐसा तुच्छ शब्द बोले तो आशातना.

(२३) गुरु धर्मकथा कहैं शिष्य न सुने तो आशातना.

(२४) गुरु धर्मकथा कहैं, शिष्य खुशी न हो तो आशातना.

(२५) गुरु धर्मकथा कहैं शिष्य परिषद्में छेद भेद करे. अर्थात् आप स्वयं उस परिषद्को रोक रखे तो आशातना.

(२६) गुरु कथा कह रहे हैं, आप बिचमे बोले तो आशातना.

(२७) गुरु कथा कह रहे हैं, आप कहे—ऐसा अर्थ नहीं. इसका अर्थ आप नहीं जानते हो, इसका अर्थ ऐसा होता है. आशातना.

(२८) गुरुने कथा कही उसी परिषद्में उसी कथाको विस्तारसे कहके परिषद्का दिलको अपनी तर्फ आकर्षित करे तो आशातना.

(२९) गुरुके जाति दोषादिको प्रगट करे तो आशातना.

(३०) गुरु कहैं—हे शिष्य! इस ग्लान मुनिकी वैयावच्च करो, तुमको लाभ होगा. शिष्य कहै—क्या आपको लाभ नहीं चाहिये? ऐसा कहै तो आशातना.

(३१) गुरुसे ऊंचे आसनपे बैठे तो आशातना.

(३२) गुरुके आसनपर बैठे तो आशातना.

(३३) गुरुके आसनको पाव आदि लगनेपर समामना दे अपना अपराध न खमावे तो शिष्यको आशातना लगती है.

इस तेतीस (३३) आशातना तथा अन्य भी आशातनासे बचना चाहिये. क्योंकि आशातना बोधिबीजका नाश करनेवाली है. गुरुमहाराजका कितना उपकार होता है, इस संसारसमुद्रमे तारनेवाले गुरुमहाराज ही होते है.

॥ इति दशाश्रुतस्कन्ध तीसरा अध्ययनका संक्षिप्त सार ॥

(४) चौथा अध्ययन.

आचार्य महाराजकी आठ संपदाय होती है. अर्थात् इस आठ संपदाय कर संयुक्त हो, वह आचार्यपदको योग्य होते है. वह ही अपनी संप्रदाय (गच्छ) का निर्वाह कर सक्ते है. वह ही शासनकी प्रभावना-उन्नति कर सक्ते है. कारण-जैन शासनकी उन्नति करनेवाले जैनाचार्य ही है. पूर्वमें जो बडे २ विद्वान् आचार्य हो गये, जिन्होंने शासनसेवाके लिये कैसे २ कार्य किये है, जो आजपर्यंत प्रख्यात है. विद्वान आचार्यो विना शासनोन्नति होनी असंभव है. इसलिये आचार्योमे कौन २ सी योग्यता होनी चाहिये और शास्त्रकार क्या फरमाते है, वही यहांपर योग्यता लिखी जाती है. इन योग्यताओंके होनेहीसे शास्त्रकारोंने आचार्यपदके योग्य कहा है. यथा (१) आचार संपदा. (२) सूत्र संपदा, (३) शरीर

(३) शरीर संपदाके चार भेद. यथा-

(१) प्रमाणोपेत (उंचा पूरा) शरीर हो. (२) दृढ सं-हननवाला हो. (३) अलज्जत शरीर हो, परिपूर्ण इंद्रियांयुक्त हो. (४) हस्तादि अंगोपांग सौम्य शोभनीक हो, और जिनका दर्शन दूसरोंको प्रियकारी हो. हस्त, पादादिमे अच्छी रेखा या उचित स्थानपर तील, मसा लसण विगेरे हो.

(४) वचन संपदाके चार भेद. यथा-

(१) आदेय वचन-जो वचन आचार्य निकाले, वह निष्फल न जाय. सर्वलोक मान्य करे. इसलिये पहिलेहीसे विचार पूर्वक बोले. (२) मधुर वचन, कोमळ, सुस्वर, गंभीर और श्रोतारंजन वचन बोले. (३) अनिश्रित-राग, द्वेषसे रहित द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव देखकर बोले. (४) स्पष्ट वचन-सब लोक समझ सकें वैसा वचन बोले परन्तु अप्रतीतकारी वचन न बोले.

(५) वाचना संपदाके चार भेद. यथा-

(१) प्रमाणिक शिष्यको वाचना देनेकी आज्ञा दे [वाचना उपाध्याय देते हैं] यथायोग. (२) पहिले दी हुइ वाचना अच्छी तरहसे प्रगमावे. उपराउपरी वाचना न दे. क्योंकि ज्यादा देनेसे धारणा अच्छी तरह नहीं हो सक्ती. (३) वाचना लेनेवाले शिष्यका उत्साह बढावे, और वाचना

क्रमशः दे, बीचमें तोडे नहीं, जिससे संबंध बना रहे. (४) जितनी वाचना दे, उसको अच्छी रीतिसे भिन्न २ कर समझावे. उत्सर्ग, अपवादका रहस्य अच्छी तरहसे बतावे.

(६) मति संपदाका चार भेद. यथा—

(१) उग्ग (शब्द सुने). (२) इहा (विचारे), (३) अपाय (निश्चय करे), (४) धारणा (धारणा रखे).

(१) उग्ग—किसी पुरुषने आ कर आचार्यके पास एक बात कही, उसको आचार्य शीघ्र ग्रहण करे. बहुत प्रकारसे ग्रहण करे, निश्चय ग्रहण करे, अनिश्चय (दूसरोंकी सहाय बिना) पहिले कभी न देखी, न सुनी हो, असी बातको ग्रहन करे. इसी माफिक शास्त्रादि सब विषय समझ लेना. (२) इहा—इसी माफिक सब विचारणा करे. (३) अपाय—इसी माफिक वस्तुका निश्चय करे. (४) जिस वस्तुको एकवार देखी या सुनी हो, उसको शीघ्र धारे, बहुत विधिसे धारे, चिरकाल पर्यंत धारे, कठिनतासे धारने योग्य हो उसको धारे, दूसरोंकी सहाय बिना धारे.

(७) प्रयोग संपदाके चार भेद. यथा—

कोइ वादीके साथ शास्त्रार्थ करना हो, तो इस रीतिसे करे—

(१) पहिले अपनी शक्तिका विचार करे, और दे
इस वादीका पराजय कर सकता हुं या नहीं ? मुझ
ज्ञान है और वादीमें कितना है ? इसका विचार
यह क्षेत्र किस पक्षका है. नगरका राजा व प्रजा
या दुःशील है. और जैनधर्मका रागी है या द्वेषी है
बातोंका विचार करे. (३) स्व और परका विचा
विषयमें शास्त्रार्थ करता हुं परन्तु इसका फल (नत
क्या होगा ? इस क्षेत्रमें स्वपक्षके पुरुष कम हैं,
पक्षवाले ज्यादे हैं, वे भी जैनपर अच्छा भाव रखते हैं,
अगर राजा और प्रजा दुर्लभबोधि होगा तो शास्त्र
जैनोंका इस क्षेत्रमें आना जाना कठिन हो जायगा. ऐ
तीर्थादिकी रक्षा कौन करेगा ? इत्यादि बातोंका वि
(४) वादी किस विषयमें शास्त्रार्थ करना चाहता
उस विषयका ज्ञान अपनेमें कितना है ? इसको वि
शास्त्रार्थ करे. ऐसे विचार पूर्वक शास्त्रार्थ कर वादीक
करना.

(८) संग्रह संपदाके चार भेद. यथ

(१) क्षेत्र संग्रह–गच्छके साधु ग्लान, वृद्ध,
दिके लीये क्षेत्रका संग्रह यानि अमुक साधु उस क्षेत्रमें रहे
तो वह अपनी संयम यात्राको अच्छी तरहसे निर्वाह करे
और श्रोतागणकोभी लाभ मिलेगा. (२) शीतोष्ण या वर्षा

कालके लिये पाट-पाटलादिका संग्रह करे, क्योंकि आचार्य गच्छके मालिक है. इस लिये उनके दर्शनार्थी साधु बहुतसे आते हैं, उन सबकी यथायोग्य भक्ति करना आचार्यका काम है. और पाट-पाटलाके लिये ध्यान रक्खे कि इस श्रावकके वहां ज्यादाभी मिल सक्ता है. जिससे काम पडे जब ज्यादा फिरनेकी तकलीफ न पडे. (३) ज्ञानका नया अभ्यास करते रहे. अनेक प्रकारके विद्यार्थीओंका संग्रह करे. और शासनमें काम पडनेपर उपयोगमें लावे. क्योंकि शासनका आधार आचार्यपर है. (४) शिष्य—जोकि शासनको शोभानेवाले हो, और देशो देशमें विहार करके जैनधर्मकी वृद्धि करनेवाले ऐसे सुशिष्योंकी संपदाको संग्रह करे.

इति आचार्यकी आठ संपदा समाप्त.

आचार्यने सुविनीत शिष्यको चार प्रकारके विनयमें प्रवृत्ति करानी चाहिये. यथा—(१) आचार विनय, (२) सूत्रविनय, (३) विक्षेपरा विनय, (४) दोष निर्घातरा विनय.

(१) आचार विनयके ४ भेद.

(१) संयम सामाचारीमें आप वर्ते, दूसरेको वर्तावे, और वर्तेको उत्तेजन दे. (२) तपस्या आप करे, दूसरोसे करवावे और तपस्या करनेवालोंको उत्तेजन दे. (३) गणगच्छका कार्य आप करे, दूसरोंसे करवावे और उत्तेजन दे.

(४) योग्यता प्राप्त होनेसे अकेला पडिमा धारण करे, करावे, और उत्तेजन दे. क्यों कि जो वस्तुओंकी प्राप्ति होती है, वह अकेलेमें ध्यान, मौनादि उग्र तपसे ही होती है.

(२) सूत्र विनयके ४ भेद.

(१) सूत्र या सूत्रकी वाचना देनेवालोंका बहु मानपूर्वक विनय करे, क्यों कि विनय ही से शास्त्रोंका रहस्य शिष्यको प्राप्त हो सकता है. (२) अर्थ और अर्थदाताका विनय करे. (३) सूत्रार्थ या सूत्रार्थको देनेवालोंका विनय करे. (४) जिस सूत्र अर्थकी वाचना प्रारंभ करी हो, उसको आदि-अंत तक संपूर्ण करे.

(३) विक्षेपणा विनयका ४ भेद.

(१) उपदेश द्वारा मिथ्यात्वीके मिथ्यात्वको छुडावे. (२) सम्यक्त्वी जीवको श्रावक व्रत या संसारसे मुक्त कर दीक्षा दे. (३) धर्म या चारित्रसे गिरतेको मधुर वचनोंसे स्थिर करे. (४) चारित्र पालनेवालोंको एषणादि दोषसे बचा कर शुद्ध करे.

(४) दोष निर्घातणा विनयके ४ भेद.

(१) क्रोध करनेवालेको मधुर वचनसे उपशांत करे. (२) विषयभोगकी लालसावालेको हितोपदेश करके संयमगुण और वैषयिक दोष बता कर शांत करे. (३) अनशन किया

हुवा साधु असमाधि जिनसे अस्थिर होता हो उसको स्थिर करे या मिथ्यात्वमें गिरते हुए को स्थिर करे. (साहित्य दे.) (४) स्वयं (आप) शांतपणे वर्ते और दूसरोंको वर्तावे. इति०

और भी आचार्यके शिष्यका ४ प्रकारका विनय कहा है.

(१) साधुके उपगरण विषय विनयका ४ भेद.

(१) पहिलेके उपगरणका संरक्षण करे और वस्त्र, पात्रादि फुटा, तुटा हो उसको अच्छा करके वापरे (काममें लावे). (२) अति जरुरत हो तो नया उपगरण निर्दोष लेवे. और जहांतक हो वहांतक अल्प मूल्यवाला उपगरण ले. (३) वस्त्रादिक फाट गया हो तो भी जहांतक बने वहांतक उसीसे काम ले. मकानमें (उपाश्रेमें) होवे तब वापरे. बाहर आना-जाना हो तो सामान्य वस्त्र (अच्छा) वापरे. इसी माफिक आप निर्वाह करे. परन्तु दूसरे साधुको अच्छा वस्त्र दे. (४) उपगरणादि वस्तु गृहस्थसे याच के लाया हो, उसमेंसे दूसरे साधुको भी विभाग करके देवे.

(२) साहिज्जीय विनयके ४ भेद.

(१) गुरुमहाराजके अनुकूल आचरण करता हुआ नम्रतापूर्वक मधुर वचनसे बोले. (२) गुरुमहाराजके कायासे अच्छे प्रकारसे अनुकूल [illegible]. (३) गुरुमहाराजके आदेश स्वीकार [illegible]. [illegible]

(४) गुरुमहाराज या अन्य साधुवोंके कार्यमें नम्रतापूर्वक प्रवर्ते.

(३) वण्ण संजलणता विनयके ४ भेद.

(१) आचार्यादिका छता गुण दीपावे. (२) आचार्यादिका अवगुण बोलनेवालेको शिक्षा करे (वारे) याने पहिले मधुर वचनसे समभावे और न माननेपर कठोर वचनसे तिरस्कार करे, परन्तु आचार्यादिका अवगुण न सुने. (३) आचार्यादिके गुण बोलनेवालेको योग्य उत्तेजन दे या साधुको सूत्रार्थकी वाचना दे. (४) आचार्यके पास रहा हुवा विनीत शिष्य हमेशां चढते परिणामसे संयम पाले.

(४) भारपच्चरुहणता विनयके ४ भेद.

(१) संयम भार लीया हुवा स्थितोस्थित पहुंचावे (जावजीव संयममें रमणता करे), और संयमव्रतकी सार संभाल करे. (२) शिष्यको आचार-विचारमें प्रवर्तावे, अकार्य करतेको वारे और कहे-भो शिष्य ! अनंत सुखका देनेवाला यह चारित्र तेरेको मिला है, इसकी चिन्तामणि रत्नके समान यतना कर, प्रमाद करनेमें यह अवसर निकल जायगा इत्यादिक मधुर वचनोंसे समभावे. (३) स्वधर्मी, ग्लान, रोगी, वृद्धकी वैयावच्च करनी. (४) संघ या साधर्मिकमें क्लेश न करे, न करावे, कदाचित् क्लेश हो गया हो तो मध्यस्थ (कोइका पक्ष न करते) होकर क्लेशको उपशांत करे. इति.

यह आठ प्रकारकी संपदा आचार्यकी तथा आठ प्रकारका विनय शिष्यके लिये कहा. क्योंकि विनय प्रवृत्ति रखनेहीसे शासनका अधिकारी और शासनका कुछ कार्य करने योग्य हो सक्ता है. इस प्रवृत्तिमें चलना और चलाना यह कार्य आचार्य महाराजका है.

इति श्री दशाश्रुत स्कंध—चतुर्थाध्ययनका संक्षिप्त सार.

(५) पंचम अध्ययन.

चित्त समाधिके दश स्थान है —

वाणियाग्राम नगरके दुतिपलासोद्यानमें परमात्मा वीरप्रभु अपने शिष्यरत्नोंके परिवारसे पधारे, राजा जयशत्रु च्यार प्रकारकी सेना संयुक्त और नगर निवासी लोक बडेही आडम्बरके साथ भगवानको वन्दन करने आये. भगवानने उस विशाल परिषदको विचित्र प्रकारसे धर्मकथा सुनाइ. जीवादि पदार्थका स्वरुप समजाते हुवे आत्मकल्याणमें चित्तसमाधिकी खास आवश्यक्ता बतलाइथी. परिषदने प्रेमपूर्वक देशना श्रवण कर आनन्द सहित भगवानको वन्दन नमस्कार कर आये जिस दिशामें गमन कीया.

भगवान् वीरप्रभु अपने साधु—साध्वीयोंको आमंत्रण कर आदेश करते हुवे कि-हे आर्यो ! साधु, साध्वी पांच स-

(५) अवधिज्ञान—पूर्वे उत्पन्न नहीं हुआ ऐसा उत्पन्न होनेसे जघन्य अंगुलके असंख्याते भागे उत्कृष्ट संपूर्ण लोकको जाने, जिससे चित्तसमाधि होती है. अवधिज्ञान किसको प्राप्त होता है ? जो तपस्वी मुनि सर्व प्रकारके कामविकार, विषय कषायसे विरक्त हुआ हो; देव, मनुष्य, तिर्यंचादिका उपसर्गोंको सम्यक् प्रकारसे सहन करे, ऐसे मुनियोंको अवधिज्ञान होनेसे चित्तसमाधि होती है.

(६) अवधिदर्शन—पूर्वे उत्पन्न न हुआ ऐसा अवधिदर्शन उत्पन्न होनेसे जघन्य अंगुलके असंख्याते भाग और उत्कृष्ट लोकके रूपीद्रव्योंको देखे. अवधिदर्शनकी प्राप्ति किसको होती है ? जो पूर्व गुणोंवाले, शांत स्वभावी, शुद्ध लेश्याके परिणामवाले मुनि उर्ध्वलोक, अधोलोक और तिर्यग्लोकको अवधिज्ञान द्वारा रूपीपदार्थोंके देखनेसे चित्तमें समाधि उत्पन्न होती है

(७) मनःपर्यवज्ञान—पूर्वे प्राप्त नहीं हुआ ऐसा अपूर्व मनःपर्यवज्ञान उत्पन्न होनेसे अढाईद्वीपके संज्ञिपंचेंद्रिय जीवोंका मनोभावको देखते हुए चित्तसमाधिको प्राप्त होता है. मनःपर्यवज्ञान किसको उत्पन्न होता है ? गुणसमाधियुक्त, शुभ ध्यानयुक्त, जिनवचनमें निःशंक, अभ्यन्तर और बाह्य परिग्रहका सर्वथा त्यागी, सर्व संगरहित, गुणोंका धारी इत्यादि गुण संयुक्त हो, उस अप्रमत्त मुनिको मनःपर्यवज्ञान उत्पन्न होता है

(८) केवलज्ञान—पूर्वे नहीं हुआ वह उत्पन्न होनेसे

चित्तको परम समाधि होती है. केवलज्ञानकी प्राप्ति किसको होती है? जो मुनि अप्रमत्त भावसे संयम आराधन करते हुवे ज्ञानावरणीय कर्मका सर्वांश क्षय कर दीया है, ऐसा क्षपकश्रेणिप्रतिपन्न मुनियोंको केवलज्ञान उत्पन्न होता है. वह सर्व लोकालोकके पदार्थोंको हस्तामलककी माफिक जानते है.

(९) केवलदर्शन—पूर्वे नहीं हुवा ऐसा केवलदर्शन होनेसे लोकालोकको देखते हुवेको चित्तसमाधि होती है. केवलदर्शनकी प्राप्ति किसको होती है? जो मुनियों अप्रमत्त गुणारूढ हो, क्षपकश्रेणि करते हुवे बारहवे गुणस्थानके अन्तमें दर्शनावरणीय कर्मका सर्वांश क्षय कर, केवलदर्शन उत्पन्न कर लोकालोकको हस्तामलककी माफिक देखते है.

(१०) केवलमृत्यु—(केवलज्ञान संयुक्त) पूर्वे नहीं हुवा ऐसा केवलमृत्युकी प्राप्ति होनेसे चित्तमें समाधि होती है. केवलमृत्युकी प्राप्ति किसको होती है? जो बारह प्रकारकी भिक्षुप्रतिमाका विशुद्धपणेसे आराधन कीया हो और मोहनीय कर्मका सर्वथा क्षय कीया हो, वह जीव केवलमृत्यु मरता हुवा, अर्थात् केवलज्ञान संयुक्त पंडित मरण मरता हुवा सर्व शारीरिक और मानसिक दुःखोंका अंत करते, वली समाधि जो शाश्वत, अव्याबाध सुखोंमें विराजमान हो जाता है. मोहनीय कर्म क्षय हो जानेसे शेष कर्मोंका जोर नहीं चलता है. इस पर शास्त्रकारोंने दृष्टान्त बतलाया है. जैसेकि—

(१) तालवृक्षके फलके शिरपर सुइ (सूचि) छेद चिटका-

नष्ट यह तत्काल गिर पडता है, इसी माफिक मोहनीय कर्मरू
शिरच्छेद करनेसे सर्व कर्मोंका नाश हो जाता है (२) सेना
पति भाग जानेसे सेना स्वयंही कमजोर होकर भग जाती है
इसी माफिक मोहनीय कर्मरूप सेनापति क्षय होनेसे शेष कर्म
रूपी सैन्य स्वयंही भाग जाता है (क्षय हो जाता है.) (३
धूम रहित अग्नि इन्धनके अभावसे स्वयं क्षय होता है इ
माफिक मोहनीय कर्मरूप अग्निको राग-द्वेषरूप इन्धन न मि
लनेसे क्षय होता है. मोहनीयकर्म क्षय होनेपर शेष कर्मक्षय होता
(४) जैसे सूखे हुवे वृक्षके मूल जल सिंचन करनेसे कभी भ
पल्लवित नहीं होते हैं इसी माफिक मोहनीयकर्म क्षय (क्ष
आनेपर दूसरे कर्मोंका कभी अङ्कुर उत्पन्न नहीं हो सका
(५) जैसे बीजको अग्निसे दग्ध कर दीया हो, तो फिर
कुर उत्पन्न नहीं हो सक्ता है. इसी माफिक कर्मोंका बीज(मो
नीय) दग्ध करनेसे पुनः भवरूप अंकुर उत्पन्न नहीं होते हैं

इस प्रकारसे केवलज्ञानी आयुष्यके अन्तमें औदारिक,
तैजस, और कार्मण शरीर तथा वेदनीय, आयु, नामकर्म
और गोत्रकर्मको सर्वथा छेदन कर कर्मरज रहित सिद्धपदको
प्राप्त कर लेते हैं

भगवान् [illegible] कहते हैं कि—हे आ
युष्मान्! यह चित्त समाधिके स्थान बतलाये हैं. इनको तो
शुद्ध भावोंसे आराधन करो, मनन करो, स्वीकार करो.

जीसे मोक्षमन्दिरके सोपानकी श्रेणि उपागत हो, शिवमन्दिरको प्राप्त करो.

इति दशाश्रुत स्कंध—पंचम अध्ययनका संक्षिप्त सार.

[६] छट्ठा अध्ययन.

पंचम गणधर अपने ज्येष्ठ शिष्य जम्बू अणगारको श्रावकोंकी इग्यारा प्रतिमाका विवरण सुनाते है. इग्यारा प्रतिमाकी अन्दर प्रथम दर्शनप्रतिमाका व्याख्यान करते है.*

वादीयोंमें अज्ञानशिरोमणि, नास्तिकमति, जिसको अक्रियावादी कहते हैं. हेय, उपादेय कोइ भी पदार्थ नहीं है, ऐसी उन्होंकी प्रज्ञा है, ऐसी उन्होंकी दृष्टि है. वहां सम्यक्त्ववादी नहीं है, नित्य (मोक्ष) वादी भी नहीं है. जो शाश्वत पदार्थ है उसको भी नहीं मानते है. उस अक्रियावादी नास्तिकोंकी मान्यता है कि यहलोक, परलोक, माता, पिता, अरिहंत, चक्रवर्ती, वासुदेव, बलदेव, नारक, देवता कोइ भी नहीं है, और सुकृत करनेका सुकृत फल भी नहीं है. दुष्कृत करनेका दुष्कृत फल भी नहीं है, अर्थात् पुण्य–पापका फल नहीं है. न परभवमें कोइ जीव उत्पन्न होता है. वास्ते नरक

---

*प्रथम मिथ्यात्वका स्वरूप ठीक तोरपर न समझा जावे, वहांतक मिथ्यात्वसे अरुचि और सम्यक्त्वपर रुचि होना असंभव है. इसी लिये शास्त्रकारोंने दर्शनप्रतिमाकी आदिमें वादीयोंके मतका परिचय कराते है.

नहीं है, यावत् सिद्ध भी नहीं है. अक्रियावादीयोंकी ऐसी प्रज्ञा-दृष्टि प्ररूपणा है. ऐसा ही उन्होंका छंदा है, ऐसा ही उन्होंका राग है, और ऐसा ही अभीष्ट है, ऐसे पाप-पूराकी प्राप्ति करते हुवे वह नास्तिकलोक महारंभ, महापरिग्रहके अन्दर मूर्छित है. इसीसे वह लोक अधर्मी, अधर्मानुग, अधर्मको सेवन करनेवाले, अधर्मको ही इष्ट माननेवाले, अधर्म बोलनेवाले, अधर्म पालनेवाले, अधर्मका ही जिन्होंका आचार है, अधर्मका प्रचार करनेवाले, रातदिन अधर्मका ही चिंतन करनेवाले, सदा अधर्मकी अन्दर रमणता करते हैं.

नास्तिक कहते है-इस अमुक जीवोंको मारो, शस्त्रादिसे छेदो, भालादिसे भेदो, प्राणोंका अंत करो, ऐसा महान् कार्य करते हुवे के हाथ सदैव लोही (रौद्र) से लिप्त रहते है. वह स्वभावसे ही प्रचंड क्रोधवाले, रौद्र, क्षुद्र सा दुःख देनेमें तथा साहस्य कार्य करनेमें साहसिक, पापीयोंको पासमें डाल ठगनेवाले, गूढ माया करनेवाले, इत्यादि अनेक कुव्यसनमें प्रवृत्ति करनेवाले, जिन्होंका दुःशील, दुराचार, दुष्ट आचार, दुष्टव्रतपालक, दूसरोंका दुःख देखके मन आनन्द माननेवाले, आचार, गुप्ति, दया, प्रत्याख्यान, पौषध, व्रत रहित है अर्थात्, मतिनपुनि, पापाचारी, प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया लोभ, राग, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, परपरिवाद, रति अरति, मायामृषावाद और मिथ्यादर्शनशल्य इन अठारा पापो-

निवृत्त नहीं, अर्थात् जावजीवतक अठारा पापको सेवन करने-वाले, सर्व कषाय, स्नान, मज्जन, दन्तधावन, मालीस, विले-पन, माला, अलंकार, शब्द, रूप, गंध, रस, स्पर्शसे जाव-जीवतक निवृत्त नहीं अर्थात् किसी कीसमका त्याग नहीं है.

सर्वप्रकारकी असवारी गाडी, गाडा, रथ, पालखी, तथा पशु, हत्ती, अश्व, गौं, महिष [पाडा] छाली, तथा गवाल, दासदासी, कामकारी-इत्यादिसेभी निवृत्ति नहीं करी है.

सर्व प्रकारके क्रय-विक्रय, वाणिज्य, व्यापार, कृत्य, अकृत्य तथा सुवर्ण, रुपा, रत्न, माणिक, मोती, धन, धान्य इत्यादि, तथा सर्व प्रकारसे कुडा तोल कुडा मापसेभी निवृत्ति नहीं करी है.

सर्व प्रकारके आरंभ, सारंभ, समारंभ, पचन, पचावन, करण, करावण, परजीवोंको मारना, पीटना, तर्जना करना, वध बंधनसे परको क्लेश देना-इत्यादिसे निवृत्ति नहीं करी है.

जैसा वर्णन किया है, वैसेही सर्व सावद्य कर्त्तव्य के करनेवाले, बोधिबीज रहित, परजीवोंको परिताप उत्पन्न कर-नेसे जावजीव पर्यंत निवृत्त नहीं है. जैसे दृष्टान्त-कोइ पुरुष चावल, मसूर, चीणा, तील, मुंग, उडद-इत्यादि अपने भक्षार्थ दलते है, पृथक् करते है. इसी नास्तिक मिथ्यादृष्टि, अनार्य, मांसभक्षी ज्यों तीतर, बटेर, लवोक, पारेवा, कपींजल, मयूर, मृग, सूअर, महिष, कच्छप, सर्प-आदि जानवरोंको

विना अपराध मार डालते है. निध्वंस परिणामी, किसी प्रकारकी घृणा रहित ऐसे अनार्य नास्तिक होते है.

ऐसे अक्रियावादीयोंके बाहिरकी परिषद जो दासदासी, प्रेषक, दूत, भट्ट, सुभट, भागीदार, कामदार, नोकर, चाकर, सेना, पुरुष, कृषीकार-इत्यादि जो लघु अपराध कीया हो, तो उसको बडा भारी दंड देते है. जैसे इसको दंडो, मुंडो, तर्जना, ताडना करो, मारो, पीटो मजबूत बन्धन करो. इसको खोडेमें भाखसीमें डाल दो, इसके शरीरकी हड्डीयों तोड दो-एवं हाथ, पाँव, नाक, कान, ओष्ठ, दान्त-आदि अंगोपांगको छेदन करो, एवं इसका चमडा निकालो, हृदयको भेदो, आँख, दान्त, जीभको छेदन करो, शूली दो, तलवारसे खंड खंड करो, इसको अग्निमें जला दो, इनको सिरकी चूंटसे बांधो, हस्तीके पाँव नीचे डालो, इत्यादि लघु अपराध करनेपर अपराधीको अनेक प्रकारके कुमोतसे मारनेका दंड देते है. ऐसी अनार्य नास्तिकोंकी निर्दय वृत्ति है.

आभ्यन्तर परिषद् जैसे माता, पिता, भ्रातर, भगीनी, भार्या, पुत्री, पुत्रवधू-इत्यादि. इन्होंमे कभी किंचित्मात्र अपराध हो जाय, तो आप स्वयं भारी दंड देते है. जैसे शीतकालमें शीतल पाणी तथा उष्णकालमें उष्ण पाणी इसके शरीरपर डालो, अग्निकी मन्दर शरीर तपाओ, रसीद्वार, वेतद्वार, नाडीद्वार, चाबक द्वार, छडीद्वार, लताद्वार, शरीरके चमडे उखेड करो. पासडीको उगेरो, दंडीद्वार, लकडीद्वार, मुष्टिद्वार,

रहित-सरलतासे आलोचना करे, उसे एक मासिक प्रायश्चित्त दीया जाता है. और

(२) मायासंयुक्त आलोचना करनेपर उसे दोय मासिक प्रायश्चित्त देते है. कारण-एक मास मूल दोष सेवन कीया उसका. और एक मास जो आलोचना करते माया-कपट सेवन कीया, उसकी आलोचना. एवं दो मास.

(३) इसी माफिक दोय मास दोषस्थानक सेवन कर मायारहित आलोचना करनेसे दोय मासका प्रायश्चित्त.

४) मायासंयुक्त करनेसे तीन मासका प्रायश्चित्त भावना पूर्ववत्.

(५) तीन मासवालोंको मायारहितसे तीन मास.

(६) मायासंयुक्तको च्यार मास.

(७) च्यार मासवालोंको मायारहितसे च्यार मास.

(८) मायासंयुक्तको पांच मास.

(९) पांच मास-मायारहितको पांच मास.

(१०) मायारहितको छे मास. छे माससे अधिक प्रायश्चित्त नहीं है. कारण-आजके साधु साध्वी, वीरप्रभुके शासनमें विचरते है, और वीरप्रभु उत्कृष्टसे उत्कृष्ट छे मासकी तपश्चर्या करी हैं. अगर छे माससे अधिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कीया हो, उसको फिरसे दुसरी दफे दीक्षा प्रदनका प्रायश्चित्त होता हैं.

(११) ,, बहुतवार मासिक प्रायश्चित्त स्थानको सेवन करे. जसे पृथ्वीकी विराधना हुइ, साथमें अप्कायकी विराधना एक-वार तथा वारवार भी विराधना हुइ, यह एक साथमें आलोच-

(३५) एवं चातुर्मासिक.

(३६) एवं तीन मासिक

(३७) एवं दोय मासिक.

(३८) एक मासिक. भावना पूर्ववत् समझना.

(३९) जो मुनि छे मासी यावत् एक मासी तप करते हु अन्तरामें दो मासी प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर मायायुक्त अ लोचना करी, जिससे दोय मास, वीश अहोरात्रिका प्रायश्चि आचार्यने दीया, उस तपको पहलेके तपके अन्तमें प्रारंभ कीय हैं. उस तपमें वर्तते हुये मुनिको और भी दोय मासिक प्रायश्चि स्थानका दोष लगजावे, उसे आचार्य पास आलोचना मायारहि करना चाहिये. तब आचार्य उसे वीश दिनका तप, उसे पूर्व त प्रायश्चित्त साथ वहा देवे. और उसका कारण, हेतु, अर्थ आदि पूर्वोक्त माफिक समझावे. मूल तपके सिवाय तीन मास दश दि का तप हुवा.

(४०) ,, तीन मास दश रात्रिका तप करते अंतरे औ भी दो मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर आलोचना करने वीश रात्रिका तप प्रायश्चित्त देनेसे च्यार मासका तप करे भ वना पूर्ववत्.

(४१) ,, च्यार मासका तप करते अन्तरेमें दोमासी प्र यश्चित्त स्थान सेवन करनेसे पूर्ववत् वीश रात्रिका प्रायश्चित्त तपमें मिला देवे, तब च्यार मास वीश रात्रि होती है.

(४२) ,, च्यार मास वीश रात्रिका तप करते अंतरे मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन करनेसे और वीश रात्रि तप पके साथ मिला देनेसे पांच मास दश रात्रि होती है.

(४३) ,, पांच मास दश रात्रिका तप करते अंतरे दो मासिक प्रायश्चित्त सेवन करनेसे वीश रात्रिका तप उसके साथ मिला देनेसे पूर्ण छे मास होता है, इसके आगे तप प्रायश्चित्त नहीं है. फिर छेद या नयी दीक्षा ही दी जाती है. भावना पूर्ववत्.

(४४) ,, छे मासी प्रायश्चित्त तप करते हुये मुनि, अन्तरे एक मासिक प्रायश्चित्त स्थानको सेवे, उसकी आलोचना करने-पर आचार्य उसे पूर्वतपके साथ पन्दर दिनोंका तप अधिक कराये.

(४५) एवं पांच मासिक तप करते.

(४६) एवं च्यार मासिक तप करते.

(४७) तीन मासिक तप करते.

(४८) दो मासिक तप करते,

(४९) एवं एक मासिक तप करते अन्तरे एक मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कीया हो, तो आदा मास सबके साथ मिला देना, भावना पूर्ववत्.

(५०) ,, छे मासिक यावत् एक मासिक तप करते अन्तरे एक मासिक और प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर माया संयुक्त आलोचना करे, उसे साधुको आचार्यने दोढ (१॥) मासिक तप दीया है, वह साधु पूर्व तपको पूर्ण कर उसके अन्तमें दोढ (१॥) मासिक तप कर रहा है. उसमें और मासिक प्रायश्चित्त स्थानसे भी माया रहित आलोचना करे, उसे पन्दर दिनकी आलोचना दे के पूर्व दोढ मासके साथ मिला देना. एवं दो मासका तप करे.

(५१) ,, दो मासिक तप करते और मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर आलोचना करनेसे, पन्दरादिनकी आलोचना दे पूर्व दो मासके साथ मिलाके अढा१ मासका तप करे.

(५२) ,, अढाइ मासवालाको मासिक प्रा० स्थान सेवन करनेसे पन्दरा दिनका तप देके पूर्वके साथ मिलाके तीन मास कर दे.

(५३) ,, एवं तीन मासवालाके साढा तीन मास.

(५४) साढा तीन मासवालाके च्यार मास.

(५५) च्यार मासवालाके साढा च्यार मास.

(५६) साढे च्यार मासवालाके पांच मास.

(५७) पांच मास वालाके साढा पांच मास.

(५८) साढा पांच मास वालाके छे मास. भावना पूर्ववत् समझना.

(५९) ,, दो मासिक प्रायश्चित तप करते अन्तरे एक मासिक प्रायश्चित स्थान सेवन करनेसे पन्दरादिनकी आलोचना दे के पूर्व दो मासके साथ मिला देनेसे अढाइ मास.

(६०) अढाइ मासका तप करते अन्तरे दो मास प्रायश्चित स्थान सेवन करनेसे वीश रात्रिका तप दे के पूर्व अढा मास साथ मिलानेसे तीन मास और पांच दिन होता है.

(६१) तीन मास पांच दिनका तप करते अंतरे एक मासिक प्रा० स्थान सेवन करनेसे पन्दरा दिनोंका तप, उस तीन मास पांच रात्रिके साथ मिलानेसे तीन मास वीश अहोरात्रि होती है

(६२) तीन मास वीश अहोरात्रिका तप करते अन्तरे दो मासिक प्रा० स्थान सेवन करने वालेको वीश अहोरात्रिकी आलोचना देके पूर्वका तपके साथ मिला देनेसे ३-२०-२० च्यार मास दश दिन होते है.

(६३) च्यार मास दश दिनका तप करते अन्तरेमें एक मासिक प्रा० स्थान सेवन करने वालेको पन्दरा दिनकी आलोचना पूर्व तपके साथ मिला देनेसे ५-१०-१५ च्यार मास पंचवीश अहोरात्री होती हैं.

(६४) च्यार मास पंचवीश अहोरात्रिका तप करते अन्तरमें दो मासिक प्रा० स्थान सेवन करनेवालेको वीश रात्रिकी आलोचना, पूर्वतपके साथ मिला देनेसे पंच मास और पंदरा अहोरात्रि होती हैं.

(६५) पांच मास पंदरा रात्रिका तप करते अन्तरामें एक मासिक प्रा० स्थान सेवन करनेवालेको पन्दरा अहोरात्रिकी आलोचना, पूर्वतपके साथ सामेल कर देनेसे छे मासिक तप होता है. इस्के आगे किसी प्रकारका प्रायश्चित्त नहीं है. अगर तप करते प्रायश्चित्तका स्थान सेवन करते है, उसको आलोचना देनेवाले आचार्यादि, उस दुर्बल शरीरवाला तपस्वी मुनिको मधुरतासे उस आलोचनाका कारण, हेतु, अर्थ बतलावे कि तुमारा प्रायश्चित्त स्थान तो एक मासिक, दो मासिकका है, परन्तु पेस्तरसे तुमारी तपश्चर्या चल रही है. जिसके जरिये तुमारा शरीरकी स्थिति निर्बल है. लगेतार तप करनेमें और भी ज्यादा पडता है. इस वास्ते इस हेतु-कारणसे यह आलोचना दी जाती है. इस पापका तप करना महा निर्जराका हेतु है. अगर तुमारा उत्थानादि मंद हो तो मेरा साधु तुमारी वैयावच्च करेगा तु शान्तिसे तप कर अपना प्रायश्चित्त पूर्ण करो. इत्यादि. २०

आलोचना सुननेकी तथा प्रायश्चित्त देनेकी विधि ग्रन्थ स्थानोंसे यहांपर लिखी जाती है.

आलोचना सुननेवाले.

(१) अतिशय ज्ञानी (केवली आदि) जो भूत, भविष्य, वर्तमान—त्रिकालदर्शी हो, उन्होंके पास निष्कपट भावसे आलोचना करते समय अगर कोइ प्रायश्चित्त स्थान, विस्मृतिसे आलोचना करना रह गया हो, उसे वह ज्ञानी कह देवे कि—हे भद्र! अमुक दोषकी तुमने आलोचना नहीं करी है अगर कोइ माया—कपट कर किसी स्थानकी आलोचना नहीं करी हो, तो उसे वह ज्ञानी आलोचना न देवे, और किसी छद्मस्थ आचार्यके पास आलोचना करनेका कह देवे.

(२) छद्मस्थ आचार्य आलोचना सुननेवाले कितने गुणोंके धारक होते है ? यथा—

(१) पंचाचारको अखंड पालनेवाला हो, सत्तरा प्रकारसे संयम, पांच समिति, तीन गुप्ति, दश प्रकारका यतिधर्मके धारक, गीतार्थ, बहुश्रुत, दीर्घदर्शी-इत्यादि कारण-आप निर्दोष हो, वहही दुसरोंको निर्दोष बना सके, उसकाही प्रभाव दुसरे पर पड सके.

(२) धारणावन्त—द्रव्य, क्षेत्र, काल भावके जानकार, गुरुकुल वासको सेवन कर अनेक प्रकारसे धारणा करी हो, स्याद्वादका रहस्य, गुरुगमतासे धारण कीया हो.

(३) पांच व्यवहारका जानकार हो—आगमव्यवहार, सूत्र व्यवहार, आज्ञा व्यवहार, धारणा व्यवहार, जीत व्यवहार (देखो व्यवहार सूत्र उद्देशा १० वां) किस समय किस व्यवहारसे काम लीया जावे, या-प्रवृत्ति की जावे उसका जानकार अवश्य होना चाहिये.

(४) कितनेक ऐसे जीव भी होते है कि—लज्जाके मारे शुद्ध आलोचना नहीं कर सके; परन्तु आलोचना सुनने वालोंमें

यह भी गुण अवश्य होना चाहिये कि—मधुरता पूर्वक आलोचक साधुकी लज्जा दूर करनेको स्थानांग-आदि सूत्रोंका पाठ सुनाके हृदय निर्मल बना देवे. जैसे—हे भद्र! इस लोककी लज्जा परभवमें विराधक कर देती है. रत्न और लक्ष्मणा साध्वीका दृष्टान्त सुनावे.

(५) शुद्ध करने योग्य होवे. आप स्वयं भद्रक भाव—अपमानसे शुद्ध आलोचना करवावे. अर्थात् आलोचना करनेवालेको गुण बतावे. आठ कारणोंसे जीव शुद्ध आलोचना करे—इत्यादि.

(६) मर्म प्रकाश नहीं करे. धैर्य, गांभीर्य, हृदयमें हो, किसी प्रकारकी आलोचना कोईभी करी हो. परन्तु कारण होने परभी किसीका मर्म नहीं प्रकाशे.

(७) निर्वाह करने योग्य हो. आलोचना अधिक आती है. और शरीरका सामर्थ्य, इतना तप करनेका न हो उसके लीये भी निर्वाह करनेको स्वाध्याय, ध्यान, वन्दन, वैयावच्च-आदि अनेक प्रकारसे प्रायश्चितका भाग भंग कर उसको शुद्ध कर सके.

(८) आलोचना न करनेका दोष. अनर्थ. भविष्यमें विराधकपना. संसारवृद्धिका हेतु. तथा आठ कारणोंसे जीव आलोचना न करनेसे उत्पन्न होता दुःख यावत् संसार भ्रमण करे. ऐसा बतलावे.

(९-१०) प्रिय धर्मी और दृढ धर्मी हो, धर्म शासनपर पूर्ण राग. हाड हाड किमीजी. रग रग, नसो और रोमरोममें शासन व्याप्त हो. अर्थात् यह दोषित साधु आलोचना न करेगा. तो दुसरा भी दोष लगनेसे पीछा न हटेगा. ऐसा खराब प्रवृत्ति होनेसे भविष्यमें शासनको बडो भारी धोका पहुंचेगा. इत्यादि हिताहितका विचारवाला हो.

(श्री स्थानांगजी सूत्र—दशवे स्थाने)

उपर लिखे दश गुणोंको धारण करनेवाले आलोचना सुनने योग्य होते है. वह प्रथम आलोचना सुने, दुसरी वखत और कहे—हे वत्स ! मैं पहला ठीक तरहसे नहीं सुनी, 'अब दुसरी दफे सुनाये. तब दुसरी दफे सुने. जब कुछ संशय हो तो, कहेकि हे भद्र ! मुझे कुछ प्रमाद आ रहाथा, वास्ते तीसरी दफे और सुनावें, तीन दफे सुननेसे एक सदृश हो, तो उसे निष्कपट शुद्ध आलोचना समझे. अगर तीन दफेमें कुछ फारफेर हो, तो उसे माया संयुक्त आलोचना समझना. (व्यवहारसूत्र)

मुनि अपने चारित्रमें दोष किसवास्ते लगाते है ? चारित्र मोहनीयकर्मका प्रबल उदय होनेसे जीव अपने मनमें दोष लगाते है. यथा

(१) 'कन्दर्पसे'—मोहनीय कर्मके उदयसे उन्माददशा प्राप्त हो, हास्यविनोद, विषय विकार—आदि अनेक कारणोंसे दोष लगाते है.

(२) 'प्रमाद' मद, विषय, कषाय, निद्रा और विकथा—इस पांच कारणोंसे प्रेरित मुनि दोष लगाते है. जैसे पूंजन, प्रतिलेखन, पिंड विशुद्धिमें प्रमाद करे.

(३) 'अज्ञान' अज्ञानतासे तथा अनुपयोगसे हलन, चलनादि अयतना करनेसे—

(४) आतुरता' हरेक कार्य आतुरतासे करनेमें संयमको बाधा पहुंचती है.

(५) 'आपत्तदशा' शरीरव्याधि, तथा अरण्यादिमें आपदा आनेसे दोष लगावें.

१ [illegible]

(६) 'शंका' यह पूंजन प्रतिलेखन करी होगा या नहीं करी होगा इत्यादि कार्यमें शंका होना.

(७) 'सहसात्कारे' बलात्कारसे, किसी कार्य करनेकी इच्छा न होनेपर भी वह कार्य करनाही पडे.

(८) 'भय' सात प्रकारका भयके मारे अधीरपनासे—

(९) 'द्वेषदशा' क्रोध मोहनीय उदय, अमनोज्ञ कार्यमें द्वेषभाव उत्पन्न होनेसे दोष लगता है.

(१०) शिष्यादिकी परीक्षा (आलोचना) श्रवण करनेके निमित्त दुसरी तीसरी बार कहना पडता है, कि मैंने पूर्ण नहीं सुनाया, और सुनावे. (स्थानांगसूत्र.)

दोष लग जानेपर भी मुनियोंको शुद्ध भावसे आलोचना करना बडाही कठिन है. आलोचना करते करते भी दोष लगा देते है. यथा—

(१) कम्पता कम्पता आलोचना करे. अर्थात् आचार्यादिका भय लावे कि—मुझे लोग क्या कहेंगे! अर्थात् अस्थिर चित्तसे आलोचना करे.

(२) आलोचना करनेके पहला गुरुसे पूछे कि—हे स्वामिन्! अगर कोइ साधु, अमुक दोष सेवे, उसका क्या प्रायश्चित्त होता है? शिष्यका अभिप्राय यह कि—अगर स्वल्प प्रायश्चित्त होगा, तो आलोचना कर लेंगे, नहि तो नहीं करेंगे.

(३) किसीने देखा हो, वैसे दोषकी आलोचना करे, और न देखा हो, उसकी आलोचना नहीं करे. (कौन देखता है?)

(४) बडे बडे दोषोंकी आलोचना करे, परन्तु सूक्ष्म दोषोंकी आलोचना न करे.

(५) सूक्ष्म दोषोंकी आलोचना करे, परन्तु स्थूल दोषोंकी आलोचना न करे.

(६) बड़े जोर जोरसे शब्द करते आलोचना करे. जिससे बहुत लोक सुने, प्रकट हो जावे.

(७) बिलकुल धीमे स्वरसे बोले. जिसमें आलोचना सुननेवालोंको भी पुरा शब्द सुनाया जाय नहीं.

(८) एक प्रायश्चित्त स्थान, बहुतसे गीतार्थोके पास आलोचना करे. इरादा यहकि—कौनसा गीतार्थ. कितना कितना प्रायश्चित्त देता है.

(९) प्रायश्चित्त देनेमें अज्ञात (आचारांग, निशिथका अज्ञात) के समीप आलोचना करे. कारण वह क्या प्रायश्चित्त दे सके ?

(१०) स्वयं आलोचना करनेवाला खुद ही उस प्रायश्चित्त को सेवन कीया हो, उसके पास आलोचना करे. कारण—खुद प्रायश्चित्त कर दोषित है, वह दुसरोंको क्या शुद्ध कर सकेगा ! उन्हसे सब बात कभी कही न जायगी.

(स्थानांगसूत्र.)

आलोचना कौन करता है ? जिसके चारित्र मोहनीय कर्मका क्षयोपशम हुवा हो. भवान्तरमें आराधक पदकी अभिलाषा रखता हो, वह महात्मा आलोचना कर अपनी आत्माको पवित्र बना सके. यथा—

(१) जातिवान.

(२) कुलवान. इस वास्ते शास्त्रकारोंने दीक्षा देते समय ही प्रथम जाति, कुल, उत्तम होनेकी आवश्यकता बतलाइ है.

जाति-कुल उत्तम होगा, वह मुनि आत्मकल्याणके लीये आलोचना करता कभी पीछा न हटेंगा.

(३) विनयवान् – आलोचना करनेमें विनयकी खास आवश्यकता है. क्योंकि-आत्मकल्याणमें विनय मुख्य साधन है.

(४) ज्ञानवान्—आलोचना करनेसे शायद इस लोकमें मान-पूजा, प्रतिष्ठामें कभी हानि भी हो, तो ज्ञानवंत, उसे अपना सुहृदयमें कभी स्थान न देंगा. कारण-ऐसी मिथ्या मान-पूजा, इस जीवने अनन्तीवार कराइ है. तदपि आराधकपद नहीं मिला है. आराधकपद, निर्मल चित्तसे आलोचना करनेसे ही मिल सके. इत्यादि

(५) दर्शनवान्—जिसकी अटल श्रद्धा, वीतरागके धर्मपर है, वह ही शुद्ध भावसे आलोचना करेंगा उसकी ही आलोचना प्रमाण गिनी जाती है, कि-जिसका दर्शन निर्मल है.

(६) चारित्रवान्—जिसको पूर्णतासे चारित्र पालनेकी अभिरुचि है, वह ही लगे हुवे दोषोंकी आलोचना करेंगा.

(७) अमायी – जिसका हृदय निष्कपटी, सरल, स्वभाव होगा, वह ही मायारहित आलोचना करेंगा.

(८) जितेंद्रिय—जो इन्द्रियविषयको अपने आधीन बना लीया हो, वह ही कर्मोंके सन्मुख मोरचा लगाके, तपरूप शस्त्र लेके खडा होगा, अर्थात् आलोचना ले, तप वह ही कर सकेंगा, कि जिन्होंने इन्द्रियोंको जीती हो.

(९) उपशमभावी—जिन्होंका कषाय उपशान्त हो रहा है. न उसे क्रोध सताता है, न मानहानिमें मान सताता है, न माया न लोभ सताता है, वह ही शुद्ध भावसे आलोचना करेंगा.

(१० प्रायश्चित्त ग्रहन कर, पश्चात्ताप न करे, वह आलोचना करनेके योग्य होते है.

(स्थानांगसूत्र.)

प्रायश्चित्त कितने प्रकारके है ? प्रायश्चित्त दश प्रकारके है. कारण—एक ही दोषको सेवन करनेवालोंको अभिप्राय अलग अलग होते है, तदनुसार उसे प्रायश्चित्त भी भिन्न भिन्न होना चाहिये. यथा—

(१) आलोचना—एक ऐसा अशक्य परिहार दोष होता है कि-जिसको गुरु सन्मुख आलोचना करनेसे ही पापसे निवृत्ति हो जाती है.

(२) प्रतिक्रमण—आलोचना श्रवण कर गुरु महाराज कहे कि-आज जो तुमने यह कार्य कीया है, किन्तु आइंदासे ऐसा कार्य नहीं करना चाहिये. इसपर शिष्य कहे-तहत्त-अब मैं ऐसा कार्यसे निवृत्त होता हुं. अकृत्य कार्यसे पीछा हटता हुं.

(३) उभया—आलोचना और प्रतिक्रमण दोनों करे. भावना पूर्ववत्.

(४) विवेग—आलोचना श्रवण कर एसा प्रायश्चित्त दीया जाय कि-दुसरी दफे ऐसा कार्य न करे. कुछ वस्तुका त्याग कराना तथा परिठन कार्य कराना

(५) कायोत्सर्ग—दश, वीश, लोगस्सका काउस्सग नमस्कारादि दिलाना.

(६) तप—मासिक तप यावत् छे मासिक तप, जो निशिथसूत्रके २० उद्देशोंमें बतलाया गया है.

(७) छेद—जो मुल दीक्षा लीधी, उसमें एक मास, च्यार

सुख, कल्याण, मोक्ष, अनुगामित होवे है. (१) अवधिज्ञानकी प्राप्ति. (२) मनःपर्यवज्ञानकी प्राप्ति. (३) केवलज्ञानकी प्राप्ति होती है. इसी माफिक एक रात्रिकी भिक्षु प्रतिमाको वैसे इसका कल्पमार्ग यावत् आज्ञाका आराधक होवे है. इति । १२ ।

नोट—मुनियोंकी बारहा प्रतिमा यहांपर बतलाइ है. इसके सिवायभी सात सतमीया, आठ आठमीया, नौ नौमीया, दश दशमिया भिक्षु प्रतिमा जवमज्ज, चन्द्रमज्ज, भद्रप्रतिमा, महाभद्रप्रतिमा, सर्वोत्तर भद्रप्रतिमा, आदि भिक्षु प्रतिमा शास्त्रकारोंने बतलाइ है. प्रायः प्रतिमा वह ही धारण करते है, कि जिन्होंके वज्र ऋषभ नाराच संहनन होवे है. प्रतिमा एक विशेष अभिग्रहको कहते हैं. शरीर चले जाने—मरणान्त कष्ट होनेपरभी अपने नियमसे क्षोभित न होना उसीका नाम प्रतिमा है.

इति दशाश्रुत स्कन्ध सातवा अध्ययनका संक्षिप्त सार.

—※—

[८] आठवा अध्ययन.

तेणं कालेणं इत्यादि तस्मिन् काले तस्मिन् समये, काल चतुर्थ आरा, समय—चतुर्थ आरेमें तेवीश तीर्थंकर हुवे है. उसमें यह बात कौनसे समयकी है. इसका निर्णय करनेको कहते है कि समय वह है कि जो भगवान् वीर प्रभु विचर रहेथे.

मगवान् वीरप्रभुके पांच हस्तोत्तर नक्षत्र (उत्तरा फाल्गुनि नक्षत्र था) (१) हस्तोत्तरा नक्षत्रमें दशवा देवलोकमें च-वके देवानंदा ब्राह्मणीकी कुक्षिमें अवतार धारण किया. (२) हस्तोत्तरा नक्षत्रमें भगवानका संहरण हुवा, अर्थात् देवानंदाकी कुक्षसे हरिणगमेषी देवताने त्रिशलादे राणीकी कुखमें संहरण कीया. (३) हस्तोत्तरा नक्षत्रमें भगवानका जन्म हुवा (४) हस्तोत्तरा नक्षत्रमें भगवानने दीक्षा धारण करी. (५) हस्तोत्तरा नक्षत्रमें भगवानको केवळज्ञान उत्पन्न हुवा. यह पांच कार्य भगवानके हस्तोत्तरा नक्षत्रमें हुवा है और स्वांति नक्षत्रमे भगवान् वीर प्रभु मोक्ष पधारेथे. शेषाधिकार पर्युषणाकल्प अर्थात् कल्पसूत्रमें लिखा है. श्रीभद्रबाहुस्वामी यह दशाश्रुत स्कन्ध रचा है. जिसका आठवा अध्ययनरुप कल्पसूत्र है. उसके अर्थरुप भगवान वीरप्रभु बहुतमे साधु, साध्वीयों, श्रावक, श्राविका, देव, देवीयोंके मध्यमे विराजमान हो फरमाया है. उपदेश किया है. विशेष प्रकारसे प्ररुपणा करते हुवे वारवार उपदेश किया है.

इति आठवा अध्ययन.

—:०—

[९] नौवा अध्ययन.

महा मोहनीय कर्म बन्धके ३० स्थान है.

चंपानगरी, पूर्णभद्रोद्यान, कोणिकराजा, जिसकी धारिणी राणी, उस नगरीके उद्यानमें भगवान् वीर प्रभुका आग-

मन हुवा. राजा कोणिक सपरिवार च्यार प्रकारकी सेना स-हित तथा नगरीके लोक भगवानको वन्दन करनेको आये. भगवानने विचित्र प्रकारकी धर्मदेशना दी. परिषद् देशनामृतका पान कर पीछे गमन कीया.

भगवान् श्रमने साधु, साध्वीयोंको आमंत्रण कर कहते हुवेकि—हे आर्यो ! महा मोहनीय कर्मबन्धके तीस स्थान अगर पुरुष या स्त्रीयों वारवार इसका आचरण करनेसे समाचरते हुवे महामोहनीय कर्मका बन्ध करते है. वहही तीस स्थान मैं आज तुमको सुनाता हुं, ध्यान देके सुनो—

(१) त्रस जीवोंको पाणीमें डुवा डुवा के मारता है. वह जीव महामोहनीय कर्म उपार्जन करता है. (२) त्रस जीवोंका श्वासोश्वास बन्धकर मारनेसे—(३) त्रस जीवोंको अग्नि या धूमसे मारनेसे—(४) सर्व अंगमें मस्तक उत्तम अंग है, अगर कोइ मस्तकपर घाव कर मारता है, वह जीव महा मोहनीय कर्म उपार्जन करता है. (५) मस्तकपर चर्म वींटके जीवोंको मारता है, वह महामोहनीय कर्म उपार्जन करता है. (६) कोइ वावले, गूंगे, लूले, लंगडे या अज्ञानी जीवोंको फल या दंडसे मारे या हांसी, ठट्टा, मस्करी करते है, वह महा मोहनीय कर्म वान्धता है. (७) जो कोइ आचारी नाम धराता हुवे, गुप्तपणे अनाचारको सेवन करे, अपना अनाचार गुप्त रखनेके लीये असत्य बोले तथा वीतरागके वचनोंको गुप्त रख आप उत्सूत्रोंकी प्ररुपणा करे, तो महा मोहनीय कर्म बांधे.

(८) अपने किया हुआ अपराध, अनाचार, दूसरेके शिरपर लगादेनेसे—(९) आप जानते है कि यह बात जूठी है तो भी परिषदकी अन्दर बैठके मिश्र भाषा बोलके क्लेशकी वृद्धि करनेसे—(१०) राजा अपनी मुखत्यारी प्रधानको तथा शेठ मुनिमको मुखत्यारी देदी हो, वह प्रधान, तथा मुनिम उस राजा तथा शेठकी दौलत-धन तथा स्त्री आदिको अपने स्वाधीन करके राजा तथा शेठका विश्वासघात कर निराधार बना उनका तिरस्कार करे, उसके कामभोगोंमें अन्तराय करे, उसको प्रतिकूल दुःख देवे, रुदन करावे, इत्यादि. तो महामोहनीय कर्म उपार्जन करे. (११) जो कोइ बाल ब्रह्मचारी न होनेपरभी लोगोंमें बालब्रह्मचारी कहाता हुवा स्त्रीभोगोंमें मूर्छित बन सेवन करे, तो महा मोहनीय कर्म उपार्जन करे. (१२) जो कोइ ब्रह्मचारी नहीं होनेपरभी ब्रह्मचारी नाम धराता हुवा स्त्रीयोंके कामभोगमें आसक्त, जैसे गायोंके टोलेमें गर्दभकी माफिक ब्रह्मचारीयोंकी अन्दर भांडके रूपको लज्जित करानेवाला अपना आत्माका अहित करनेवाला, बाल, अज्ञानी, मायासंयुक्त, मृषावाद सेवन करता हुवा, कामभोगकी अभिलाषा रखता हुवा महा मोहनीय कर्म उपार्जन करे. (१३) जो कोइ राजा, शेठ तथा गुरुआदिकी प्रभावसे लोगोंमे माननीय बने योग्य बना है, फिर उसी राजा, शेठ तथा गुरुआदिक के द्रव्य कीर्तिको नाश करनेका उपाय करे, अर्थात् उन्होंके द्रव्य वगैरह हरे. तो महा मोहनीय कर्म उपार्जन करे. (१४)

जो कोइ अनीश्वरको राजा अपना राज्य लक्ष्मी दे के तथा नगरके लोक मिलके उसको मुखीया (पंच) बनाया हो फिर राज्य-लक्ष्मी आदिका गर्व करता हुवा उस लोगोंको दंडे मारे, मरवावे तथा उन्होंका अहित करे. तो महा मोहनीय कर्म बान्धे. (१५) जैसे सर्पणी इंडा उत्पन्न कर आपही उनोंका भक्षण करे, इसी माफिक स्त्री भर्तारको मारे, सेनापति राजाको मारे. शिष्य गुरुको मारे, तथा विश्वासघात करे, उन्होंसे प्रतिकूल वरते तो महा मोहनीय. (१६) जो कोइ देशाधिपति राजाकी घात करनेकी इच्छा करे तथा नगरशेठ आदि महा पुरुषोंकी घात चिन्तवे तो महा मोहनीय-(१७) जैसे समुद्रमें द्वीप आधारभूत होते है, इसी माफिक बहुत जीवोंका आधारभूत ऐसा बहुतसे देशोंका राजाकी घात करनेकी इच्छावाला जीव महामोहनीय. (१८) जो कोइ जीव परम वैराग्यको प्राप्त हो, सुसमाधिवन्त साधु बनना चाहे अर्थात् दीक्षा लेना चाहे, उसको कुयुक्तियोंसे तथा अन्य कारणोंसे चारित्रसे परिणाम शीतल करवा दे, तो महा मोहनीय. (१९) जो अनंत ज्ञान-दर्शनधारक सर्वज्ञ भगवानका अवर्णवाद बोले तो महा मोहनीय (२०) जो सर्वज्ञ भगवंत तीर्थंकरोंने निर्देश किया हुवा स्याद्वादरूप भवतारक धर्मका अवर्णवाद बोले, तो महामोहनीय. (२१) जो आचार्य महाराज, तथा उपाध्यायजी महाराज. दीक्षा, शिक्षा तथा सूत्रज्ञानके दातार. परमोपकारीके अपयश करे. हीलना, निंदा, खीं-

सना करे, वह बाल अज्ञानी महा मोहनीय—(२२) जो आचार्योपाध्यायके पास ज्ञान, ध्यान कर आप अभिमान, गर्वका मारा उसी उपकारी महा पुरुषोंकी सेवा भक्ति, विनय, वैयावच, यश कीर्ति न करे तो महा मोहनीय. (२३) जो कोइ अबहुश्रुत होनेपरभी अपनी तारीफ बढाने कारण लोगोंमें कहेकि मैं बहुश्रुत अर्थात् सर्व शास्त्रोंका पारगामी हुं, ऐसा असद्वाद बदे तो महा मोहनीय. (२४) जो कोइ तपस्वी होनेका दावा रखे, अर्थात् अपना कृश शरीर होनेसे दुनीयांको कहे कि मैं तपस्वी हूं–तो महा मोह. (२५) जो कोइ साधु शरीरादिसे सुदृढ सहननवाला होनेपरभी अभिमानके मारे विचारेकि—मैं ज्ञानी हूं, बहुश्रुत हूं, तो ग्लानादिकी वैयावच क्यों करु? इसनेभी मेरी वैयावच नहीं करीथी, अथवा ग्लान तपस्वी, वृद्धादिकी वैयावच करनेका कबूल कर फिर वैयावच न करे तो महा मोहनीय कर्म उपार्जन करे. (२६) जो कोइ चतुर्विध संघमें क्लेशवृद्धि करना, छेद, भेद डलाना, फुट पाड देना ऐसा उपदेश दे कथा कर करावे तो महा मोहनीय—(२७) जो कोइ अधर्मकी प्ररुपणा करे तथा यंत्र, मंत्र, तंत्र, वशीकरण प्रयुंजे ऐसे अधर्मवर्धक कार्य करे, तो महामोहनीय. (२८) जो कोइ इस लोक–मनुष्य संबन्धी, परलोक–देवता संबन्धी, कामभोगमें अतृप्त अर्थात् सदैव कामभोगकी अभिलाषा रखे, जहां मरणावस्था आगइ हो, वहांतकभी कामाभिलाष रखे. तो महा [illegible]. (२९) जो कोइ देवता महाऋद्धि, ज्योति, कान्ति, [illegible] धणी देव है, उसका अवर्णवाद बोले,

निन्दा करे, कथवा कोइ व्रत पालके देवता हुवा है, उसका अवर्णवाद बोले तो. महामोहनीय. (३०) जिसके पास देवता नहीं आता है, जिन्होंने देवताओंको नहीं देखा हो और अपनी पूजा, प्रतिष्ठा मान बढानेके लीये जनसमूहके आगे कहेकि-च्यार जातिके देवताओंसे अमुक जातिका देवता मेरे पास आता है, तो महामोहनीय कर्म उपार्जन करे.

यह ३० कारणोंसे जीव महा मोहनीय कर्म उपार्जन (बन्ध) करता है. वास्ते मुनिमहाराज इन कारणोंको सम्यग् प्रकारसे जानके परित्याग करे. अपना आत्माका हितार्थ शुद्ध चारित्रका खप करे. अगर पूर्वावस्थामें इस मोहनीय कर्म बन्धके स्थानोंको सेवन कीया हो, उस कर्मक्षय करनेको प्रयत्न करे. आचारवन्त, गुणवन्त, शुद्धात्मा क्षान्त्यादि दश प्रकारका पवित्र धर्मका पालन कर पापका परित्याग. जैसा सर्प कांचलीका त्याग करता है. इसी माफिक करे. इस लोक और परलोकमें कीर्तिभी उसी महा पुरुषोंकी होती है कि जिन्होंने ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप कर इस मोहनेन्द्रका मूलसे पराजय कीया है. अहो शूरवीर ! पूर्ण पराक्रमधारी ! तुमारा अनादि कालका परम शत्रु जो जन्म, जरा, मृत्युरुप दुःख देनेवालाका जल्दी दमन करो. जिससे चेतन अपना निजस्थानपर गमन करता हुवेमें कोइ विघ्न न करे. अर्थात् शाश्वत सुखोंमें विराजमान होवे. ऐसा फरमान सर्वज्ञका है.

॥ इति नौवा अध्ययन समाप्त ॥

सना करे, वह बाल अज्ञानी महा मोहनीय—(२२) जो आचार्योपाध्यायके पास ज्ञान, ध्यान कर आप अभिमान, गर्वका मारा उसी उपकारी महा पुरुषोंकी सेवा भक्ति, विनय, वैयावच, यश कीर्ति न करे तो महा मोहनीय. (२३) जो कोइ अबहुश्रुत होनेपरभी अपनी तारीफ बढाने कारण लोगोंमे कहेकि— मैं बहुश्रुत अर्थात् सर्व शास्त्रोंका पारगामी हुं, ऐसा असद्वाद वदे तो महा मोहनीय. (२४) जो कोइ तपस्वी होनेका दावा रखे, अर्थात् अपना कृश शरीर होनेसे दुनीयांको कहे कि मैं तपस्वी हूं-तो महा मोह. (२५) जो कोइ साधु शरीरादिसे सुदृढ सहननवाला होनेपरभी अभिमानके मारे विचारेकि— मैं ज्ञानी हुं, बहुश्रुत हुं, तो ग्लानादिकी वैयावच क्यों करुं! इसनेभी मेरी वैयावच नहीं करीथी, अथवा ग्लान. तपस्वी. वृद्धादिकी वैयावच करनेका कबूल कर फिर वैयावच न करे तो महा मोहनीय कर्म उपार्जन करे. (२६) जो कोइ चतुर्विध संघमें क्लेशवृद्धि करना, छेद. भेद डलाना, फुट पाड देना- ऐसा उपदेश दे कथा करे करावे तो महा मोहनीय—(२७) जो कोइ अधर्मकी प्ररुपणा करे तथा यंत्र, मत्र, तंत्र, वशीकरण प्रयुंजे ऐसे अधर्मवर्धक कार्य करे, तो महामोहनीय. (२८) जो कोइ इस लोक-मनुष्य संबन्धी परलोक-देवता संबन्धी, कामभोगसे अतृप्त अर्थात् सदैव कामभोगकी अभिलाषा रख, जहां मरणावस्था आगइ हो, वहांतकभी कामाभिलाष रखे. तो महा मोहनीय. (२९) जो कोइ देवता महाऋद्धि, ज्योति, कान्ति, महाबल, महायशका धणी देव है, उसका अवर्णवाद बोले,

निन्दा करे, अथवा कोइ व्रत पालके देवता हुवा है, उनका अवर्णवाद बोले तो. महामोहनीय. (३०) जिसके पास देवता नहीं आता है. जिन्होंने देवतावोंको नहीं देखा हो और अपनी पूजा, प्रतिष्ठा मान बढानेके लीये जनसमूहके आगे कहेकि-च्यार जातिके देवतावोंमें अमुक जातिका देवता मेरे पास आता है, तो महामोहनीय कर्म उपार्जन करे.

यह ३० कारणोंसे जीव महा मोहनीय कर्म उपार्जन (बन्ध) करता है. वास्ते मुनिमहाराज इन कारणोंको सम्यक् प्रकारसे जानके परित्याग करे. अपना आत्माका हितार्थ शुद्ध चारित्रका रक्षण करे. अगर पूर्वावस्थामें इस मोहनीय कर्म बन्धके स्थानोंको सेवन कीया हो, उस कर्मक्षय करनेको प्रयत्न करे. आचारवन्त, गुणवन्त, शुद्धात्मा क्षान्त्यादि दश प्रकारका पवित्र धर्मका पालन कर पापका परित्याग. जैसा सर्प कांचलीका त्याग करता है. इसी माफिक करे. इस लोक और परलोकमें कीर्तिभी उसी महा पुरुषोंकी होती है कि जिन्होंने ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप कर इस मोहनरेन्द्रका मूलसे पराजय कीया है. अहो शूरवीर ! पूर्ण पराक्रमधारी ! तुमारा अनादि कालका परम शत्रु जो जन्म, जरा, मृत्युरुप दुःख देनेवालाका जल्दी दमन करो. जिससे चेतन अपना निजस्थानपर गमन करता हुवेमें कोइ विघ्न न करे. अर्थात् शाश्वत सुखोंमे विराजमान होवे. ऐसा फरमान सर्वज्ञका है.

॥ इति नौवा अध्ययन समाप्त ॥

(१०) दशवां अध्ययन.

नौ निदानाधिकार.

राजगृह नगर, गुणशीलोद्यान, श्रेणिक राजा, चेलणा राणी, इस सबका वर्णन जैसा उववाइजी सूत्रके माफिक समझना.

एक समय राजा श्रेणिक स्नान मज्जन कर, शरीरको चन्दनादिकका लेपन किया, कंठकी अन्दर अच्छे सुगन्धिदार पुष्पोंकी मालाको धारण कर सुवर्ण आदिसे मंडित, मणि आदि रत्नोंसे जडित भूषणोंको धारण किये, हाथोंकी अंगुलियोंमें मुद्रिका पहनी, कम्मरकी अन्दर कंदोरा धारण किया है, मुगटसे मस्तक सुशोभनीक बना है, इत्यादि अच्छे वस्त्र-भूषणोंसे शरीरको कल्पवृक्षकी माफिक अलंकृत कर, शिरपर कोरंटवृक्षकी माला संयुक्त छत्र धरावता हुवा, जैसे ग्रहगण, नक्षत्र, तारोंके सुपरिवारसे चन्द्र आकाशमें शोभायमान होता है. इसी माफिक भूमिके भूषणरुप श्रेणिक नरेन्द्र, जिसका दर्शन लोगोंको परमप्रिय है. वह एक समय बाहारकी आस्थानशालाकी अन्दर आ कर राजयोग्य सिंहासनपर बैठके अपने अनुचरोंको बुलवायके ऐसा आदेश करता हुवा— तुम इस राजगृह नगरकी बाहार आराममें जावो, जहां स्त्री-पुरुष क्रीडा करते हो, उद्यान जहां नानाप्रकारके वृक्ष, पुष्प, पत्रादि होते है. कुंभकारादिकी शाला, यक्षादिके देवालय.

सभाके स्थानोंमें पाणीके पर्वकी शाला, करियाणेकी शाला, वैपारीयोंकी दुकानोंमें. रथोंकी शालाओंमें, तुनादिकी शालामें, सुतारोंकी शालामें, तुनारोंकी शालामें, इत्यादि स्थानोंमें जाके कहो कि—राजा श्रेणिक (अपरनाम भंभसार) की यह आज्ञा है कि श्रमणभगवन्त वीरप्रभु पृथ्वीमंडलको पवित्र करते हुवे, एक ग्रामसे दूसरे ग्राम विहार करते हुवे, सुखे सुखे तप-संयमकी अन्दर अपनी आत्माको भावते हुवे, यहांपर पधार जावे तो तुम लोग उन्होंको बडा आदरसत्कार करके स्थानादि जो चाहिये उन्होंकी आज्ञा दो, भक्ति करो, बादमे भगवान् पधारनेकी खुश खबर राजा श्रेणिकको शीघ्रता पूर्वक देना, ऐसा हुकम राजा श्रेणिकका है.

आदेशकारी पुरुषों इस श्रेणिकराजाका हुकमको सविनय सादर कर—कमलोंसे अपना शिरपर चढाके बोलेकि—हे धराधिप ! यह आपका हुकम मैं शीघ्रता पूर्वक सार्थक करुंगा. ऐसा कहके वह कुटम्बीक पुरुष राजगृह नगरके मध्य भाग होके नगरकी बाहार जाके जो पूर्वोक्त स्थानोंमे राजा श्रेणिकका हुकमकी उद्घोषणा कर शीघ्रतासे राजा श्रेणिकके पास आके आज्ञाको सुप्रत करदी.

उसी समय भगवान् वीरप्रभु. जिन्होंका धर्मचक्र आकाशमें चल रहा है, चौदा हजार मुनियों, छत्तीस हजार साध्वीयों कोटिगमे देव-देवीयोंके परिवारसे भूमंडलको पवित्र करते हुवे राजगृह नगरके उद्यानमें समवसरण करते हुवे.

राजगृह नगरके दो, तीन, च्यार यावत् बहुतसे रास्ते पर लोगोंको खबर मिलनेही बडे उत्साहसे भगवान्‌को वन्दन करनेको गये. वन्दन नमस्कार कर, सेवा भक्ति कर अपना जन्म पवित्र कर रहेथे.

भगवानको पधारे हुवे देखके महत्तर वनपालक भगवान्‌के पास आया, भगवान्‌का नाम—गोत्र पूछा और हृदयमें धारण कर वन्दन नमस्कार कीया. बादमे वह सब वनपालक लोक एकत्र मिल आपसमे कहने लगे—अहो ! देवाणुप्रिय ! राजा श्रेणिक जिस भगवानके दर्शनकी अभिलाषा करते थे वह भगवान् आज इस उद्यानमें पधार गये है. तो अपनेको शीघ्रता पूर्वक राजा श्रेणिकसे निवेदन करना चाहिये.

सब लोक एकत्र मिलके राजा श्रेणिकके पास गये. और कहते हुवे कि—हे स्वामिन् ! जिस भगवानके दर्शनकी आपको प्यास थी अभिलाषा करते थे, वह भगवान् वीरप्रभु आज उद्यानमें पधार गये हैं. यह सुनकर राजा श्रेणिक बडाही हर्ष संतोषको प्राप्त हुवा सिंहासनसे उठ जिस दिशामें भगवान विराजमान थे, उसी दिशामें सात आठ कदम जाके नमोत्थुणं देके बोला कि—हे भगवान् ! आप उद्यानमें विराजमान हो, मैं यहांपर रहा आपको वन्दन करता हूं आप स्वीकार करावे.

बादमें राजा श्रेणिक उस समय देनेवालोंको बडाही

मादर. सत्कार कीया और वधाइकी अन्दर इतना द्रव्य दीया कि उन्होंकी कितनी परंपरा तक भी खाया न जाय. बादमें उन्होंको विसर्जन किया और नगर गुवीया (कोटवाल) को बुलायके आदेश करते हुवे कि-तुम जावो राजगृह नगर अभ्यंतर और बाहारसे साफ करवाओ. सुगन्धि जलसे छंटकाव करवाओ, जगे जगेपर पुष्पोंके ढेर लगवावो. सुगन्धि धूपमे नगर व्याप्त कर दो-इत्यादि आज्ञाको शिरपर चडाके कोटवाल अपने कार्यमें प्रवृत्ति करता हुवा.

राजा श्रेणिक सेनापतिको बुलाके आज्ञादि कि तुम जावे-हस्ती. अश्व, रथ और- पैदल-यह च्यार प्रकारकी सेना तैयार कर हमारी आज्ञा वापीस सुप्रत करो. सेनापति राजाकी आज्ञाको सहर्ष स्वीकार. अपने कार्यमें प्रवृत्ति कर आज्ञा सुप्रत कर दी.

राजा श्रेणिक अपने रथकारको बुलवाय हुकम किया कि-धार्मिक रथ तैयार कर उत्थानशालामें लाके हाजर करो. राजाके हुकमको शिरपर चडाके सहर्ष रथकार रथशालामें जाके रथकी सर्व सामग्री तैयार कर, वहेलशालामें गया. वहांसे अच्छे, देखनेमें सुंदर चलनेमे शीघ्र चालवाले युवक वृषभोंको निकाल, उनको स्नान कराके अच्छे भूषण वस्त्र (झूलों) धारण करा रथके साथ जोड, रथ तैयार कर, राजा श्रेणिकसे अर्ज करी कि-हे नाथ! आपकी आज्ञा माफिक यह रथ तैयार है. रथकारकी यह बात श्रवण कर अर्थात् रथकी सजावटको देख-

कर राजा श्रेणिक बडाही हर्षको प्राप्त हुवा आप मजन घरमें प्रवेश करके स्नान मजन कर पूर्वकी माफिक अच्छे सुन्दर वस्त्रभूषण धारण कर, कल्पवृक्षकी माफिक बनके जहांपर चेलणा राणी थी, वहांपर आया और चेलणा राणीसे कहा कि-हे प्रिया ! आज श्रमणभगवान् वीरप्रभु गुणशीलोद्यानमें पधारे हुवे हैं. उन्होंका नाम-गोत्र श्रवण करनेका भी महाफल है, तो भगवान्को वन्दन करना, नमस्कार करना और श्रीमुखसे देशना श्रवण करना इसके फलका तो कहेना ही क्या ? वास्ते चलो भगवान्को वन्दन--नमस्कार करे, भगवान् महामंगल है. देवताके चैत्यकी माफिक उपासना करने योग्य है. राणी चेलणा यह वचन सुनके बडा ही हर्षको प्राप्त हुइ. अपने पतिकी आज्ञाको शिरपे चढाके आप मजन घरमें प्रवेश किया. वहांपर स्वच्छ सुगन्धि जलसे सविधि स्नान--मजन कर शरीरको चन्दनादिसे लेपन कर (कृतबलिकर्म-देवपूजन करी है) शरीरमें भूषण, जैसे पावोंमें नेपुर, कम्मरमें मणिमंडित कंदोरा, हृदयपर हार, कानोंमें चमकते कुंडल, अंगुलीयोंमें मुद्रिका, उत्तम खलकती चुडीयें, मांदलीये--इत्यादि रत्नजडित भूषणोंसे सुशोभित, जिसके कुंडलोंकी प्रभासे वदनकी शोभामे वृद्धि करी है. पेहने है कान्तिकारी रमणीय, बडा ही सुकुमाल जो नाककी हवासे उड जावे, मक्खीके जाल जैसे वस्त्र, और भी सुगन्धि पुष्पोंके बने हुवे तुरे गजरे, सेहरे, मालावों आदि धारण किया है. चर्चित चन्दन कान्तिकारी है दर्शन जिन्होंका, जिसका स्व

विलास आश्चर्यकारी है—इत्यादि अच्छा सुन्दर रुप शृंगार कर बहुतसे दास-दासीयों नोकर चाकरोंके परिवारसे अपने घरसे नीकले शहारकी उद्यानशालामें चेलणा राणी आइ है.

राजा श्रेणिक चेलणा राणी साथमें रथपर बैठके राजगृह नगरके मध्य बाजार होके जैसे उववाइजी सूत्रमें कोणिक वन्दनाधिकारमें वर्णन किया है इसी माफिक बडे ही आडम्बरसे भगवानको वन्दन करनेको गये. भगवानके छत्रादि अतिशयको देख आप सवारीसे उतर पैदल पांच अभिगम धारण करते हुवे जहां भगवान् विराजमान थे वहांपर आये. भगवानको तीन प्रदक्षिणा दे वन्दन-नमस्कार कर राजा श्रेणिकको आगे कर चेलणा आदि सब लोग भगवानकी सेवा भक्ति करने लगे.

उस समय भगवान् वीरप्रभु राजा श्रेणिक, राणी चेलणा आदि मनुष्य परिषद, यति परिषद, मुनि परिषद, देव परिषद, देवी परिषद-इत्यादि १२ प्रकारकी परिषदकी अन्दर विस्तारसे धर्मकथा सुनाइ. विस्तार उववाइजी सूत्रसे देखे.

परिषद भगवान्की मधुर अमृतमय देशना श्रवण कर बडा ही आनन्द पाया, यथाशक्ति व्रत, प्रत्याख्यान कर अपने अपने स्थानकी तर्फ गमन किया. राजा श्रेणिक राणी चेलणा भी भगवानकी भवतारक देशना सुन. भगवान्को वन्दन-नमस्कार कर अपने स्थानपर गमन किया.

वहांपर भगवान्के समवसरणमें रहे हुवे कितनेक साधु-

साध्वीयों राजा श्रेणिक और राणी चेलणाको देखके उन
साधु साध्वीयोंके ऐसे अध्यवसाय, मनोगत परिणाम हुवाकि—
अहो ! आश्चर्य ! यह श्रेणिक राजा बडा महर्द्धिक, महाधुति.
महा ज्योति, महाकान्ति, यावत् महासुखके धणी, जिन्होंने
किया है स्नान मज्जन, शरीरको वस्त्र भूषणसे कल्पवृक्ष सदृश
बनाया है. और चेलणा राणी यहभी इसी प्रकारसे एक शृंगा
रका घर है. जिसके राजा श्रेणिक मनुष्य सबन्धी कामभोग
भोगवता हुवा विचर रहा है. हमने देवता नहीं देखे है, परन्तु
यह प्रत्यक्ष देव देवीकी माफिकही देख पडते है. अगर हमारे
तप, अनशनादिसंयम व्रतरुप तथा ब्रह्मचर्यके फल हो, तो
हमभी भविष्यकालमे राजा श्रेणिककी माफिक मनुष्य संबन्धी
भोग भोगवते विचरे अर्थात् हमकोभी श्रेणिक राजा सदृश
भोगोंकी प्राप्ति हो । इति साधु–साधुवोंने ऐसा निदान
(नियाणा) कीया.

अहो ! आश्चर्य ! यह चेलणा राणी स्नान मज्जन कर
यावत् सर्व अंग सुन्दर कर शृंगार किया हुवा, राजा श्रेणिकके
साथ मनुष्य संबन्धी भोग भोग रही है. हमने देवतोंको नहीं
देखा है, परन्तु यह प्रत्यक्ष देवताकी माफिक भोग भोगवते है.
इसलीये अगर हमारे तप, संयम, ब्रह्मचर्यका फल हो, तो ह-
मभी भविष्यमें चेलणा राणीके सदृश मनुष्य संबन्धी सुख
भोगवते विचरे. अर्थात् हमकोभी चेलणा राणीके जैसे भोग-

विलास मिले। साध्वीयोंने भगवानके समवसरणमें ऐसा निदान किया था.

भगवान् वीर प्रभु समवसरण स्थित साधु, साध्वीयोंके यह अकृत्य कार्य (निदान) को अपने केवलज्ञान द्वारा जानके साधु, साध्वीयोंको आमंत्रण कर (बुलवाय कर) कहने लगे—अहो! आर्य! आज राजा श्रेणिकको देखके तुमने पूर्वोक्त निदान किया है. इति साधु. हे साध्वीयों! आज राणी चेलणाको देख तुमने पूर्वोक्त निदान किया है। इति साध्वीयों. हे साधु साध्वीयों! क्या यह बात सच्ची है? अर्थात् तुमने पूर्वोक्त निदान किया है? साधु, साध्वीयोंने निष्कपट भावसे कहा—हां भगवान्! आपका फरमान सत्य है हम लोगोंने ऐसाही निदान कीया है.

हे आर्य! निश्चयकर मैंने जो धर्म (द्वादशांगरुप) प्ररुपा है, वह सत्य, प्रधान, परिपूर्ण, निःकेवल राग द्वेष रहित शुद्ध-पवित्र, न्यायसंयुक्त, सरल, शल्य रहित, सर्व कार्यमें सिद्धि करनेका राहस्ता है, संसारसे पार होनेका मार्ग है, निर्वृतिपुरीको प्राप्त करनेका मार्ग है, अवस्थित स्थानका मार्ग है, निर्मल, पवित्र मार्ग है, शारीरिक मानसिक दुःखोंका अन्त करनेका मार्ग है, इस पवित्र राहस्ते चलता हुवा जीव सर्व कार्योंको सिद्ध कर लेता है लोकालोकके भावोंको जाना है, सकल कर्मोंसे मुक्त हुवे है. सकल कषायरुप तापसे शीतलभूत हुवा है. सर्व शारीरिक मानसिक दुःखोका अंत किया है.

इस धर्मकी अन्दर ग्रहण और आसेवन शिषाके लीये सावधान साधु, क्षुधा, पिपासा, शीत, उष्ण आदि अनेक परीषह-उपसर्गको सहन करते, महान सुभट कामदेवका पराजय करते हुवे संयम मार्गमे निर्मल चित्तसे प्रवृत्ति करे, प्रवृति करता हुवा उग्रकुलमें उत्पन्न हुवा उग्रकुलके पुत्र, महामाता अर्थात् उंच जाति की मातावोंसे जिन्होंका जन्म हुवा है. एवं भोगकुलोत्पन्न हुवा पुरुष जो बाहारसे गमन कर नगरमें आते हुवे को तथा नगरसे बाहार जाते हुवे को देखे. जिन्हेंके आगे महा दासी दास, नोकर चाकर, पैदलोंके परिवारसे कितनेक छत्र धारण किये है एवं भंडारी, दंडादि, उसके आगे अश्व, असवार, दोनो पास हस्ती, पीछे रथ, और रथधर, इसी माफिक बहुतसे हस्ती, अश्व रथ और पैदलके परिवारसे चलते है. जिसके शिरपर उज्ज्वल छत्र हो रहा है, पासमे रहे के श्वेत चामर ढोलते है, जिसको देखनेके लीये नर नारीयों पासे बाहार आते है, अन्दर जाते है, जिन्होंकी कान्ति-प्रभा शोभनीय है, जिन्होंने किया है स्नान, मज्जन, देवपूजा, यावत् भूषण वस्त्रोंसे अलंकृत हो महा विस्तारवन्त, कोठागार, शालाके सामान्य मकानकी अन्दर यावत् रत्न जडित सिंहासनारोशनीकी ज्योतिके प्रकाशमें स्त्रीयोंके वृन्दमें, महान नाटक, गीत, वाजित्र, तंत्री, ताल, तूटीत, मृदंग, पडहा—इत्यादि प्रधान मनुष्य संबन्धी भोग भोगवता विचरता है. वह एक मनुष्यको बोलाता है, तब च्यार पांच स्त्री पुरुष आके खडे

होते हैं. वह कहते हैं कि हे नाथ ! हम क्या करें ? क्या आपका हुकम है ? क्या आपकी इच्छा है ? किसपर आपकी रुचि है ? इत्यादि उस कुलादिके उत्पन्न हुवे पुरुष पुण्यवन्तकी ऋद्धिका ठाठ देख अगर कोइ साधु निदान करेकि हमारे तप, संयम, ब्रह्मचर्यका फल हो, तो भविष्यमें हमको मनुष्य संबन्धी ऐसे भोग प्राप्त हो. इति साधु ।

हे श्रमण ! आयुष्यवन्त ! अगर साधु ऐसा निदान कर उसकी आलोचना न करे. प्रतिक्रमण न करे, पापका प्रायश्चित न लेवे और विराधक भावमें काल करे, तो वहांसे मरके महा ऋद्धिवन्त देवता होवे. वहांपर दिव्य ऋद्धि ज्योति यावत् महा सुखोंको प्राप्त करे. उस देवतावों संबन्धी दीर्घ काल सुख भोगवके, वहांसे चवके इस मनुष्य लोकमें उग्र कुलमें उत्तम वंशमे पुत्रपणे उत्पन्न हुवे. जो पूर्व निदान कियाथा, ऐसी ऋद्धि प्राप्त हो जावे यावत् स्त्रीयोंके वृन्दमें नाटक होते हुवे, वाजित्र वाजते हुवे मनुष्य संबन्धी भोग भोगवते हुवे विचरे.

हे भगवन् ! उस कृत निदान पुरुषको केवली प्ररूपित धर्म उभयकाल सुनानेवाला धर्मगुरु धर्म सुना शके ?

हां, धर्म सुना शके, परन्तु वह जीव धर्म सुननेको अयोग्य होते हैं. वह जीव महारंभ, महा परिग्रह, स्त्रीयोंका कामभोगकी महा इच्छा, अधर्मी, अधर्मका व्यापार, अधर्मका सं-

कल्प यावत् मरके दक्षिणकी नरकमे जावे. भविष्यके लीये दुर्लभ बोधी होता है.

हे आयुष्यवंत श्रमणो! तथारुपके निदानका यह फ हुवा कि वह जीव केवली प्ररुपित धर्म श्रवण करनेके लीये अयोग्य है. अर्थात् केवली प्ररुपित धर्मका श्रवण करना दुष्कर हो जाता है. इति प्रथम निदान.

(२) अहो श्रमणों! मैंने जो धर्म प्ररुपित कीया है वह यावत् सर्व शारीरिक और मानसिक दुःखोंका अन्त करने वाला है. इस धर्मकी अन्दर प्रवृत्ति करती हुइ साध्वीयों बहु तसे परीषह-उपसर्गोको सहन करती हुइ, काम विकारका परा जय करनेमे पराक्रम करती हुइ विचरती है. सर्व अधिकार प्रथम निदानकी माफिक समझना.

एक समय एक स्त्रीको देखे, वह स्त्री कैसी है कि जगतमे वह एकही अद्भुत रुप लावण्य, चतुराइवाली है, मानो एक मातानेही ऐसी पुत्रीको जन्म दीया है. रत्नोंके आभरण समान, तेलकी सीसीकी माफिक उसको गुप्त रीतिसे संरक्षण कीया है, उत्तम जरी खीनखाप आदि वस्त्रकी सिंदुककी माफिक उन्हका संरक्षण कीया है, रत्नोंके करंडकी माफीक परम अमूल्य जिन्हको सर्व दुखोंसे बचाके रक्षण कीया है. वह स्त्री अपने पिताके घरसे निकलती हुइ, पतिके घरमें जाती हुइ. जिसके आगे पीछे बहुतसे दास, दासी, नोकर, चाकर, यावत् एकके

बुलानेपर च्यार पांच हाजर होते हैं. यावत् सर्व प्रथम निदानकी माफिक उस स्त्रीको देख साध्वीयों निदान करेकि—मेरे तप, संयम, ब्रह्मचर्यका फल हो, तो मैं भविष्यमें इस स्त्रीकी माफिक भोग भोगवती विचरुं. इति साध्वीका निदान.

हे आर्य! वह साध्वीयों निदान कर उसकी आलोचना न करे, यावत् प्रायश्चित्त न ले, विराधक भावमें काल कर महर्द्धिक देवतापणे उत्पन्न होवे, वहांसे जो निदान किया था, ऐसी स्त्री होवे, ऐसाही सुख–भोग प्राप्त करे, यावत् भोग भोगवती हुइ विचरे, उन स्त्रीको दोनों कालमें धर्म सुनानेवाला मिलनेपरभी धर्म नहीं सुने, अर्थात् धर्मश्रवण करनेकोभी अयोग्य है. वह महारंभ यावत् कामभोगमें मूर्च्छित हो, कालकर दक्षिण दिशाकी नारकीमें उत्पन्न होवे, भविष्यमेंभी दुर्लभ बोधि होवे.

हे मुनियों इस निदानका यह फल हुवाकि केवली प्ररुपित धर्मका श्रवण करनाभी नहीं बने, अर्थात् धर्म श्रवण करनेके लीयेभी अयोग्य होती है.

(२) हे आर्य! मैं जो धर्म प्ररुपण कीया है, उसकी अन्दर यावत् पराक्रम करता हुवा साधु कोइ स्त्रीको देखे, वह अति रुप–यौवनवती यावत् पूर्ववत् वर्णन करना. उसको देख, साधु निदान करेकि निश्चय कर पुरुषपणा बडाही खराब है, कारण, पुरुष होनेसे बडे बडे संग्राम करना पडता है. जिसकी अन्दर तीक्षण शस्त्रसे प्राण देना पडता है. औरभी व्यापार

करना, द्रव्योपार्जन करना, देश देशान्तर जाना, सब लोगों (आश्रितों) का पोषण करना—इत्यादि पुरुष होना अच्छा नहीं है. अगर हमारे तप, संयम, ब्रह्मचर्यका फल हो, तो भविष्यमें हम स्त्रीपनेको प्राप्त करें, वहभी पूर्ववत् रुप, यौवन, लावण्य, चतुराइ, जोकि जगतमें एकही पाइ जाय ऐसी. फिर पुरुषोंके साथ निर्विघ्नतासे भोग भोगवती विचरे. । इति साधु । यह निदान साधु करे. उस स्थानकी आलोचना न करे, यावत् प्रायश्चित न लेवे. विराधक भावसे काल कर महर्द्धिक देवताओंमें उत्पन्न हुवे. वह देव संबन्धी दिव्य सुख भोगके आयुष्य पूर्ण कर मनुष्य लोकमें अच्छा कुल—जातिको अच्छे रुप, यौवन, लावण्यको प्राप्त हुइ, उस पुत्रीको उंच कुलमें भार्या करके देवें, पूर्व निदानकृत फलसे मनुष्य संबन्धी कामभोग भोगवती आनन्दमें विचरे.

उस स्त्रीको अगर कोइ दोनो काल धर्म सुनानेवाला मिले, तोभी वह धर्म नहीं सुने, अर्थात् धर्म सुननेके लीये अयोग्य है. बहुत काल महारंभ, महा परिग्रह, महा काम भोगमें गृद्ध, मूर्च्छित हो काल कर दक्षिणकी नारकीमें नैरियापने उत्पन्न होगा. भविष्यके लीयेभी दुर्लभबोधि होगा.

हे आर्य ! इस निदानका यह फल हुवाकि वह धर्म सुननेके लीयेभी अयोग्य है. अर्थात् धर्म सुननाभी उदय न आता है. । इति ।

ऋद्धिवान् पुरुष हो. स्त्रीयोंके साथ मनुष्य संबन्धी भोग भोग-वते विचरे. इति साध्वी निदान कर उसकी आलोचना न करे यावत् प्रायश्चित्त न लेवे. काल कर महर्द्धिक देवपने उत्पन्न हो. वह देवसंबन्धी सुख भोग आयुष्यके अन्तमें वहांसे चवके कृतनिदान माफिक पुरुषपने उत्पन्न होवे, वह धर्म सुननेके लीये अयोग्य अर्थात् धर्म सुननाभी उदय नहीं आता. वह कृत निदान पुरुष महारंभ, महापरिग्रह, महा भोग भोगवनेमें गृद्ध मूर्च्छित हो, अन्तमें काल कर दक्षिण दिशाकी नारकीमें नैरियपने उत्पन्न हुवे. भविष्यमेंभी दुर्लभ बोधि होवे.

हे आर्य ! इस निदानका यह फल हुवाकि यह जीव केवली प्ररुपित धर्मभी सुन नहीं सके. अर्थात् धर्म सुननेकोभी अयोग्य होता है. । इति ।

(५) हे आर्य ! मैं जो धर्म प्ररुपित किया है. यावत् उस धर्मकी अन्दर साधु-साध्वी अनेक परीषह सहन करते हुवे, धर्ममें पराक्रम करते हुवे मनुष्य संबन्धी कामभोगोंमें विरक्त हुवा ऐसा विचार करेकि-अहो ! आश्चर्य ! यह मनुष्य संबन्धी कामभोग अध्रुव, अनित्य, अशाश्वत, सडन पडन विध्वंसन इसका सदैव धर्म है. अहो ! यह मनुष्यका शरीर मल मूत्र, श्लेष्म, मंस, चरबी, नाकमेल, वमन, पित्त, शुक्र, रक्त, इत्यादि अशुचिका स्थान है. देखनेसेंही विरुप दिखाता है. उश्वास निश्वास दुर्गन्धिमय है. मल, मूत्र कर भरा हुवा है.

न्याधिका खजाना है. वहभी पहिले व पीछे अवश्य छोडना पडेगा. इससे तो यह उर्ध्वलोक निवास करनेवाले देवता-वों अच्छे है, कि यह देवता अन्य किसी देवतावोंकी देवीयोंको अपने वशमें कर सर्व कामभोग उस देवीके साथ भोगवते है. तथा आप स्वयं अपने शरीरसे देवरूप और देवी-रूप बनाके उसके साथ भोग करे तथा अपनी देवीयोंके साथ भोग करे. अर्थात् ऐसा देवपना अच्छा है. वास्ते मेरे तप, सं-यम. ब्रह्मचर्यका फल हो तो भविष्य कालमें मेंभी यहांसे मरके उस देवोंकी अन्दर उत्पन्न हो. पूर्वोक्त तीनों प्रकारकी देवी-योंके साथ मनोहर भोग भोगवते हुवे विचरुं. । इति ।

हे आर्य ! जो कोइ साधु-साध्वीयों ऐसा निदान कर उनकी आलोचना न करे, यावत् पापका प्रायश्चित न लेवे और काल करे, वह देवोंमें उत्पन्न हुवे. वह महर्द्धिक, महा-द्योति यावत् महान् सुखवाले देवता होवे. वह देवता अन्य देवतावोंकी देवीयोंको तथा अपने शरीरसे वैक्रिय बनाइ हुइ देवीयोंसे और अपनी देवीयोंसे देवता संबन्धी मनोवांछित भोग भोगवे. चिरकाल देवसुख भोगवके अन्तमें वहांसे चवके उग्रकुलादि उत्तम कुलमें जन्म धारण करे यावत् आते जातेके साथे बहुतसे दास-दासीयों, वहांतककी एक बुलानेपर च्यार पांच आके हाजर होवे.

हे भगवन् ! उस पुरुषकों कोइ केवली प्ररुपित धर्म सुना सके ? हां, धर्म सुना सकते है. हे भगवन् ! वह धर्म

श्रवण कर श्रद्धा प्रतीत रुचि कर सके? धर्म सुन तो सके, परन्तु श्रद्धा प्रतीत रुचि कर सके? धर्म सुन तो सके परन्तु श्रद्धा प्रतीत रुचि नहीं ला सके. वह महारंभी, यावत् कामभोगकी इच्छावाला मरके दक्षिणकी नरकमें उत्पन्न होता है. भविष्यमें दुर्लभबोधि होगा.

हे आर्य! उस निदानका यह फल हुवा कि वह धर्म श्रवण करनेके योग्य होता है, परन्तु धर्मपर श्रद्धा प्रतीत रुचि नहीं कर सके. ॥ इति ॥

(६) हे आर्य! मैं जो धर्म प्ररुपा हूं. वह सर्व दुःखोंका अन्त करनेवाला है. इस धर्मकी अन्दर साधु-साध्वी पराक्रम करते हुवेकों मनुष्य संबन्धि कामभोग अनित्य है. यावत् पहिले पीछे अवश्य छोडने योग्य है। इससे तो उर्ध्वलोकमें जो देवों है, वह अन्य देवतावोंकी देवीयोंको वश कर नहीं भोगवते है, परन्तु अपनी देवीयोंको वश कर भोगवते है. तथा अपने शरीरमें वैक्रिय देव-देवी बनाके भोग भोगवते है. वह अच्छे है. वास्ते हमारे तप, संयम, ब्रह्मचर्यका फल हो तो हम उस देवोंमें उत्पन्न हुवे. ऐसा निदान कर आलोचना नहीं करता हुवा काल कर वह देवता होते है. पूर्वकृत निदान माफिक देवतावों संबन्धी सुख भोगवके वहांसे चवके उग्र कुल-जातिमें मनुष्यपणे उत्पन्न होते है. यावत् महाऋद्धिवन्त वहांतक एकको बोलानेपर पांच आके हाजर हुवे.

हे भगवन्! उसको केवलीप्ररुपित धर्म सुना सके?
हां, धर्म सुना सके. हे भगवन्! वह धर्म श्रवण कर श्रद्धा
प्रतीत रुचि करे? नहीं करे. परन्तु वह अरण्यवासी तापस
तथा ग्राम नजदीकवासी तपस्वी रहस्य (गुप्तपने) अत्याचार
सेवन करनेवाले विशेष संयमव्रत यद्यपि व्यवहार क्रियाकल्प
रखते भी हो, तो भी सम्यक्त्व न होनेसे वह कष्टक्रिया भी
अज्ञानरुप है, और सर्व प्राणभूत जीव-सत्त्वकी घातसे नहीं
निर्वृति पाइ है, अपने मान, पूजा रखनेके लीये मिश्रभाषा
बोलते है, तथा आगे कहेंगे-ऐसी विपरीत भाषा बोलते हैं.
हम उत्तम है, हमको मत मारो, अन्य अधर्मी है, उसको
मारो. इसी माफिक हमको दंडादिका प्रहार मत करो, परि-
ताप मत दो, दुःख मत दो, पकडो मत, उपद्रव मत करो,
यह सब अन्य जीवोंको करो, अर्थात् अपना सुख वांछना
और दूसरोंको दुःख देना, यह उन्होंका मूल सिद्धान्त है,
वह बाल, अज्ञानी, स्त्रीयों संबन्धी कामभोगमें गृद्ध मूर्च्छित
हुवे काल प्राप्त हो. आसुरीकाय तथा किल्विषीया देवोंमें
उत्पन्न हो, वहांसे मरके वारवार हलका बकरे (मींढे) गुंगे,
लूले, लंगडे, बोबडेपनेमें उत्पन्न होगा. हे आर्य! उक्त निदान
करनेवाला जीव धर्मपर श्रद्धाप्रतीत रुचि करनेवाला नहीं
होता है. ॥ इति ॥

(७) हे आर्य! मैं जो धर्म कहा है, वह सर्व दुःखोंका

अन्त करनेवाला है. उस धर्मकी अन्दर पराक्रम करते हुवे मनुष्य संबन्धी कामभोग अनित्य है, यावत् जो उर्ध्वलोकमें देवों है, जो पारकी देवीकों अपने वश कर नहीं भोगवते है तथा अपने शरीरसे बनाके देवोको भी नहीं भोगवते है. परन्तु जो अपनी देवी है, उसको अपने वशमें कर भोगवते है. अगर हमारे तप, संयम, ब्रह्मचर्यका फल हो, तो हम उक्त देवता हुवे. ऐसा निदान कर आलोचना न करे, यावत् प्रायश्चित्त न करते हुवे काल कर उक्त देवोंमें उत्पन्न होते है. वहां देवतावों संबन्धी चिरकाल सुख भोगवके वहांसे काल कर उत्तम कुल-जातिकी अन्दर मनुष्य हुवे. वह महर्द्धिक यावत् एकको बुलानेपर च्यार पांच आदि हाजर हुवे.

हे भगवन् ! उस मनुष्यकों कोइ श्रमण महान् केवली प्ररुपित धर्म सुना शके ? हा, सुना सके. क्या वह धर्मपर श्रद्धाप्रतीत रुचि करे ? हाँ, करे. वह दर्शन श्रावक हो सके. परन्तु निदानके पाप फलसे वह पांच अणुव्रत, सात शिक्षाव्रत यह श्रावकके बारहा व्रत तथा नोकारसी आदि प्रत्याख्यान करनेको समर्थ नहीं होते है. वह केवल सम्यक्त्वधारी श्रावक होते है. जीवादि पदार्थका जानकार होते है. हाडहाड किमीजी-धर्मकी अन्दर राग जागता है. ऐसा सम्यक्त्वरुप श्रावकपणा पालता हुवा बहुत कालतक आयुष्य पाल वहांसे मरके दे अन्दर जाते है.

हे आर्य ! इस निदानका यह फल हुवाकि वह समर्थ नहीं है कि श्रावकके पांच अणुव्रत, सात शिक्षाव्रत, और नो-कारसी आदि तथा पौषध, उपवासादि करनेको समर्थ न हो सके. । इति ।

(८) हे आर्य ! मैं जो धर्म कहा है, वह सर्व दुःखोंका अन्त करनेवाला है. इस धर्मकी अन्दर साधु, साध्वी पराक्रम करते हुवे ऐसा जानेकि–यह मनुष्य संबन्धी कामभोग अनित्य, अशाश्वत, यावत् पहिले या पीछे अवश्य छोडने योग्य है. तथा देवतावों संबन्धी कामभोगभी अनित्य, अशाश्वत है, वह चल चलायमान है. यावत् पहिले या पीछे अवश्य छोडनाही होगा. मनुष्य–देवोंके कामभोगसे विरक्त हुवा ऐसा जानेकि–मेरे तप. संयम, ब्रह्मचर्यका फल हो, तो भविष्यमें मैं उग्र कुल, भोगकुलकी अन्दर महामाता (उत्तम जाति) की अन्दर पुत्र-पणे उत्पन्न हो, जीवादि पदार्थका जानकार बन, यावत् साधु, साध्वीयोंको प्रासुक, निर्दोष, एषणिक, निर्जीव, अशन, पान, खादिम, स्वादिम आदि चौदा प्रकारका दान देता हुवा विचरुं. ऐसा निदान कर आलोचना न करे. यावत् प्रायश्चित्त न लेवे और काल कर वह महार्द्धि यावत् महा सुखवाला देवता हुवे, वहां चिरकाल देवताका सुख भोगवके, वहांसे म-रके उत्तम जाति–कुलकी अन्दर मनुष्य हुवे. वहां पर केवली प्ररुपित धर्म सुने, श्रद्धाप्रतीत रुचि करे, सम्यक्त्व सहित वा-

रहा व्रतोंको धारण कर सके; परन्तु निदानके पापोद
'मुंडे भविता' अर्थात् संयम-दीक्षा लेनेको असमर्थ है, वह
यक हो जीवादि पदार्थोंका ज्ञान हुवे, अशनादि चौदा प्र
रका प्रासुक, एषणीय आहार साधु साध्वीयोंको देता हुवा
हुतसे व्रत प्रत्याख्यान पौषध, उपवासादि कर अन्तमें आ
चना सहित अनशन कर समाधिमें काल कर उंच दे
उत्पन्न होता है.

हे आर्य ! उस पाप निदानका फल यह हुवाकि वह
विरति-दीक्षा लेनेको असमर्थ अर्थात् अयोग्य हुवा. । इति

(६) हे आर्य ! मैं जो धर्म कहा है, वह सर्व दुःखे
अन्त करनेवाला है. उस धर्मकी अन्दर साधु साध्वी परा
करते हुवे ऐसा जानेकि-यह मनुष्य संबन्धी तथा देवसंब
कामभोग अशुच, अनित्य, अशाश्वत है, पहिले या पीछे
चरयें छोडने योग्य है. अगर मेरे तप, संयम, ब्रह्मचर्यका
-हो, तो भविष्यमें मैं ऐसे कुलमें उत्पन्न हो. यथा—

(१) अन्तकुल—स्वल्प कुटंब, सोभी गरीब. (२) प्रा
कुल—बिलकुल गरीब कुल. (३) तुच्छकुल—स्वल्पकुटंब
कुलमें. (४) दरिद्रकुल—निर्धन कुटंबवाला. (५, कृपणकुल-
धन होनेपरभी कृपणता. (६) भिक्षुकुल—भिक्षाकर अ
विका करे. (७) ब्राह्मणकुल—ब्राह्मणोंका कुल मर्दव

ऐसे कुलमें पुत्रपणे उत्पन्न होनेसे भविष्यमें में दीक्षा लेउंगा, तो मेरा दीक्षाका कार्यमें कोइ भी विघ्न नहीं करेगा. वास्ते मेरेको ऐसा कुल मिले तो अच्छा. ऐसा निदान कर आलोचना न करे, यावत् प्रायश्चित्त न लेता हुवा काल कर उर्ध्वलोकमें महर्द्धिक यावत् महासुखवाला देवता हुवे. वहां चिरकाल देवसुख भोगवके वहांसे चवके उक्त कुलोमें उत्पन्न हुवे. उसको धर्मश्रवण करना मिले. श्रद्धाप्रतीत रुचि हुवे. यावत् सर्वविरति–दीक्षाको ग्रहन करे. परन्तु पापनिदानका फलोदयसे उसी भवमें केवलज्ञानको प्राप्त नहीं कर सके.

वह दीक्षा ग्रहन कर इर्यासमिति यावत् गुप्त ब्रह्मचर्य पालन करते हुवे बहुत वर्ष चारित्र पालके अन्तमें आलोचनापूर्वक अनशन कर काल प्राप्त हो उर्ध्वगतिमें देवतापणे उत्पन्न हुवे. वह महर्द्धिक यावत् महासुखवाला हुवे.

हे आर्य ! इस पापनिदानका फल यह हुवा कि दीक्षा तो ग्रहन कर सके, परन्तु उसी भवकी अन्दर केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जानेमें असमर्थ हैं. ॥ इति ॥

(१०) हे आर्य ! मैं जो धर्म कहा है, वह धर्म, शारीरिक और मानसिक ऐसे सर्व दुःखोंका अन्त करनेवाला है. उस धर्मकी अन्दर साधु–साध्वीयों पराक्रम करते हुवे सर्व प्रकारके कामभोगसे विरक्त, एवं राग द्वेषसे विरक्त, एवं

स्त्री आदिके संगसे विरक्त, एवं शरीर, स्नेह, ममत्व-भावसे विरक्त सर्व चारित्रकी क्रियावोंके परिवारसे प्रवृत्त, उस श्रमण भगवन्तको अनुत्तर ज्ञान, अनुत्तर दर्शन, यावत् अनुत्तर निर्वाणका मार्गको संशोधन करता हुवा अपना आत्माको सम्यक्प्रकारसे भावते हुवेकों जिन्होंका अन्त नहीं है ऐसा अनुत्तर प्रधान, जिसको कोइ बाध न कर सके, जिसमें कोइ प्रकारका आवरण नहीं आ सके, वह भी संपूर्ण, प्रतिपूर्ण, ऐसा महत्ववाला केवलज्ञान, केवलदर्शन उत्पन्न होते है.

वह श्रमण भगवन्त अरिहंत होते है. वह जिन केवली, सर्वज्ञानी, सर्वदर्शनी, देवता मनुष्य, असुरादिकसे पूजित, यावत् बहुत कालतक केवलीपर्याय पालके अपना अवशेष आयुष्य जान, भक्त पानीका प्रत्याख्यान अर्थात् अनशन कर फिर चरम श्वासोश्वासकों वोसिराते हुवे सर्व शारीरिक और मानसिक दुःखोंका अन्त कर मोक्ष महेलमे विराजमान हो जाते है.

हे आर्य ! ऐसा अनिदान अर्थात् निदान नहीं करनेका फल यह हुवाकि उँसी भवमें सर्व कर्मोका मूलोंको उच्छेदन कर मोक्षसुखोंको प्राप्त कर लेते हैं. ऐसा उपदेश भगवान् वीरप्रभु अपने शिष्य साधु–साध्वीयोंको आमंत्रण करके दीया था, अर्थात् अपने शिष्योंकी डूबती नौकाको अपने करकमलोंसे पार करी है.

तत्पश्चात् यह सर्व साधु-साध्वीयों भगवानकी मधुर देशना-हितकारी देशना श्रवण कर पहा ही हर्षको-आनन्दको प्राप्त हो, अपने जो राजा श्रेणिक और राणी चेलनाका स्वरूप देख निदान किया गया था, उसकी आलोचना कर, प्रायश्चित ग्रहन कर, अपना आत्माको विशुद्ध बनाके भगवानको वन्दन-नमस्कार कर अपना आत्माकी अन्दर रमणता करते हुवे विचरने लगे.

यह व्याख्यान भगवान् महावीरप्रभु राजगृह नगरके गुणशीलोद्यानमें बहुतसे साधु, बहुतसी साध्वीयों, बहुत श्रावक, बहुतसी श्राविकायों, बहुतसे देवों, बहुतसी देवीयों, सदेव मनुष्य असुरादिकी परिषदके मध्य बिराजमान हो आख्यान, भाषण, प्ररुपण, विशेष प्ररुपण (आत्माको कर्मबन्ध निदानरूप अध्ययन) अर्थ सहित, हेतु सहित, कारण सहित, सूत्र सहित, सूत्रके अर्थ सहित, व्याख्या सहित यावत् एसा उपदेश वारवार किया है.

। इति निदान नामका दशवा अध्ययन ।

—✲—
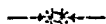
नोट—निदान दो प्रकारके होते है (१) तीव्र रसवाला (२) मन्द रसवाला, जो तीव्र रसवाला निदान कीया हो, तो छे निदानवालोंको केवली प्ररुपित धर्मकी प्राप्ति नहीं होती है,

अगर मन्द रसवाला निदान हो तो छे निदानमें सम्यक्त्वादि धर्मकी प्राप्ति होती है. जैसे कृष्ण वासुदेव तथा द्रौपदी महा सतीको सनिदानभी धर्मकी प्राप्ति हुइथी.

इति श्री दशाश्रुतस्कंध-दशवा अध्ययन.

—*०*—

। इति श्री दशाश्रुत स्कंध सूत्रका संक्षिप्त सार ।

—*◎◎*—

शीघ्रबोध भाग १९ वां समाप्त ।

श्री रत्नप्रभाकर ज्ञान—पुष्पमाला—पुष्प नं. ६९.
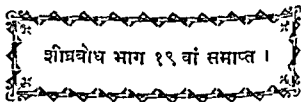
अथश्री

शीघ्रबोध भाग २१ वां.

अथ श्री व्यवहारसूत्रका संक्षिप्त सार.

(उद्देशा दश.)

श्रीमद् आचारांगादि सूत्रोंमें मुनियोंके आचारका प्रतिपादन कीया है. उस आचारसे पतित होनेवालोंके लीये लघु निशीथ सूत्रमें आलोचना कर, प्रायश्चित्त ले शुद्ध होना बतलाया है।

आलोचना सुननेवाले तथा आलोचना करनेवाले मुनि कैसा होना चाहिये तथा आलोचना किस भावोंसे करते है. उसको कितना प्रायश्चित्त दीया जाता है. यह इस प्रथम उद्देशा द्वारे बतलाया जावेगा.

(१) प्रथम उद्देशा—

(१) किसी मुनिने एक[1] मासिक प्रायश्चित्त योग्य, दुष्कृतका स्थान सेवन कीया. उसकी आलोचना गीतार्थ आचार्य के पास निष्कपट भावसे करी हो, उस मुनिको एक मासिक प्रायश्चित्त*

१—मासिक प्रायश्चित्त स्थान देखो—लघु निशीथसूत्र.

* मासिक प्रायश्चित्त—जैसे एक मासिक, द्विमासिक, [illegible] इसके भी लघुमासिक, गुरुमासिक—दो दो भेद है. खुलासा देखो लघुनिशीथ सूत्र.

(८) बहुतसे तीन मासिक.

(९) बहुतसे च्यार मासिक.

(१०) बहुतसे पांच मासिक प्रायश्चित सेवन कर आलोचना जो माया रहित करने वालोंको मूल सेवन कीया उतना ही प्रायश्चित दीया जाता है. अगर माया संयुक्त आलोचना करे. उस मुनिको मूल प्रायश्चित्तसे एक मास अधिक प्रायश्चित यावत् छे मासका प्रायश्चित होता है. इसके उपरान्त चाहे माया रहित चाहे माया संयुक्त आलोचना करे. परन्तु छे माससे ज्यादा तपका प्रायश्चित नहीं दीया जाता. उस मुनिको तो फिरसे दीक्षाका ही प्रायश्चित होता है. भावना पूर्ववत्.

(११) मुनि जो मासिक, दोमासिक, तीन मासिक च्यार मासिक, पांच मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर माया रहित निष्कपट भावसे आलोचना करनेपर उस मुनिको मासिक, दो मासिक, तीन मासिक, चार मासिक, पांच मासिक प्रायश्चित होता है. अगर माया संयुक्त आलोचना करे तो मूल प्रायश्चित्तसे एक मास अधिक प्रायश्चित होता है. इसके आगे प्रायश्चित नहीं है भावना पूर्ववत.

(१२) मुनि जो बहुतसे मासिक, बहुतसे दो मासिक, बहुतसे तीन मासिक, च्यार मासिक, पांच मासिक प्रायश्चित स्थान के सेवन कर माया रहित आलोचना करे, उस मुनिको मासिक यावत् पांच मासिक प्रायश्चित होता है. अगर मायासंयुक्त आलोचना करे उसे मूल प्रायश्चितसे एक मास अधिक यावत् छे मासका प्रायश्चित होता है. भावना पूर्ववत.

(१३) जो मुनि चातुर्मासिक, साधिक चातुर्मासिक पंचमासिक, साधिकपंचमासिक प्रायश्चित स्थानको सेवन कर माया रहित आलोचना करे, उसे मूल प्रायश्चित ही दीया जाता है

अगर मायासंयुक्त आलोचना करे, तो मूल प्रायश्चित्तसे एक मास अधिक प्रायश्चित्त दीया जाता है.

(१४) एवं बहुत वचनापेक्षासे भी सूत्र समझना. परन्तु छे मास उपरान्त प्रायश्चित्त नहीं है. भावना पूर्ववत्. चातुर्मासिक प्रायश्चित्त प्रथम एकवचन या बहुवचन आ गया था: परन्तु यहां साधिक चातुर्मासिक सम्बन्धपर सूत्र अलग कहा है.

(१५) किसी मुनिको प्रायश्चित्त दीया है. वह मुनि प्रायश्चित्त तप करते हुवे और भी प्रायश्चित्तका स्थान सेवन करे, उसको प्रायश्चित्त देनेकी अपेक्षा यह सूत्र कहा जाता है.

जो मुनि चातुर्मासिक, साधिक चातुर्मासिक, पंचमासिक, साधिक पंचमासिकसे कोइ भी प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर मायासंयुक्त आलोचना करे. अगर वह दोष संघमें प्रगट सेवन कीया हो, तो उसको संघ सन्मुख ही प्रायश्चित्त देना चाहिये कि संघको प्रतीत रहे. और दूसरे साधुवोंको इस बातका क्षोभ रहै. तथा जिस प्रायश्चित्तको गुप्तपनेसे सेवन किया हो, संघ उसे न जानता हो, उसे गुप्त आलोचना देनी, जिसे शासनका उड्डाह न हो. यह गीतार्थोंकी गंभीरता है. इन्हींसे साधु दूसरी दफे दोष न लगावेगा. तपश्चर्या करते हुवे साधुका आचार व्यवहार सामाचारी शुद्ध हो, उसे गुरु आज्ञासे वाचना आदिकी साग्रता करना. कारण—वाचना देना महान् लाभका कारन है. और तप करनेवाले मुनिका चित्त भी हमेशां स्थिर रहै. अगर जो मुनिकी सामाचारी ठीक न हो उसको द्रव्यादि जाणी गुरु आज्ञा दे तो वाचना देना, नहीं तो न देना. परिहार तपकी पूरतीमें उस साधुकी वैयावच करनेमें अन्य साधुको स्थापन करना, अगर प्रायश्चित्त तप करते और भी प्रायश्चित्त सेवन करे तो यथा तप उस चालु

आलोचना करते समय मायारहित शुद्ध निर्मल भावोंसे आलोचना करे. भावार्थ—पहला विचार था कि ज्यादा प्रायश्चित्त आनेसे मेरी मानपूजाकी हानि होगी. फिर आलोचना करते समय आचार्यमहाराज जो स्थानांग सूत्रमें आलोचना करनेवालोंके गुण और शुद्ध भावोंसे आलोचना करनेवाला इस लोक और परलोकमें पूजनीय होता है. लोक तारीफ करते हैं. यावत् मोक्षसुखकी प्राप्ति होती है. ऐसा सुन अपने परिणामको बदलाके शुद्ध भावोंसे आलोचना करे.

(४) पहले विचार था कि मायासंयुक्त आलोचना करूंगा, और आलोचना करते समय भी मायासंयुक्त आलोचना करे. बाल, अज्ञानी, भवाभिनन्दी जीवोंका यह लक्षण है.

आलोचना करनेवालोंका भावोंको आचार्यमहाराज ज्ञानके जैसा जिसको प्रायश्चित्त होता हो वैसा उसे प्रायश्चित्त देवे. सबके लीये एकसा ही प्रायश्चित्त नहीं है. एक ही दोषके भिन्न भिन्न परिणामवालोंको भिन्न भिन्न प्रायश्चित्त दीया जाता है.

(१६) इसी माफिक बहुतवार चातुर्मासिक, साधिक चातुर्मासिक, पंच मासिक, साधिक पंच मासिक, प्रायश्चित्त सेवन कीया हो. उसकी दो चोभंगीयों १५ वां सूत्रमें लिखी गइ है. यावत् जिस प्रायश्चित्त के योग्य हो, ऐसा प्रायश्चित देना. भावना पूर्ववत्.

(१७) जो मुनि चातुर्मासिक, साधिक चातुर्मासिक, पंच मासिक, साधिक पंच मासिक प्रायश्चित्त स्थानको सेवन कर आलोचना (पूर्ववत् चतुर्भंगीसे) करे, उस मुनिको तपकी अन्दर तथा यथायोग्य वैयावचमें स्थापन करे. उस तप करते हुवेमें और प्रायश्चित्त सेवन करे, तो उस चालु तपमें प्रायश्चित्तकी वृद्धि

आज्ञाका भंग कर दोनों पक्षवाले मुनि एकत्र निवास करे, तो जितने दिन वह एकत्र रहे. उतने दिनोंका तप प्रायश्चित्त तथा छेद प्रायश्चित्त आवे. भावार्थ—प्रायश्चित्तीये. अप्रायश्चित्तीये मुनि एकत्र रहनेसे लोकमें अप्रतीतिका कारन होता है. एसा ही तो फीर प्रायश्चित्तीये मुनियोंको शुद्धाचारकी आवश्यकताही क्यों और दोषोंका प्रायश्चित्तही क्यों ले ? इत्यादि कारणोंसे एकत्र रहना नहीं कल्पे. अगर द्रव्य, क्षेत्र, काल. भाव देखके आचार्य महाराज आज्ञा दे. उस हालतमें कल्पे भी सही. यह ही स्याद्वाद रहस्यका मार्ग है.

(२०) आचार्य महाराजको किसी अन्य ग्लान साधुकी वैयावच्चके लीये किसी साधुकी आवश्यकता होनेपर परिहार तप करनेवाले साधुको अन्य ग्राम मुनियोंकी वैयावच्चके लीये जानेका आदेश दीया. उस समय आचार्य महाराज उस मुनिको कहे कि—हे आर्य ! रहस्तेमें चलना और परिहार तप करना यह दो वातों होना कठिन है. वास्ते रहस्तेमें इस तपको छोड देना. इसपर उस साधुको अशक्ति हो तो तप छोड कर जिस दिशामें अपने स्वधर्मी साधु विचरते हो उसी दिशाकी तरफ विहार करना. रहस्तेमें एक रात्रि, दो रात्रिसे ज्यादा रहना नहीं कल्पे. अगर शरीरमें व्याधि हो तो जहांतक व्याधि रहे. वहांतक रहना कल्पे. रोगमुक्त होनेपर पहलेके साधु कहे कि—हे आर्य ! एक दो रात्रि और ठहरो, इससे पूर्ण खातरी हो जाय. उस हालतमें एक दोय रात्रि ठहरना कल्पे. अगर एक दो रात्रिसे अधिक (सुखशीलीयापनासे) ठहरे, तो जितने रोज रहे उतने रोजका तप तथा छेद प्रायश्चित्त होता है. भावार्थ—ग्लान मुनियोंकी वैयावच्चके लीये भेजा हुवा साधु रहस्तेमें विहार या उपकार निमित्त ठहर नहीं सके. तथा रोगमुक्त होनेपर भी ज्यादा ठहर नहीं सके. अगर ठहर जावे तो

(३४) अगर अपने आचार्योपाध्याय उस समय हाजर न हों तो अपने संभोगी (एक मंडलमें भोजन करनेवाले) साधु जो बहुश्रुत—बहुत आगमोंके जानकार, उन्होंके समीप आलोचना कर यावत् प्रायश्चित्तको स्वीकार करे.

(३५) अगर अपने संभोगी साधु न मिले तो अन्य संभोगवाले गीतार्थ—बहुत आगमोंके जानकार मुनि हो, उन्होंके पास आलोचना कर यावत् प्रायश्चित्तको स्वीकार करे.

(३६) अगर अन्य संभोगवाले उक्त मुनि न मिले, तो रूप साधु अर्थात् आचारादि क्रियामें शिथिल है, केवल रजोहरण, मुखवस्त्रिका साधुका रूप उन्होंके पास है, परन्तु बहुश्रुत-बहुत आगमोंका जानकार है, उन्होंके पास आलोचना यावत् प्रायश्चित्तको स्वीकार करे.

(३७) अगर रूपसाधु बहुश्रुत न मिले तो पीछे कृत श्रावक ' जो पहला दीक्षा लेके बहुश्रुत-बहुत आगमोंका जानकार हो फिर मोहनीय कर्म के उदयसे श्रावक हो गया हो. ' उसके पास आलोचना कर यावत् प्रायश्चित्त स्वीकार करे.

(३८) अगर उक्त श्रावक भी न मिले तो-' समभावियाइं चेइयाइं ' अर्थात् सुविहित आचार्योंकी करि हुइ प्रतिष्ठा ऐसी जिनेन्द्र देवोंकी प्रतिमाके आगे शुद्ध भावसे आलोचनाकर यावत् प्रायश्चित्त स्वीकार करे.*

* ' समभावियाइं चेइयाइं ' का अर्थ—ढुंढिये लोग श्रावक तथा सम्यग्दृष्टि करते है यह असत्य है. क्योंकि आलोचनामें गीतार्थोंकी आवश्यकता है. जिससे ही देव गुरुओं का तो अवश्य जानकार होना चाहिये और जानकार श्रावकका पाठ तो पहले आ गया है. इस वास्ते पूर्व महर्षियोंने किया वह ही सही प्रमाण है.

उस प्रायश्चितके तपकी अन्दर स्थापन करना चाहिये, और दुसरा मुनि उसको सहायता अर्थात् वैयावच्च करे.

(२) अगर दोनों मुनियोंको साथमें ही प्रायश्चित लगा हो, तो उस मुनियोंसे एक मुनि पहले तप करे. दुसरा मुनि उसको सहायता करे, जब उस मुनिका तप पूर्ण हो जाय, तब दुसरा मुनि तपश्चर्या करे और पहला मुनि उसको सहायता करे.

(३) एवं बहुतसे मुनि एकत्र हो विहार करे जिसमें एक मुनिको दोष लगा हो, तो उसे आलोचना दे तप कराना. दुसरा मुनि उसको सहायता करें.

(४) एवं बहुतसे मुनियोंको एक साथमें दोष लगा हो- जैसे शय्यातरका आहार भूलमें आ गया. सर्व साधुवोंने भोगव भी लीया. बादमें खबर हुइ कि इस आहारमें शय्यातरका आहार सामेल था, तो सर्व साधुवोंको प्रायश्चित्त होता है. उसमें एक साधुको वैयावचके लीये रखे और शेष सर्व साधु उस प्रायश्चितका तप करे. उन्होंका तप पूर्ण होनेपर एक साधु रहा था. वह तप करे और दुसरे साधु उसकी सहायता करे. अगर अधिक साधुवोंकी आवश्यका हो तो अधिकको भी रख सकते है.

भावार्थ - प्रायश्चित सहित आयुष्य बंध करके काल करनेसे जीव विराधक होता है. वास्ते लगे हुवे पापकी आलोचना कर उसका तप ही शीघ्र कर लेना चाहिये. जिससे जीव आराधक हो पारंगत हो जाता है.

(५) प्रतिहार कल्प साधु—जो पहला प्रायश्चित्त सेवन कीया था, वह साधु तपश्चर्या करता हुवा अकृत्य स्थानको और सेवन कीया, उसकी आलोचना करनेपर आचार्य महाराज उसकी

करना गणविच्छेकको नहीं कल्पै. किन्तु उस मुनिकी अम्लानपणे वैयावच करना कल्पै. जहांतक यह मुनिका शरीर रोग रहित न हो, वहांतक. यावत् पूर्ववत्.

(१०) 'दित्तचित्त' कन्दर्पादि कारणोंसे दित्तचित्त होता है.

(११) 'जक्खाइट्ठं' यक्ष भूतादिके कारणसे ,, ,,

(१२) 'उमायपत्तं' उन्मादको प्राप्त हुवा.

(१३) 'उवसग्गं' उपसर्गको प्राप्त हुवा.

(१४) 'साधिकरण' किसीके साथ क्रोधादि होनेसे.

(१५) 'सप्रायश्चित्त' किसी कारणसे अधिक प्रायश्चित आने पर.

(१६) भात पाणीका परित्याग (संथारा) करने पर.

(१७) 'अर्थजात' किसी प्रकारकी तीव्र अभिलाष हो, तथा अर्थ याने द्रव्यादि देखनेसे अभिलाषा वशात्.

उपर लिखे कारणोंसे साधु अपना स्वरुप भूल वेभान हो जाता है, ग्लान हो जाता है, उस समय गणविच्छेदकको, उस मुनिको गण बाहार कर देना या तिरस्कार करना नहीं कल्पै. किन्तु उस मुनिकी वैयावच करना कराना कल्पै. कारण— ऐसी हालतमें उस मुनिको गच्छ बाहार निकाल दीया जाय तो शासनकी लघुता होती है. मुनियोंमें निर्दयता और अन्य लोगोंका शासन-गच्छमें दीक्षा लेनेका अभाव ही होता है. तथा संयमी जीवोंको सहायता देना महान् लाभका कारण है. वास्ते गणविच्छेदकको चाहिये कि उस का शरीर जहांतक रोग मुक्त न हो वहांतक वैयावच करे. उस मुनिका शरीर रोगमुक्त हो जाय तब वैयावच

चना विना आराधक नहीं होता है. जैसे गच्छको और संघको प्रतीतिका कारन हो, जैसा करना चाहिये.

(२३) दो साधु सदृश समाचारीवाले साथमें विचरते है. किसी कारणसे एक साधु दुसरे साधुपर अभ्याख्यान (कलंक) देनेके इरादेसे आचार्यादिके पास जावे अर्ज करे कि-हे भगवन्, मैंने अमुक साधुके साथ अमुक अकृत्य काम कीया है. इसपर जिस साधुका नाम लीया, उस साधुको आचार्य बुलवाके हित-बुद्धि और मधुरतासे पुछे—अगर वह साधु स्वीकार करे, तो उसको प्रायश्चित्त देवे, अगर वह साधु कहे कि-मैंने यह अकृत्य कार्य नहीं कीया है. तो कलंकदाता मुनिको उसका प्रमाण पुरःसर पुछे, अगर वह साबुती पुरी न दे सके, तो जितना प्रायश्चित उस मुनिको आना था, उतना ही प्रायश्चित्त उस कलंकदाता मुनिको देना चाहिये. अगर आचार्य उस बातका पूर्ण निर्णय न कर, राग द्वेषके वश हो अप्रतिसेवीको प्रतिसेवी बनाके प्रायश्चित देवे तो उतना ही प्रायश्चित्तका भागी प्रायश्चित देनेवाला आचार्य होता है.

भावार्थ—संयम है सो आत्माकी साक्षीसे पलता है. और सत्य प्रतिज्ञा जैसा व्यवहार है. अगर विगर साबुती किसीपर आक्षेप कायम कर दिया जायगा, तो फिर हरेक मुनि हरेकपर आक्षेप करते रहेगा, तो गच्छ और शासनकी मर्यादा रहना अ-संभव होगा. वास्ते बात करनेवाले मुनिको प्रथम पूर्ण साबुती या जांच कर लेना चाहिये.

(२४) किसी मुनिको मोहकर्मका प्रबल उदय होनेसे काम-पीडित हो, गच्छको छोडके संसारमें जाना प्रारंभ कीया, जाते हुवेका परिणाम हुवा कि—अहो ! मैंने अकृत्य कीया, पाया हुवा चारित्र चिंतामणिको छोड काचका टुकडा ग्रहन करनेकी अभि-लाषा करता हुं. ऐसे विचारसे वह साधु फिरसे उसी गच्छमें

आनेकी इच्छा करे, अगर उस समय अन्य साधु शंका करे कि-इसने दोष सेवन कीया होगा या नहीं ? उन्होंकी प्रतीतिके लीये आचार्यमहाराज उसकी जांच करे. प्रथम उस साधुको पुछे अगर वह साधु कहे कि—मैंने अमुक दोष सेवन कीया है. तो उसको यथायोग्य प्रायश्चित देना. अगर साधु कहे कि—मैंने कुच्छ भी दोष सेवन नहीं कीया है, तो उसकी सत्यतापर ही आधार रखे. कारण प्रायश्चित आदि व्यवहारसे ही दीया जाता है.

भावार्थ—अगर आचार्यादिको अधिक शंका हो तो जहां पर वह साधु गया हो, वहांपर तलास करा लि जावे. भगवती सूत्र ८-६ मनकी आलोचना मनसे भी शुद्ध हो सकती है.

(२५) एक पक्षवाले साधुको स्वल्पकालके लीये आचार्योपाध्यायकी पद्वी देना कल्पै. परन्तु गच्छवासी निग्रंथोंको उसकी प्रतीति होनी चाहिये.

भावार्थ—जिन्होंको रागद्वेषका पक्ष नहीं है अथवा एक गच्छमें गुरुकुलवासको चिरकाल सेवन कीया हो. प्राय: गुरुकुलवास सेवन करनेवालेमें अनेक गुण होते है. नये पुराणे आचार व्यवहार, साधु आदिके जानकार होते है, गच्छमर्यादा चलानेमें कुशल होते है, उन्होंको आचार्यकी मौजुदगीमें पद्वी दी जाती है. अगर आचार्य कभी कालधर्म पाया हो, तो भी उन्होंके पीछे पद्वीका झघडा न हो, साधु सनाथ रहै. स्वल्पकालकी पद्वी देनेका कारण यह है कि—अगर दुसरा कोइ योग्य हो तो वह पद्वी उन्होंको भी दे सकते है. अगर दुसरा पद्वीके योग्य न हो तो. चिरकालके लीये ही उसी पद्वीको रख सकते है

(२६) जो कोइ मुनि परिहार तप कर रहे है, और कितनेक अपरिहारिक साधु एकत्र निवास करते है. उन्होंको एक

मंडलपर संविभागके साथ भोजन करना नहीं कल्पै. कदांतक ! कि जो एक मासिक, दो मासिक, तीन मासिक, च्यार मासिक, पांच मासिक, छे मासिक, जितना तप कीया हो, उतने मास और प्रत्येक मासके पीछे पांच पांच दिन. एवं छे मासके तपवा्लेके साथ तपके सिवाय एक मास साथमें भोजन नहीं करे. कारण-तपस्वीके पारनेवालोंको शाताकारी आहार देना चाहिये. वास्ते एकत्र भोजन नहीं करे. बादमें सर्व साधु संविभाग संयुक्त सामेल आहार करे.

(२७) परिहार तप करनेवाले मुनिके पारनादिमें अशनादि च्यार आहार वह स्वयं ही ले आते हैं. दुसरे साधुको देना दिलाना नहीं कल्पै. अगर आचार्यमहाराज विशेष कारण जानके आज्ञा दे तो अशनादि आहार देना दिलाना कल्पै. इसी माफिक घृतादि विगइ भी समझना.

२८ किसी स्थविर महाराजकी वैयावच्चमें कोइ परिहारिक तप करनेवाला साधु रहेता है, तो उस परिहारिक तपस्वीके पात्रमें लाया हुवा आहार स्थविरोंके काममें नहीं आवे. अगर स्थविर महाराज किसी विशेष कारणसे आज्ञा दे दे कि-हे आर्य! तुम तुमारे गौचरी जाते हो तो हमारे भी इतना आहार ले आना. तो भी उस परिहारिक साधुके पात्रमें भोजन न करे. आहार लानेके बादमें आचार्य अपने पात्रमें तथा अपने कमंडलमें पाणी लेके काममें लेवे (भोगवे).

(२९) इसी माफिक परिहारिक साधु स्थविरोंके लीये गौचरी जा रहा है. उस समय विशेष कारण जान स्थविर कहे कि—हे आर्य ! तुम हमारे लीये भी अशनादि लेते आना. आहारादि लानेके बाद अपने अपने पात्रमें आहार, कमंडलमें पानी ले लेवे. फिर पूर्वकी माफिक आहारादि भोगवे.

भावार्थ—प्रायश्चित लेके तप कर रहा है. इसी वास्ते वह साधु शुद्ध है. वास्ते उसने लाया हुवा अशनादि स्थविर भोगव सके. परन्तु अवी तक तपको पूर्ण नहीं कीया है. वास्ते उस साधुके पात्रादिमें भोजन न करें. उससे उस साधुको क्षोभ रहेता है. तपको पूर्णतासे पार पहुंचा सकते हैं. इति.

श्री व्यवहार सूत्र–दूसरा उद्देशाका संक्षिप्त सार.

—•◎•—

(३) तीसरा उद्देशा.

(१) साधु इच्छा करे कि मैं गणको धारण करूं. अर्थात् शिष्यादि परिवारको ले आगेवान हो के विचरूं. परन्तु आचारांग और निशीथसूत्रके जानकार नहीं है. उन साधुको नहीं कल्पै गणको धारण करना.

(२) अगर आचारांग और निशीथसूत्रका ज्ञाता हो उस साधुको गण धारण करना कल्पै.

भावार्थ—आगेवान हो विचरनेवाले साधुवोंको आचारांगसूत्रका ज्ञाता अवश्य होना चाहिये कारण-साधुवोंका आचार-गोचार, विनय, वैयावच्च, भाषा आदि मुनि मार्गका आचारांग सूत्रमें प्रतिपादन कीया हुवा है. अगर उस आचारसे स्खलना हो जावे, अर्थात दोष लग भी जावे तो उसका प्रायश्चित निशीथ सूत्रमें है. वास्ते उक्त दोनों सूत्रोंका ज्ञानकार हो. उस मुनिको ही आगेवान होके विहार करना कल्पै.

(३) आगेवान हो विहार करनेकी इच्छावाले मुनियोंको पेस्तर स्थविर (आचार्य) महाराजसे पूछना इसपर आचार्य महाराज योग्य जानके आज्ञा दे तो कल्पै.

(४) अगर आज्ञा नहीं देवे तो उस मुनिको आगेवन होके विचरना नही कल्पै. जो विना आज्ञा गणधारण करे, आगेवान हो विचरे, उस मुनिको, जितने दिन आज्ञा बाहार रहै, उतने दिनका छेद तथा तप प्रायश्चित होता है और जो उन्होंके साथ रहनेवाले साधु है, उसको प्रायश्चित्त नही है. कारण वह उस अग्रेश्वर साधु के कहनेसे रहे थे।

(५) तीन वर्षकी दीक्षा पर्यायवाले साधु आचारमें, संयममें, प्रवचनमें, प्रज्ञामें, संग्रह करनेमें, अवग्रह लेनेमें कुशल—होंशीयार हो, जिसका चारित्र खंडित न हुवा हो. संयममें सवला दोष नहीं लगा हो, आचार भेदित न हुवा हो, कषाय कर चारित्र संक्लिष्ट नहीं हुवा हो, बहु श्रुत, बहुत आगम तथा विद्याओंके जानकार हो, कमसे कम आचारांग सूत्र, निशीथ सूत्र के अथ--पर मार्थका जानकार हो, उस मुनिको उपाध्याय पद देना कल्पै.

(६) इससे विपरीत जो आचारमें अकुशल यावत् अल्प सूत्र अर्थात् आचारांग, निशीथका अज्ञातको उपाध्यायपद देना नहीं कल्पै.

(७) पांच वर्षोंकी दीक्षा पर्यायवाला साधु आचारमें कुशल यावत् बहुश्रुत हो, कमसे कम दशाश्रुतस्कन्ध, व्यवहार, बृहत्कल्प सूत्रोंके जानकार हो, उस मुनिको आचार्य, उपाध्यायकी पद्वी देना कल्पै

(८) इससे विपरीत हो, उसे आचार्य उपाध्यायकी पद्वी देना नहीं कल्पै.

(९) आठ वर्षोंकी दीक्षा पर्यायवाले मुनि आचार कुशल यावत् बहुश्रुत--बहुत आगमों विद्याओंके जानकार कमसे कम स्थानांग, समवायांग सूत्रोंका जानकार हो, उस महात्माओंको

आचारांग निशीथ सूत्रका अभ्यास न करे, तो पद्मी देना नहीं कल्पै. कारण-साधुवर्गका खास आधार आचारांग और निशीथसूत्र परही है.

(१३) जिस गच्छमें नवयुवक तरुण साधुवोंका समूह है, उस गच्छके आचार्योपाध्याय कालधर्म प्राप्त हो जावे तो उस मुनियोंको आचार्योपाध्याय विना रहेना नहीं कल्पै. उस मुनियोंको चाहिये कि शीघ्रतासे प्रथम आचार्य, फिर उपाध्यायपद पर स्थापन कर, उन्हीकी आज्ञामें प्रवृत्ति करना चाहिये. कारण-आचार्योपाध्याय विना साधुवोंका निर्वाह होना असंभव है.

(१४) जिस गच्छमें नव युवक तरुन साध्वीयां है. उन्होंके आचार्य, उपाध्याय और प्रवर्तिनी कालधर्म प्राप्त हो गये हो, तो उन्होंको पहले आचार्यपद, पीछे उपाध्यायपद और पीछे प्रवर्तिनीपद स्थापन करना चाहिये. भावना पूर्ववत्

(१५) साधु गच्छमें (साधुवेषमें) रह कर मैथुनको सेवन कीया हो, उस साधुको जावजीवतक आचार्य, उपाध्याय, स्थविर, प्रवर्तक, गणी, गणधर, गणविच्छेदक, इस पद्मीयोंमेंसे किसी प्रकारकी पद्मी देना नहीं कल्पै, और उस साधुको लेना भी नहीं कल्पै जिसको शासनका, गच्छका और वेषकी मर्यादाका भी भय नहीं है, तो वह पद्मीधर हो के शासनका और गच्छका क्या निर्वाह कर सके !

(१६) कोइ साधु प्रबल मोहनीयकर्मसे पीडित होनेपर गच्छ संप्रदायको छोडके मैथुन सेवन कीया हो, फीर मोहनीयकर्म उपशांत होनेसे उसी गच्छमें फिरसे दीक्षा लेवें, अर्थात् दीक्षा देनेवाला उसे दीक्षायोग्य जाने तो दे: उस साधुको तीन वर्षतक पूर्वोक्त सात पद्मीसे किसी प्रकारकी पद्मी देना नहीं कल्पै,

आत्मभावना वृत्तिसे पुनः उसी गच्छमें दीक्षा ले. बादमें. तीन वर्ष हो जावे, शान विकारसे पूर्ण निवृत्त हो जाय, उपशान्त हो, इंद्रियों शांत हो. उसको योग्य जाने तो सात पद्वीमेंसे किसी प्रकारकी पद्वी देना कल्पै. भावना पूर्ववत्.

(२०) एवं गणविछेदक.

(२१) एव आचार्योपाध्यायभी समझना.

(२२) साधु बहुश्रुत (पूर्वांगके ज्ञान) बहुत आगम, विद्याके जानकार, अगर कोइ जबर कारण होनेपर मायासंयुक्त मृषावाद—उत्सूत्र बोलके अपनी उपजीविका करनेवाला हो, उसे जावजीव तक सात पद्वीमेंसे किसी प्रकारकी पद्वी देना नहीं कल्पै.

भावार्थ—असत्य बोलनेवालोंकी किसी प्रकारसे प्रतीति नहीं रहती है. उत्सूत्र बोलनेवाला शासनका घाती कहा जाता है. सर्पोका पत्ता मिलता है. परन्तु असत्यवादीयोंका पत्ता नहीं मिलता है. वास्ते असत्य बोलनेवाला पद्वीके अयोग्य है.

(२३ एवं गणविच्छेदक.

(२४) एवं आचार्य.

(२५) एवं उपाध्याय.

(२६) बहुतसे साधु एकत्र हो सबके सब उत्सूत्रादि असत्य बोले.

(२७) एवं बहुतसे गण विच्छेदक.

(२८) एवं बहुतसे आचार्य.

(२९) एवं बहुतसे उपाध्याय.

(३०) एवं बहुतसे साधु, बहुतसे गणविच्छेदक, बहुतसे आचार्य, बहुतसे उपाध्याय एकत्र हुवे, माया संयुक्त मृषावाद

दुसरे साधुवोंके कारण हो तो आचार्य इच्छा हो तो वैयावच्च करें करावें; परन्तु गणविच्छेदकको तो अवश्य वैयावच्च करना ही पडता है. वास्ते एक साधु अधिक रखना ही चाहिये.

(९) ग्राम-नगर यावत् राजधानी बहुतसे आचार्योपाध्याय, आप सहित दो ठाणे, बहुतसे गणविच्छेदक आप सहित तीन ठाणे शीतोष्णकालमें विहार करना कल्पै.

(१०) और आप सहित तीन ठाणे आचार्योपाध्याय, आप सहित च्यार ठाणे गणविच्छेदकको चातुर्मास रहना कल्पै. परन्तु साधु अपनी अपनी निश्रा कर रहना चाहिये. कारण—कभी अलग अलग जानेका काम पडे तो भी नियत कीये हुवे साधुवोंको साथ ले विहार कर सके. भावना पूर्ववत्.

(११) आचारांग और निशीथसूत्रके जानकार साधुको आगेवान करके उन्होंके साथ अन्य साधु विहार कर रहे थे. कदाचित् वह आगेवान साधु कालधर्मको प्राप्त हो गया हो, तो शेष रहे हुवे साधुवोंकी अन्दर अगर आचारांग और निशीथसूत्रका जानकार साधु हो तो उसे आगेवान कर, सब साधु उन्होंकी आज्ञामें विचरना. अगर ऐसा न हो, अर्थात् सब साधु आचारांग और निशीथसूत्रके अपठित हो तो सब साधुवोंको प्रतिज्ञापूर्वक वहांसे विहार कर जिस दिशामें अपने स्वधर्मी साधु विचरते हो, उसी दिशामें एक रात्रि विहार प्रतिमा ग्रहन कर, उस स्वधर्मीयोंके पास आ जाना चाहिये. रहस्तेमें उपकार निमित्त नहीं ठहरना. अगर शरीरमें कारण हो तो ठेर सके. कारण—निवृत्ति होनेके बाद पूर्वस्थित साधु कहे—हे आर्य! एक दोय रात्रि और ठहरो कि तुमारे रोगनिवृत्तिकी पूर्ण खातरी हो. ऐसा मौकापर एक दोय रात्रि ठहरना भी कल्पै. एक दोय

योग्य साधु होने पर उसकी पदवी ले लेना चाहिये. मोकेसर पदवी छोड दे तो प्रायश्चित नहीं है. अगर न छोडे तथा छोडने के लीये साधु संघ प्रयत्न न करे, तो सबको तथा प्रकारका छेद और तप प्रायश्चित होता है. भावना पूर्ववत्.

(१५) आचार्योपाध्याय किसी गृहस्थको दीक्षा दी है, उस साधुको बडी दीक्षा देनेका समय आनेपर आचार्य जानते हुवे च्यार पांच रात्रिसे अधिक न रखे. अगर कोइ राजा और प्रधान, शेठ और गुमास्ता तथा पिता और पुत्र साथमें दीक्षा ली हो, राजा, शेठ, और पिता जो [1]बडी दीक्षा योग्य न हुवा हो और प्रधान, गुमास्ता, पुत्र बडीदीक्षा योग्य हो गये हो तो जबतक राजा, शेठ और पिता बडी दीक्षा योग्य नहो वहांतक प्रधान, गुमास्ता और पुत्रको आचार्य बडी दीक्षासे रोक सकते है. परन्तु ऐसा कारण न होनेपर उस लघु दीक्षावाला साधुको बडी दीक्षासे रोके तो रोकनेवाला आचार्य उतने दिनके तप तथा छेदके प्रायश्चितका भागी होता है.

(१६) एवं अनजानते हुवे रोके.

(१७) एवं जानते अनजानते हुवे रोके, परन्तु यहां दश रात्रिसे ज्यादा रखनेसे प्रायश्चित होता है.

नोटः—अगर पिता, पुत्र और दुसराभी साथमें दीक्षा ली हो, पिता बडी दीक्षा योग्य न हुवा, परन्तु उसका पुत्र बडी दीक्षा योग्य हो गया है और साथमें दीक्षा लेनेवालाभी बडी दीक्षाके योग्य हो गया है. अगर पिताके लीये पुत्रको रोक दीक्षा

---

१ सात रात्रि, च्यार मास, छे मास—छोटी दीक्षाका तीन काल है. इसके दरम्यानमें प्रतिक्रमणमें पंडिवण नवकार अध्ययन तथा दशवैकालिकका चतुर्थाध्ययन पढनेवालोंको बडी दीक्षा दी जाती है.

सात पदवीयोंमें पदवी देना कल्पै. अगर कंठस्थ करनेका स्वीकार कर. फिरसे कंठस्थ नहीं करे तो. उसे न तो पदवी देना कल्पै और न उस शिष्यको पदवी लेना कल्पै.

(१६) इसी माफिक नवयुवति तरुण साध्वीको भी समझना चाहिये. परन्तु यहां पदवी प्रवर्तनी तथा गणविच्छेदणी-होय कहना. शेष साधुवत्.

(१७) स्थविर मुनि स्थविर भूमिको प्राप्त हुवे. अगर आचारांग और निशीथसूत्र भूल भी जावे. और पीछेसे कंठस्थ करे. न भी करे तो उन्होंको सातों पदवीसे किसी प्रकारकी भी पदवी देना कल्पै. कारण कि चिरकालसे उन महात्माओंने कंठस्थ कर उनकी स्वाध्याय करी हुइ है. अगर वर्तमान कंठस्थ न भी हो. तो भी उनकी मनन्तव उन्होंकी स्फुर्तिमें जरुर है. तथा चिरकाल दीक्षापर्याय होनेसे बहुतसे आचार-गोचर प्रवृत्ति उन्होंने देखी हुइ है.

(१८) स्थविर. स्थविरकी भूमि ६० वर्ष [1] को प्राप्त हुवा. जो आचारांग और निशीथसूत्र विस्मृत हो गया हो. तो यह बैठे बैठे. सोते सोते. एक पसवाडे सोते हुवे धीरे धीरेसे याद करे. परन्तु आचारांग और निशीथ अवश्य कंठस्थ रखना चाहिये. कारण—साधुओंको दीक्षासे लेके अन्त समय तकका व्यवहार आचारांगसूत्रमें है. और उससे स्खलित हो. तो शुद्ध करनेके लीये निशीथसूत्र है.

(१९) साधु साध्वीयोंके आपसमें बारह[1] प्रकारका संभोग है. अर्थात् एक पात्र लेना देना. वांचना देना इत्यादि. उस साधु साध्वीयोंको आलोचना लेना देना आपसमें नहीं कल्पै. अर्थात् आलोचना करना हो तो साधु साधुवोंके पास और साध्वीयों

---

१ [illegible] देखो.

(१२) ग्राम, नगर, यावत् संनिवेश, जिसके एक दरवाजा हो. निकास प्रवेशका एक ही रस्ता हो. वहांपर बहुतसे साधु जो आचारांग और निशीथ सूत्रके अज्ञात हों. उन्होंको उक्त ग्रामादिमें ठेरना नहीं कल्पै. अगर उन्होंकी अन्दर एक साधु भी आचारांग और निशीथका जानकार हो, तो कोइ प्रकारका प्रायश्चित्त नहीं है. अगर ऐसा जानकार साधु न हो तो उस सब अज्ञात साधुयोंको प्रायश्चित्त होता है जितने दिन रहे, उतने दिनोंका छेद तथा तप प्रायश्चित्त अज्ञानोंके लीये होता है. भावना पूर्ववत्.

(१३) एवं ग्रामादिके अलग अलग दरवाजे, निकाल प्रवेश अलग अलग हो तो भी बहुनसे अज्ञात साधुयोंको वहांपर रहना नहीं कल्पै. अगर एक भी आचारांग निशीथ पठित साधु हो तो प्रायश्चित्त नहीं आवे. नहि तो सबको तप तथा छेद प्रायश्चित होता है.

भावार्थ—अज्ञात साधु अगर उन्मार्ग जाता हो, तो ज्ञात साधु उसे निवार सके.

(१४) ग्रामादिके बहुत दरवाजे, बहुत निकाश प्रवेशके रास्ते है. वहांपर बहुश्रुत, बहुतसे आगम विचारोंके जानकारको अकेला ठेरना नहीं कल्पै. तो अज्ञात साधुयोंका तो कहना ही क्या ?

(१५) ग्रामादिके एक दरवाजा, एक निकास प्रवेशका रास्ता हो. वहांपर बहुश्रुत, बहुत आगमका जानकार मुनिको अकेला रहना कल्पै; परन्तु उस मुनिको अहोनिश साधुभावका ही चिंतन करना, अप्रमादपणे तप संयममें मग्न रहना चाहिये.

(१६) बहुतसे मनुष्य (स्त्री, पुरुष) तथा पशु आदि एकत्र हुवा हो. कुचेष्टायोंसे काम प्रदीप्त करते हो. मैथुन सेवन

शुद्ध कर आप रख भी सके. कारण समयीको सहायता देना बहुत लाभका कारण है. और योग्य हो तो उसे स्वल्प काल तथा जावजीव तक आचार्यादि पद्वी भी देना कल्पे. इति.

श्री व्यवहारसूत्र—छठा उद्देशाका संक्षिप्त सार.

---

(७) सातवां उद्देशा.

(१) साधु साध्वीयोंके आपसमें अशनादि बारह प्रकारके संभोग है. अर्थात् साधुवोंकी आज्ञामें विहार करनेवाली साध्वीयों है. उन्हों के पास कोइ अन्य गच्छसे निकलके साध्वी आइ है. आनेवाली साध्वीका आचार खंडित यावत उसको प्रायश्चित्त दीया विना स्वल्पकालकी या चिरकालकी पद्वी देना साध्वीयोंको नहीं कल्पे.

(२) साधुवोंको पूछ कर उस आइ हुइ साध्वीको प्रायश्चित्त देके यावत स्वल्पकाल या चिरकालकी पद्वी देना साध्वीयोंको कल्पे.

(३) साध्वीयोंको विना पूछे साधु उस साध्वीको पूर्वोक्त प्रायश्चित्त नहीं दे सके. कारण—आखिर साध्वीयोंका निर्वाह करना साध्वीयोंके हाथमें है. पीछेसे भी साध्वीयोंकी प्रकृति नहीं मिलती हो, तो निर्वाह होना मुश्कील होता है.

(४) साधु, साध्वीयोंको पूछ कर, उस साध्वीकी आलोचना सुन, प्रायश्चित देके शुद्ध कर गच्छमें ले सके, यावत् योग्य हो तो प्रवर्तणी या गणविच्छेदणीकी पद्वी भी दे सके.

(५) साधु साध्वीयोंके बारह प्रकारका संभोग है. अगर साध्वीयों गच्छ मर्यादाका उल्लंघन कर अकृत्य कार्य करे (पासत्या-

(१८) परन्तु किसी साधु साध्वीयोंकी याचना चलती है, तो उसको याचना देना कल्पै. अस्वाध्यायपर पाटे (वस्त्र) वस्त्र लेना चाहिये. यह विशेष सूत्र गुरुगम्यताका है.

(१९) तीन वर्षके दीक्षापर्यायवाला साधु, और तीस वर्षों दीक्षापर्यायवाली साध्वीको उपाध्यायकी पद्वी देना कल्पै.

(२०) पांच वर्षके दीक्षापर्यायवाला साधु और साठ वर्षों दीक्षापर्यायवाली साध्वीको आचार्य (प्रवर्तणी) पद्वी देना कल्पै. पद्वी देते समय योग्यायोग्यका विचार अवश्य करना चाहिये इस विषय चतुर्थ उद्देशामें खुलासा कीया हुवा है.

(२१) ग्रामानुग्राम विहार करता हुवा साधु, साध्वी कदाच कालधर्म प्राप्त हो, तो उसके साथवाले साधुवोंको चाहिये कि उस मुनि तथा साध्वीका शरीरको लेके बहुत निर्जीव भूमिपर परठे. अर्थात् एकान्त भूमिकापर परठे, और उस साधुके भंडोपकरण हो, वह साधुवोंको काम आने योग्य हो तो गृहस्थोंकी आज्ञासे ग्रहन कर अपने आचार्यादि वृद्धोंके पास रखे, जिसकी जरुरत जाने आचार्यमहाराज उसको देवे यह मुनि, आचार्यश्रीकी आज्ञा लेके अपने काममें लेवे.

(२२) साधु साध्वीयों जिस मकानमें ठेरे है उस मकानका मालिक अपना मकान किसी अन्यको भाडे देता हो, उस समय कहे कि-इतना मकानमें साधु ठेरे हुवे है. शेष मकान तुमको भाडे देता हुं, तो घरधणीको शय्यातर रखना. अगर घरधणी न कहे, और भाडे लेनेवाला कहे कि-हे साधु ! यह मकान मैंने भाडे लीया है. परन्तु आप सुखपूर्वक विराजो, तो भाडे लेनेवालेको शय्यातर रखना. अगर दोनों आज्ञा दे तो दोनोंको शय्यातर रखना.

(२३) इसी माफिक मकान बेचनेके विषयमें समझना.

(२४) साधु जिस मकानमें ठेरे, उस मकानकी आज्ञा प्रथम लेना चाहिये. अगर कोई गृहस्थकी नित्य निवास करनेवाली विधवा पुत्री हो, तो उसकी भी आज्ञा लेना कल्पै, तो फिर पिता पुत्रादिकी आज्ञाका तो कहना ही क्या ! सुहागण अनित्य निवासवाली पुत्रीकी आज्ञा नहीं लेना. कारण-उनका सासरा कहा है. कभी उनके हाथसे आहार ग्रहन करनेमें आवे, तो शय्यातर दोष लग जावे. परन्तु विधवा नित्य निवास करनेवाली पुत्रीकी आज्ञा ले सकते है.

(२५) रहस्तेमें चलते चलते कभी वृक्ष नीचे रहनेका काम पडे, तो भी गृहस्थोंकी आज्ञा लेना. अगर कोई न मिले, तो पहले वहां पर ठेरे हुवे मुसाफिरकी भी आज्ञा लेके ठेरना.

(२६) जिस राजाके राज्यमें मुनि विहार करते हो, उस राजाका देहान्त हो गया हो, या किसी कारणसे अन्य राजाका राज्याभिषेक हुवा हो परन्तु आगेके राजाकी स्थितिमें कुछ भी फेरफार नहीं हुवा हो, तो पहलेकी लीई हुई आज्ञामें ही रहना चाहिये. अर्थात् फिरसे आज्ञा लेनेकी जरूरत नहीं है.

(२७) अगर नये राजाका अभिषेक होनेपर पहलेका कायदा तोड दीया हो, नये कायदे बांधा हो, तो साधुवोंको उस राजाकी दुसरीवार आज्ञा लेना चाहिये कि-हम लोग आपके देशमें विहार कर, धर्मोपदेश करते है. इसमें आपकी आज्ञा है ? कारण कि साधु बिगर आज्ञा विहार करे, तो तीसरा व्रतका रक्षण नहीं होता है. चोरी लगती है. वास्ते अवश्य आज्ञा लेके विहार करना चाहिये. इति.

श्री व्यवहार सूत्र-सातवां उद्देशाका संक्षिप्त सार.

९) वापरना हो. तो दुसरी दफे और भी आज्ञा लेना चाहिये.

(१०) साधु साध्वीयोंको आज्ञा लेनेके पहला शय्या. संस्तारक वापरना (भोगवना) नहीं कल्पै. किन्तु पेस्तर मकान या पाटपाटलेवालेकी आज्ञा लेना. फिर उस शय्या संस्तारकको वापरना कल्पै. कदाचित् कोइ ग्रामादिमें शेष दिन रह गया हो, आगे जानेका अवकाश न हो और साधुवोंको मकानादि सुलभतासे मिलना न हो. तो प्रथम मकानमें डेरा जाना फिर बादमें आज्ञा लेना कल्पै. विगर आज्ञा मकानमें डेरा गये. फिर घरका धनी तकरार करे. उस समय एक शिष्य कहे कि-हे गृहस्थ! हम रात्रिमें चलते नहीं है. और दुसरा मकान नहीं है. तो हम साधु कहां जावे! उसपर गृहस्थ तकरार करे. जब वृद्ध मुनि अपने शिष्यको कहे-भो शिष्य! एक तो तुम विना आज्ञा गृहस्थोंके मकानमें डेरे हो. और दुसरा इन्होंसे तकरार करते हो. यह ठीक नहीं है. इनसे गृहस्थको श्रद्धा वृद्ध मुनिपर बढ जानेसे वह कहते है कि-हे मुनि! तुम अच्छे न्यायवन्त हो. यहां डेरो. मेरी आज्ञा है.

(११) मुनि, गृहस्थोंके घर गौचरी गये. अगर कोइ स्वल्प उपकरण भूलसे वहां पड जावे, पीछेसे कोइ दुसरा साधु गया हो. तो उसे गृहस्थोंकी आज्ञासे लेना चाहिये. फिर वह मुनि मिले तो उसे दे देना चाहिये. अगर न मिले तो उसको न तो आप ले. न अन्य साधुवोंको दे. एकान्त भूमिपर परठ देना चाहिये.

(१२) इसी माफिक विहारभूमि जाते मुनिका उपकरण विषय.

(१३) एवं ग्रामानुग्राम विहार करते समय उपकरण विषय.

भावार्थ—साधुका उपकरण जानके साधुके नामसे गृहस्थकी आज्ञा लेके ग्रहन कीया था, अब साधु न मिलनेसे अगर आप

(९) नौवां उद्देशा.

मकानका दातार हो, उसे शय्यातर कहते हैं. उन्हांकि घरका आहार पाणी साधुवोंको लेना नहीं कल्पै. यहांपर शय्यातरकाही अधिकार कहते हैं.

(१) शय्यातरके पाहुणा (महेमान) आया हो. उसको अपने घरकी अन्दर तथा वाडाकी अन्दर भोजन बनानेके लीये सामान दीया और कह दीया कि—आप भोजन करनेपर बढ जावे यह हमको दे देना. उस भोजनकी अन्दरसे साधुको देवे तो साधुको लेना नहीं कल्पै. कारण—यह भोजन शय्यातरका है.

(२) सामान देनेके बाद कह दीया कि—हम तो आपको दे चुके हैं. अब बढे हुवे भोजनको आपकी इच्छा हो वैसा करना. उस आहारसे मुनिको आहार देवे, तो मुनिको लेना कल्पै. कारण—यह आहार उस पाहुणाकी मालिकीका हो गया है.

(३-४) एवं दो अलापक मकानसे बाहार बैठके भोजन करावे. उस अपेक्षाभी समझना.

(५-६-७-८) एवं च्यार सूत्र. शय्या तरकी दासी, पेसी कामकारी आदिका मकानकी अन्दरका दो अलापक. और दो अलापक मकानके बाहारका.

भावार्थ—जहां शय्यातरका हक्क हो, वह भोजन मुनिको लेना नहीं कल्पै. और शय्यातरका हक्क निकल गया हो, वह आहार मुनिको लेना कल्पै.

(९) शय्यातरके न्यातीले (स्वजन) एक मकानमें रहते हो. घरकी अन्दर एक चूलेपर एक ही बरतनमें भोजन बनाके अपनी उपजीविका करते हो. उस आहारसे मुनिको आहार देवे तो मुनिको लेना नहीं कल्पै.

(१०) शय्यातरके स्यातीले एक मकानकी अन्दर धान विगेरे सामेल है. एक चूलेपर भिन्न भिन्न भाजनमें आहार तैया कीया है. उस आहारसे मुनिको आहार देवे तो वह आहा मुनिको लेना नहीं कल्पै. कारण-पाणी दोनोंका सामेल है.

(११-१२) एवं दो सूत्र, घरके बहार चुलापर आहार तैया करनेका यह च्यार सूत्र एक घरका कहा इसी माफिक (१३-१ १५-१६) च्यार सूत्र अलग अलग घर अर्थात् एक पोलमें अल अलग घर है. परन्तु एक चूलापर एकही वरतनमें आहार बना पाणी विगेरे सब सामेल होनेसे वह आहार साधु साध्वीयों लेना नहीं कल्पै.

(१७) शय्यातरकी दुकान किसीके सीर (हिस्सा-पांती में है. वहांपर तैल आदि क्रयविक्रय होता हो वेचनेवाला भागी दार है. साधुयोंको तैलका प्रयोजन होनेपर उस दुकान (जो शय्यातरके विभागमें है, तो भी) से तैलादि लेना नहीं कल्पै शय्यातर देता हो, तो भी लेना नहीं कल्पै सीरवाला दे तो भी लेना नहीं कल्पै.

(१९-२०) एवं शय्यातरकी गुलकी शाला (दुकान)
(२१-२२) एवं कियाणाकी दुकानका दो सूत्र
(२३-२४) एवं कपडाकी दुकानका दो सूत्र
(२५-२६) एवं सूतकी दुकानका दो सूत्र
(२७-२८) एवं कपास (रुइ) की दुकानका दो सूत्र
(२९-३०) एवं पसारीकी दुकानका दो सूत्र
(३१-३२) एवं हलवाइकी दुकानका दो सूत्र
(३३-३४) एवं भोजनशालाका दो सूत्र.
(३५-३६) एवं आम्रशालाका दो सूत्र

अठारासे छत्तीसवां नूत्रतक कोइ विशेष कारण होनेपर दुकानोंपर याचना करनी पडती है. शय्यातरके विभागमें दुकान है. जिनपर भागीदार क्रय विक्रय करता है. वह देवे तोभी मुनिको लेना नहीं कल्पै. कारण-शय्यातरका विभाग है, और शय्यातर देता हो. तोभी मुनिको लेना नहीं कल्पै. कारण शय्यातरकी वस्तु ग्रहन करनेसे आधाकर्मि आदि दोषोंका संभव होता है तथा मकान मीलनेमें भी मुश्केली होती है.

(३७) सत्त सत्तमिय भिक्षुप्रतिमा धारण करनेवाले मुनियोंको ४९ अहोराम काल लगता है. और आहार पाणीकी ७-१४ २१-२८-३५-४२-४९-१९६ दात होती है. अर्थात् प्रथम सात दिन एकेक दात, दुजे सात दिन दो दो दात. तीजे सात दिन तीन तीन दात. चौथे सात दिन च्यार च्यार दात. पांचवे सात दिन पांच पांच दात. छट्ठे सात दिन छे छे दात. सातवे सात दिन सात सात दात. दात—एक दफे अखंडित धारासे देवे. उसे दात कहते है. औरभी इस प्रतिमाका जैसा सूत्रोंमें कल्पमार्ग बतलाया है, उसको सम्यग् प्रकारसे पालन करनेसे यावत् आज्ञाका आराधक होता है.

(३८) एवं अट्ठ अट्ठमिय भिक्षु प्रतिमाको ६४ दिन काल लगता है. अन्न पाणीकी २८८ दात. यावत् आज्ञाका आराधक होता है.

(३९) एवं नवनवमिय भिक्षु प्रतिमाको ८१ दिन. ४०५ आहार पाणीकी दात. यावत् आज्ञाका आराधक होता है.

(४०) एवं दश दशमिय भिक्षु प्रतिमाको १०० दिन ५५० आहार पाणीकी दात. यावत् आज्ञाका आराधक होता है.

(४१) वज्रऋषभनाराच संहनन जघन्यसे दश पूर्व. उत्कृष्ट

[१] काष्टके भाजनमें लाके देवे ऐसा आहार ग्रहन करना.

[२] शुद्ध हाथ, शुद्ध भोजन चावल आदि मिले तो ग्रहन करना.

[३] भोजनादिसे खरडे हुये (लिप्त) हाथोंसे आहार देवे तो ग्रहन करना.

(४६) तीन प्रकारके अभिग्रह

[१] भाजनमें डालता हुवा आहार देवे, तो ग्रहन करे

[२] भाजनसे निकालता हुवा देवे तो ग्रहन करे.

[३] भोजनका स्वाद लेनेके लीये प्रथम ग्रास मुंहमें डालता हो. ऐसा आहार ग्रहन करे.

तथा ऐसा भी कहते है-ग्रहन करता हुवा तथा प्रथमग्रास आस्वादन करता हुवा देवे तो मेरे आहारादि ग्रहन करना. अभिग्रह करनेपर ऐसाही आहार मिले तो लेना, नहीं तो अनादरपणे ही परीसहरुप शत्रुओंका पराजय कर मोक्षमार्गका साधन करते रहना. इति.

श्री व्यवहार सूत्र नौवां उद्देशाका संक्षिप्त सार.

---

(१०) दशवां उद्देशा.

(१) भगवान वीर प्रभुने दोय प्रकारकी प्रतिमा (अभिग्रह) फरमाइ है.

[१] यव मध्यम चंद्रप्रतिमा-यवका आदि और अन्त विस्तारवाला तथा मध्य भाग पतला होता है.

[२] यवमध्यम चंद्रप्रतिमा-यवका आदि अन्त पतला और मध्य भाग विस्तारवाला होता है.

-- इसी माफिक मुनि तपश्चर्या करते है जिसमें यवमध्यचंद्र प्रतिमा धारण करनेवाले मुनि एक मास तक अपने शरीर संरक्षणका त्याग कर देते है जो देव मनुष्य तिर्यंच संबंधी कोई भी परीसह उत्पन्न होते है उसे सम्यक् प्रकारसे सहन करते है वह परीसह भी दो प्रकारके होते है

[१] अनुकूल -जो वन्दन, नमस्कार पूजा सत्कार करनेसे राग वैसरी खडा होता है अर्थात स्तुतिमें हर्ष नहीं

[२] प्रतिकूल—दंडासे मारे, जोतसे, वेतसे मारे पीटे, आक्रोश वचन बोले, उस समय द्वेष गजेन्द्र खडा होता है.

इस दोनों प्रकारके परीषहको जीते यवमध्यम प्रतिमा धारी मुनिको शुक्लपक्षकी प्रतिपदाको एक दात आहार और एक दात पाणी लेना कल्पै. दूसको दो दात, तीसको तीन दात, यावत् पूर्णिमाको पंद्रह दात आहार और पन्द्रह दात पाणी लेना कल्पै. आहारकी विधि जो ग्राम, नगरमें भिक्षाचर भिक्षा लेकर निवृत्त हो गये हो, अर्थात् दो प्रहर दुपहर को भिक्षार्थ जावे जावें. सपल्लता, वपल्लता आतुरता रहित हो पशुता भी जन करता हो, दुपद, चतुष्पद न वहां ऐसा नीरस आहार हो, सोभी एक पग दरवाजाकी अन्दर, और एक पग दरवाजाके बाहार वह भी सूपडे हाथोंसे देवे, तो लेना कल्पै परन्तु दो तीन, यावत् बहुतसे जन एकत्र हो, भोजन करते हो वहांसे न कल्पै. बालकके लीये, गर्भवतीके लीये, रोगीके लीये बनाया हुवा भी नहीं कल्पै. बचाचोंको दुध पान करानेको छोडाके देवे तो भी नहीं कल्पै इत्यादि एषणीय आहार पूर्ववत् लेना कल्पै

कृष्णपक्षकी प्रतिपदाको चौदह दात, दूजको तेरह दात, यावत् चतुर्दशीको एक दात आहार, और एक दात पाणी लेना कल्पै. तथा अमावस्याको चौविहार उपवास करना कल्पै. और सूत्रोंमें इसका कल्पमार्ग बतलाया है; इसी माफिक पालन करनेसे यावत् आज्ञाका आराधक हो सक्ता है

वज्र मध्यम चन्द्र प्रतिमा स्वीकार करनेवाले मुनियोंको यावत् अनुकूल प्रतिकूल परीसह सहन करे. इस प्रतिमाधारी मुनि, कृष्णपक्षकी प्रतिपदाको पन्द्रह दात आहार और पन्द्रह दात पाणी, यावत् अमावस्याको एक दात आहार, एक दात पाणी लेना कल्पै शुक्लपक्षकी प्रतिपदाको दोय दात आहार दोय दात पाणी लेना कल्पै. यावत् शुक्लपक्षकी चतुर्दशीको पन्द्रह दात आहार, पन्द्रह दात पाणी, और पुर्णिमाको चौविहार उपवास करना कल्पै यावत् सम्यक् प्रकारसे पालन करनेसे आज्ञाका आराधक होता है यह दोनों प्रतिमामें आहारका जैसे जैसे अभिग्रह कर भिक्षा निमित्त जाते है. वैसा वैसाही आहार मिलनेसे आहार करते है. अगर ऐसा आहार न मिले तो, उस रोज उपवासही करते है

(२) पांच प्रकारके व्यवहार है—

[१] आगमव्यवहार. [२] सूत्रव्यवहार [३] आज्ञा-व्यवहार. [४] धारणाव्यवहार. [५] जीतव्यवहार.

(१) आगमव्यवहार—जैसे अरिहंत, केवली, मनःपर्यव-ज्ञानी, अवधिज्ञानी, जातिस्मरण ज्ञानी, चौदह पूर्वधर, दश पूर्वधर, श्रुतकेवली—यह सब आगम व्यवहारी है. इन्होंके लीये कल्प-कायदा नहीं है. कारण—अतिशय ज्ञानवाले भूत, भविष्य, वर्तमानमें लाभालाभका कारण जाने, वैसी प्रवृत्ति करे.

(२) सूत्रव्यवहार—अंग, उपांग, मूल छेदादि जिस कालमें जितने सूत्र हो, उनके अनुसार प्रवृत्ति करना उसे सूत्र व्यवहार कहते है

(३) आज्ञाव्यवहार—कितनी एक बातोंका सूत्रमें प्रतिपादन भी नहीं है, परन्तु उसका व्यवहार पूर्व महर्षियोंकी आज्ञा से ही चलता है

(४) धारणाव्यवहार गुरुमहाराज जो प्रवृत्ति करते थे, आलोचना देते थे, सब शिष्य उस बातकी धारणा कर लेते थे उसी माफिक प्रवृत्ति करना यह धारणा व्यवहार है.

(५) जीतव्यवहार—जमाना जमानाके बल संहनन, शक्ति, लोकव्यवहार आदि देख अशठ आचार्य, शासनका उपकारी हो, भविष्यमें निर्वाहा हो, ऐसी प्रवृत्तिको जीतव्यवहार कहते है

आगम व्यवहारी हो, उस समय आगम व्यवहारका स्थापन करे शेष च्यारों व्यवहारकी आवश्यकता नहीं है आगम व्यवहारके अभावमें सूत्र व्यवहार स्थापन करे सूत्र व्यवहारके अभावमें आज्ञा व्यवहार स्थापन करे, आज्ञा व्यवहारके अभावमें धारणा व्यवहार स्थापन करे, धारणा व्यवहारके अभावमें जीत व्यवहार स्थापन करे

प्रश्न हे भगवन् ! एसे किस कारणसे कहते हो ?

उत्तर हे गौतम ! जिस जिस समयमें जिस जिस व्यवहारकी आवश्यकता होती है, उस उस समय उस उस व्यवहार माफिक प्रवृत्ति करनेसे मोक्ष मार्गका आराधक होता है

भावार्थ—[illegible]

है. यह द्रव्य क्षेत्र काल भाव देखके प्रवृत्ति करते हैं. किसी अपेक्षासे आगमव्यवहारी सूत्रव्यवहारकी प्रवृत्ति, सूत्रव्यवहारी आज्ञाव्यवहारकी प्रवृत्ति, आज्ञाव्यवहारी धारणाव्यवहारकी प्रवृत्ति, धारणाव्यवहारी जीतव्यवहारकी प्रवृत्ति-अर्थात् एक व्यवहारी दुसरे व्यवहारकी अपेक्षा रखते हैं, उस अपेक्षा संयुक्त व्यवहार प्रवृतानेसे जिनाज्ञाका आराधक हो सक्ता है.

(३) च्यार प्रकारके पुरुष (साधु) कहे जाते हैं.

[१] उपकार करते हैं. परन्तु अभिमान नहीं करे.

[२] उपकार तो नहीं करे. किन्तु अभिमान बहुत करे.

[३] उपकार भी करे और अभिमान भी करे.

[४] उपकार भी नहीं करे और अभिमान भी नहीं करे.

(४) च्यार प्रकारके पुरुष (साधु) होते हैं.

[१] गच्छका कार्य करे परन्तु अभिमान नहीं करे.

[२] गच्छका कार्य नहीं करे, खाली अभिमान ही करे.

[३] गच्छका कार्य भी करे. और अभिमान भी करे.

[४] गच्छका कार्य भी नहीं करे. और अभिमान भी नहीं करे.

(५) च्यार प्रकारके पुरुष होते हैं.

[१] गच्छकी अन्दर साधुवोंका संग्रह करे. किन्तु अभिमान नहीं करे.

[२] गच्छकी अन्दर साधुवोंका संग्रह नहीं करे, परन्तु अभिमान करे.

[३] गच्छकी अन्दर साधुवोंका संग्रह करे और अभिमान भी करे.

[४] गच्छकी अन्दर साधुवोंका संग्रह भी नहीं करे, और अभिमान भी नहीं करे, एवं वस्त्र, पात्रादि

(६) च्यार प्रकारके पुरुष होते है—

[१] गच्छके छत्ते गुण दीपावे, शोभा करे, परन्तु अभिमान नहीं करे एवं चौभंगी

(७) च्यार प्रकारके पुरुष होते है

[१] गच्छकी शुश्रुषा (विनय भक्ति) करते है, फिर अभिमान नहीं करते एवं चौभंगी.

एवं गच्छकी अन्दर जो साधुवोंको अतिचारादि हो, उन्होंकी आलोचना करवाके विशुद्ध करावे

(८) च्यार प्रकारके पुरुष होते है-

[१] रूप-साधुका लिंग, रजोहरण मुखवस्त्रिकादिको छोडे (दुष्कालादि तथा राजादिका कोप होनेसे समयके जानकर रूप छोडे) परन्तु जिनेन्द्रका प्ररूपित धर्मको नहीं छोडे

[२] रूपको नहीं छोडे, प्रमादवश किन्तु धर्मको छोडे

[३] रूप और धर्म दोनोंको नहीं छोडे

[४] रूप और धर्म-दोनोंको छोडे जैसे दुर्गति प्राप्त भ्रष्ट और संयमरहित

(९) च्यार प्रकारके पुरुष होते है—

[१] जिनाज्ञारूप धर्मको छोडे परन्तु गच्छमर्यादा नहीं छोडे. जैसे गच्छमर्यादा है कि अन्य समाजोंका वाचना नहीं देना और जिनाज्ञा है कि योग्य हो उसे वाचना देना. गच्छमर्यादा रखनेवाला सबको वाचना न देवे

[१] उपदेश दीये हुए पासमें है, किन्तु वाचना दीया हुआ पासमें नहीं है.

[२] वाचनावाला पासमें है, किन्तु उपदेशवाला पासमें नहीं है.

[३] दोनों पासमें है.

[४] दोनों पासमें नहीं है.

भावार्थ—पूर्ववत्.

एवं च्यार सूत्र उद्देशादि और धर्म आचार्यों के है. लघु दीक्षा, बडीदीक्षा उपदेश और वाचनाकी भावना पूर्ववत् एवं १८ सूत्र.

(१९) स्थविर महाराजकी तीन भूमिका होती है—

[१] जाति स्थविर.
[२] दीक्षा स्थविर.
[३] सूत्र स्थविर.

जिसमें साठ वर्षकी आयुष्यवाला जातिस्थविर है, वीस वर्ष दीक्षावाला दीक्षा स्थविर है और स्थानांग तथा समवायांग सूत्र—अर्थके जानकार सूत्र स्थविर है.

(२०) शिष्यकी तीन भूमिका है—

[१] जघन्य—दीक्षा देनेके बाद सात दिनके बाद बडी दीक्षा दी जावे.

[२] मध्यम दीक्षा देनेके बाद च्यार मास होनेपर बडी दीक्षा दी जावे.

[३] उत्कृष्ट छे मास होने पर बडी दीक्षा दी जावे.

भावार्थ—लघु दीक्षा देनेके बाद पिंडेषणा नामका अध्य-

(३९) बीश वर्षोंके दीक्षित साधुको सर्व सूत्रोंकी वाचन देना कल्पे. अर्थात् स्वसमय, परसमयके सर्व ज्ञान पठन पाठन करना कल्पे.

(४०) दश प्रकारकी वैयावच्च करनेसे कर्मोंकी निर्जरा और संसारका अन्त होता है. आचार्य, उपाध्याय, स्थविर, तपस्वी, नवशिष्य, ग्लान मुनि, कुल, गण, संघ, स्वधर्मी इन दशोंकी वैयावच्च करता हुवा जीव संसारका अन्त और कर्मोंकी निर्जरा कर अक्षय सुखको प्राप्त कर लेता है.

इति दशवां उद्देशा समाप्त.

इति श्री व्यवहारसूत्रका संक्षिप्त सार समाप्त

(३९) बीस वर्षोंके दीक्षित साधुको सर्व सूत्रोंकी वा
देना कल्पै. अर्थात् स्वसमय, परसमयके सर्व ज्ञान पठन पा
करना कल्पै.

(४०) दश प्रकारकी वैयावच करनेसे कर्मोंकी निर्जरा अ
संसारका अन्त होता है. आचार्य, उपाध्याय, स्थविर, तप
नवशिष्य, ग्लान मुनि, कुल, गण, संघ, स्वधर्मी इन दशों
वैयावच करता हुवा जीव संसारका अन्त और कर्मोंकी निर्
कर अक्षय सुखको प्राप्त कर लेता है

इति दशवां उद्देशा समाप्त.

इति श्री व्यवहारसूत्रका संक्षिप्त सार समाप्त

कल्प. वास्ते आचार्यश्रीको भी चाहिये कि अपने शिष्य शिष्य-णीयोंको योग्यता पूर्वक पेस्तर आचारांगसूत्र और निशियसूत्रकी वाचना दे. और मुनियोंको भी प्रथम इसका ही अभ्यास करना चाहिये. यह मेरी नम्रता पूर्वक विनंती है.

संकेत—

(१) जहांपर ३ तीनका अंक रखा जावेगा, उसे—यह कार्य स्वयं करे नहीं, अन्य साधुयोंसे कराये नहीं, अन्य कोइ साधु करते हो उसे अच्छा समझे नहीं—उसको सहायता देवे नहीं.

(२) जहांपर केवल मुनिशब्द या साधुशब्द रखा हो वहां साधु और साध्वीयों दोनों समझना चाहिये. जो साधुके साथ घटना होती है, वह साधु शब्दके साथ जोड देना और साध्वी-योंके साथ घटना होती हो, वह साध्वीशब्दके साथ जोड देना.

(३) लघु मासिक, गुरु मासिक, लघुचातुर्मासिक, गुरु चा-तुर्मासिक तथा मासिक, दो मासिक, तीन मासिक, चतुर्मासिक, पंच मासिक और छे मासिक—इस प्रायश्चित्तवालोंको क्या क्या प्रायश्चित्त देना, उसके बदलेमें आलोचना सुनके प्रायश्चित्त देने-वाले गीतार्थ—बहुश्रुतजी महाराज पर ही आधार रखा जाता है. कारण—आलोचना करनेवाले किस भावोंसे दोष सेवन कीया है, और किस भावोंसे आलोचना करी है, कितना शारीरिक सा-मर्थ्य है, वह द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव देखके ही शरीर तथा संय-मका निर्वाह करके ही प्रायश्चित देते है. इस विषयमें वीसवां उद्दे-शामें कुछ खुलासा कीया गया है. अस्तु.

—⁂—

अग्नि शस्त्रादिसे कुचेष्टा करनेसे कुचेष्टा करनेवालोंको बडा भारी नुकशान होता है. वास्ते मुनि उक्त कार्य स्वयं करे, अन्यके पास करावे, अन्य करते हुवेको आप अच्छा समझ अनुमोदन करे. अर्थात् अन्य उक्त कार्य करते हुवेको सहायता करे.

(१०) कोइ भी साधु साध्वी सचित्त गन्ध गुलाब, केवडादि पुष्पोंकी सुगन्ध स्वयं लेवे, लीरावे, लेतेको अनुमोदन करे.

(११) .. सचित्त प्रतिबद्ध सुगन्ध ले, लीरावे, लेतेको अनुमोदे.

(१२) ,, पाणीवाला रहस्ता तथा कीचडवाला रहस्तापर अन्यतीर्थीयोंके पास अन्यतीर्थीयोंके गृहस्थोंके पास काष्ठ पत्थरादि रखावे, तथा उंचा चढनेके लीये रस्सा सीडी आदि रखावे. (३)

(१३) .. अन्य तीर्थीयोंसे तथा अन्य० के गृहस्थोंसे पाणी निकालनेकी नाली तथा खाइ गटर करावे. (३)

(१४) .. अन्य तीर्थीयोंसे, अन्य० के गृहस्थोंसे छीका, छीकाके ढक आदिक करावे. (३)

(१५) ,. अन्य० अन्य० के गृहस्थोंसे सुतकी दोरी, उनका कंदोरा नाडी—रसी, तथा चिलमिली (शयन तथा भोजन करते समय जीवरक्षा निमित्त रखी जाती है.) करे. (३)

(१६) .. अन्य० अन्य० के गृहस्थोंसे सुइ (सूचि) घसावे—तीक्षण करावे. (३)

(१७) ,, एवं कतरणी. (१८) नखछेदणी. (१९) कानसोधणी.

भावार्थ—बारहसे उन्नीसवे सूत्रमें अन्य तीर्थीयों तथा अन्य तीर्थीयोंके गृहस्थोंसे कार्य करानेकी मना है. कारण—उन्होंसे कार्य करानेसे परिचय बढता है. वह असंयति है. अयतनासे कार्य करे. असंयतियोंके सर्व योग सावद्य है.

हारियं ' कहते है. अर्थात् उसे सरचीर्णी भी कहते है. वस्त्र सीनेके नामसे सुइकी याचना करी, उन सुइसे पात्र सीवें, इसी माफिक.

(३३) वस्त्र छेदनेके नामसे कतरणी लाके पात्र छेदे.

(३४) नख छेदनेके नामसे नखछेदणी लाके कांटा नीकाले.

(३५) कानका मेल निकालनेके नामसे कानसोधणी लाके दांतोका मेल निकाले.

भावार्थ—एक कार्यका नाम खोलके कोइ भी वस्तु नही लाना चाहिये. कारण-अपने तो एक ही कार्य हो, परन्तु उसी वस्तुसे दुसरे साधुयोंको अन्य कार्य हो. अगर वह साधु दुसरे साधुवोंको न देवे, तो भी ठीक नहीं. और देवे तो अपनी प्रतिज्ञा का भंग होता है वास्ते पेस्तर याचना ही ठीकसर करना चाहिये. अर्थात् साधु ऐसा कहे कि हमको इस वस्तुका खप है. अगर गृहस्थ पूछे कि—हे मुनि ! आप इस वस्तुको क्या करोगे ? तब मुनि कहे कि-हमारे जिस कार्यमें जरुरत होगी, उसमें काम लेंगे.

(३६) ,, सुइ वापिस देते वख्त अविधिसे देवे.

(३७) कतरणी अविधिसे देवे.

(३८ , एवं नखछेदणी अविधिसे देवे.

(३९) कानसोधणी अविधिसे देवे.

भावार्थ—सुइ आदि देते समय गृहस्थोंको हाथोहाथ देवे. तथा इधर उधर फेंकके चला जावे, उसे अविधि कहते है. कारण—गृहस्थोंके हाथोहाथ देनेमें कभी हाथमें लग जावे तो साधुका नाम होता है. इधर उधर फेंक देनेसे कोइ पक्षी आदि भक्षण करनेसे जीवघात होता है.

(४०) ,, तुंबाका पात्र, काष्टका पात्र, मट्टीका पात्र जो अन्य-तीर्थीयों तथा गृहस्थोंसे घसावे, घुंटावे, विषमका सम करावे,

(४९) ,, वस्त्रको एक थेगला (कारी) लगावे, शोभाकेलीये.

(५०) कारन होनेपर तीन थेगलेसे अधिक लगावे. ३

(५१) अविधिसे वस्त्र सीवे. ३

(५२) वस्त्रके कारन विना एक गांठ देवे.

(५३) जीर्ण वस्त्रको चलानेके लीये तीन गांठसे अधिक देवे.

(५४) ममत्वभावसे एक गांठ देके वस्त्रको बांध रखे.

(५५) कारन होनेपर तीन गांठसे अधिक देवे.

(५६) वस्त्रको अविधिसे गांठ देवे.

(५७) मुनि मर्यादासे अधिक वस्त्रकी याचना करे. ३

(५८) अगर किसी कारनसे अधिक वस्त्र ग्रहन कीया है, उसे देढ माससे अधिक रखे. ३

भावार्थ—वस्त्र और पात्र रखते हैं, वह मुनि अपनी संयम-यात्राका निर्वाहके लीये ही रखते हैं. यहांपर पात्र और वस्त्रके सूत्रो बतलाये है. उसमें मतल तात्पर्य प्रमादकी तथा ममत्वभावकी वृद्धि न हो और मुनि हमेशां लघुभूत रहके स्वहित साधन करे.

(५९) .. जिस मकानमें साधु ठेरे हो. उस मकानमें धुवा लगा हुवा हो. कचरा लगा हुवा हो, उसे अन्यतीर्थीयों तथा उन्होंके गृहस्थोंसे लीरावे, साफ करावे. ३

(६०) .. पूतिकर्म आहार—एषणीय, निर्दोष आहारकी अन्दर एक सीत मात्र भी आधाकर्मी आहारकी मिल गइ हो, अथवा सहस्र घरके अन्तरे भी आधाकर्मी आहारका लेप भी शुद्ध आहारमें मिश्रित हो, ऐसा आहार ग्रहन करे. ३

उपर लिखे हुवे ६० बोलोंसे कोइभी बोल, मुनि स्वयं से-

औघादिको नवटोप होतो है. तथा प्रतिमा प्रतिपन्न श्रावक
है. यह काष्टकी दंडीका रजोहरण रखता है. उसीका अल
भी यह विदीन रजोहरण मुनि रखनेसे होता है. इसी
वस्त्रयुक्त रजोहरण मुनियोंको रखनेका कल्प है. कदाच
कारण हो तो दोढ मास तक वस्त्र रहित भी रख सकते है.

(९) ,, अचित्त प्रतिबद्ध सुगंधको सुंघे. ३

(१०) ,, पाणीके मार्गमें तथा कीचड—कर्दम के मा
काष्ट, पत्थर तथा पाटी और उंचे चढनेके लीये अवलंबन मु
स्वयं करे ३

(११) एव पाणीकी नाइ, नाली स्वयं करे.

(१२) एव छीका ढकण करे.

(१३) सूत्र, ऊन, सणादिकी रसी-दोरी करे, तथा चिल
मिली आदिकी दोरी करे. ३

(१४) ,, सुइको घसे.

(१५) कतरणी घसे.

(१६) नखछेदणी घसे.

(१७) कानसोधणी—मुनि आप स्वयं घसे, तीक्षण करे. ३

भावार्थ—भांगे, तूटे तथा हाथमें लगनेसे रक्त निकले तो
अस्वाध्याय हो प्रमाद करे गृहस्थोंको शंका इत्यादि दोष है.

(१८) ,, स्वल्प ही कठोर वचन, असनोय वचनबोले. ३

(१९) ,, स्वल्प ही मृषावाद वचन बोले. ३

(२०) ,, स्वल्प ही अदत्तादान ग्रहन करे. ३

(२१) ,, स्वल्प ही हाथ, पग, कान, आंख, नख, दांत,
मुंह—शीतल पाणीसे तथा गरम पाणीसे एकवार धोवे वा वार-
वार धोवे. ३

(२२) ,, अखंडित चर्म अर्थात् संपूर्ण चर्म मृगछालादि रखे. ३

भावार्थ—विशेष कारण होनेपर साधु चर्मकी याचना करते है, वह भी एक खंडे साररखे.

(२३) ,, संपूर्ण वस्त्र रखे. ३

भावार्थ—संपूर्ण वस्त्रकी प्रतिलेखन ठीक तौरपर नहीं होती है, चौरादिका भय भी रहता है.

(२४) ,, अगर संपूर्ण वस्त्र लेनेका काम भी पड जावे, तो भी उसको काममें आने योग टुकडे कीया विगर रखे. ३

(२५) ,, तुंबा, काष्ठ, मट्टीका पात्रको आप स्वयं घसे, समारे, सुन्दर आकारवाला करे ३

भावार्थ—प्रमादादिकी वृद्धि और स्वाध्याय ध्यानमें विघ्न होता है.

(२६) एवं दंड, लट्ठी, खापटी, वंस, सुइ स्वयं घसे, समारे, सुन्दर बनावे ३

(२७) ,, साधुओंके पूर्व संसारी न्यातीले थे, उन्होंकी सहायतासे पात्रकी याचना करे. ३

(२८) ,, न्यातीके सिवाय दुसरे लोगोंकी सहायतासे पात्रकी याचना करे.

(२९) कोइ महान् पुरुष (धनाढ्य) तथा राजमतावालाकी सहायतासे

(३०) कोइ बलवानकी सहायतासे

(३१) पात्र दातारको पात्रदानका अधिकाधिक लाभ बतलाके पात्र याचे. ३

भावार्थ—साधु दीनतासे उक्त न्यातीलादिकों कहे कि—हमारे पात्रकी जरुरत है. आप साथ चलके मुझे पात्र दीला दो. आप साथमें न चलोगे, तो हमे पात्र कोइ न देगा तथा न्यातीलादि साधुयोंके लीये पात्रयाचनाकी कोशीष कर, साधुको पात्र दीलावे. अर्थात् मुनियोंको पराधीन न होना चाहिये.

(३२) „ नित्यपिंड (आहार) भोगवे. ३

(३३) „ अग्रपिंड अर्थात् पहेले उतरी हुइ रोटी आदिको गृहस्थ, गाय कुत्तेको देते है—ऐसा आहार भोगवे. ३

(३४) „ हमेशां भोजन बनावे उसे आधा भाग दानार्थ नीकलते हो, ऐसा आहार तथा अपनी आमदानीसे आधा हिस्सा पुन्यार्थ निकाले, उससे दानशालादि खोले. ऐसा आहार लेवे. ३

(३५) „ नित्य भाग अर्थात् अमुक भागका आहार दीनादिको देना—ऐसा नियम कीया हो, ऐसा आहार लेवे—भोगवे. ३

(३६) „ पुन्यार्थ नीकाला हुवा आहारसे किंचित् भाग भी भोगवे. ३

भावार्थ—जो गृहस्थ दानार्थ, पुन्यार्थ निकाला भोजन दीन गरीबोंको दीया जाता है. उसे साधु ग्रहन करनेसे उस भिक्षाचर लोगोंको अंतराय होगा. अथवा अन्य भी आधाकर्मी, उद्देशिक आदि दोषका भी संभव होगा.

(३७) „ नित्य एकही स्थानमें निवास करे. ३

भावार्थ—विगर कारण एक स्थानपर रहनेसे गृहस्थ लोगोंका परिचय बढ जानेपर रागद्वेषकी वृद्धि होती है.

(३८) „ पहले अथवा पीछे दानेश्वर दातारकी तारीफ (प्रशंसा) करे. ३

भावार्थ—जैसे चारण, भाट, भोजकादि, दातारोंकी तारीफ करते है, उसी माफीक साधुओंको न करना चाहिये. वस्तुतत्त्व स्वरूप अवसरपर कह भी सके है.

(३९) „ शरीरादि कारणसे स्थिरवास रहे हुवे तथा ग्रामानुग्राम विहार करते हुये जिस नगरमें गये है. वहांपर अपने संसारी पूर्व परिचित जैसे मातापितादि पीछे सासु सुसरा उन्होंके घरमें पहिले प्रवेश कर पीछे गौचरी जावे. ३

भावार्थ पहिले उन लोगोंको खबर होनेसे पूर्व स्नेहके मारे सदोष आहारादि बनावे. आधाकर्मी आहारका भी प्रसंग होता है.

(४०) „ अन्य तीर्थियोंके साथ, गृहस्थोंके साथ, पासथ्थि तीर्थे साधुवोंके साथ तथा मूल गुणोंसे पतित ऐसे पासत्थादिके साथ, गृहस्थोंके यहां गौचरी जावे ३

भावार्थ—अन्य तीर्थीयादिके साथ जानेसे लोगोंको शंका होगी कि—यह सब लोग आहार एकत्र ही लाते होंगे, एकत्र ही करते होंगे. अथवा दुसरेको लज्जासे दवावसे भी आहारादि देना पडे इत्यादि.

(४१) एवं स्थंडिल भूमिका तथा विहार भूमि जिनमंदिर

(४२) एवं ग्रामानुग्राम विहार करना आवता पूर्ववत

(४३) मुनि समुदानी भिक्षाकर ल्यानेपर अच्छा अच्छा सुगन्धि पदार्थका भोजन करे और खराब दुर्गन्धि वैसा परठे. ३

(४४) एवं अच्छा अच्छा पाणी पीवे और खराब मुदला हुवा पाणी परठे. ३

(४५) „ अच्छा सरस भोजन प्राप्त हो या अन्य अच्छा

करनेपर आहार बढ जावे और दो कोशकी अन्दर एक मंडलेके उस भोजन करनेवाले स्वधर्मी साधु हो, उसको विगर पूछे वह आहार परठे. ३

भावार्थ—जबतक साधुवोंको काम आते हो, वहांतक परठना नहीं चाहिये. कारण—सरस आहार परठनेसे अनेक जीवोंकी विराधना होती है.

(४६) ,, मकानके दातारको शय्यातर कहते है. उस शय्यातरका आहार ग्रहण करे.

(४७) शय्यातरका आहार विना उपयोगसे लीया हो, खबर पडनेपर शय्यातरका आहार भोगवे. ३

(४८) ,, शय्यातरका घर पूछे विगर गवेषणा कीये विगर गोचरी जावे. ३ कारन—न जाने शय्यातरका घर कौनसा है. पहलेके आहारके सामेल शय्यातरका आहार आ जावे. तो सब आहार परठना पडता है.

(४९) , शय्यातरकी निश्रासे अशनादि च्यार प्रकारका आहार ग्रहन करे. ३

भावार्थ—मकानका दातार चलके घर बतावे. दलाली करे, तो भी साधुको आहार लेना नहीं कल्पै. अगर लेवे तो प्रायश्चित्तका भागी होता है.

(५०) ,, ऋतुबद्ध चौमास पर्युषणा तक भोगवनेके लीये पाट, पाटला, तृणादि संस्तारक लाया हो, उसे पर्युषणाके बाद भोगवे. ३

(५१) अगर जन्तु आदि उत्पन्न हुवा हो तो, दश रात्रिके बाद भोगवे. अर्थात् जन्तुवोंके लीये दशरात्रि अधिक भी रख सके.

(५२) ,, पाट पाटला वर्षादमें पाणीसे भीजता हो, उसे उठाके अन्दर न रखे. ३

(३) श्री निशिथसूत्रका तीसरा उद्देशा.

(३५) एवं छेद भेद काटकर अन्दरसे रक्त, राद, चरबी, निकाले. ३

(३६) ,, एवं शीतल पाणी, गरम पाणी कर, विशुद्ध होनेपर भी धोवे. ३

(३७) एवं विशुद्ध होनेपर भी अनेक प्रकार लेपनकी जातिका लेप करे ३. (३८) एवं अनेक प्रकारका मालिस मर्दन करे ३. (३९) एवं अनेक प्रकारके सुगंधि पदार्थ तथा सुगन्धि धूपादिकी जाती लगाके अपने शरीरको सुवासित बनावे ३.

(४०) एवं अपने शरीरमें किरमीयादिको अंगुलि कर निकाले. ३

यह सोलासे चालीश तक पचीश सूत्रोंका भावार्थ—उक्त कार्य करनेसे प्रमादवृद्धि. अस्वाध्यायवृद्धि शास्त्रादिसे आत्मघात. रोगवृद्धि तथा शुश्रूषावृद्धि अनेक उपाधिये खडी हो जाती है. वास्ते प्रायश्चितका स्थान कहा है. उत्सर्ग मार्गवाले मुनियोंको रोगादिको सम्यक् प्रकारसे सहन करना और अपवाद मार्गवाले मुनियोंको लाभालाभका कारण देख गुरु आज्ञाके माफिक वर्ताव करना चाहिये. यहांपर सामान्य सूत्र कहा है.

(४१) ,, अपने दीर्घ-लम्बा नखोंको (शोभा निमित्त) कटावे, समरावे. ३

(४२) ,, अपने गुह्य स्थानके दीर्घवालोंको कटावे, कपावे, समरावे. ३

(४३) ,, अपनी चक्षुके दीर्घ वालोंको कटावे, समरावे. ३

(४४) एवं जैघोंका वाल (केश).

(४५) एवं कासका वाल.

(४६) दाढी मुंछोंका वाल.

(४७) मस्तकके बाल,

(४८) एवं कानोंके बाल.

(४९) कानकी अन्दरके बाल.

उक्त लंबे बालोंको शोभा निमित्त) कटाये, समराये, सुन्दरता बनाये, वह मुनि प्रायश्चितका भागी होता है. मस्तक, दाढी मुच्छोंके लोच समय लोच करना कल्पे.

(५०) ,, अपने दांतोंको एकवार अथवा वारंवार घसे. १

(५१) शीतल पाणी गरम पाणीसे धोये. ३

(५२) अलतादिके रंगसे रगे. ३

भावार्थ—अपनी सुन्दरता-शोभा बढानेके लीये उक्त कार्य करे, कराये, करतेको सहायता देवे.

(५३) ,, अपने होटोंको मसले, घसे ३

(५४) चांपे, दबाये.

(५५) तैलादिका मालीस करे.

(५६) लोद्रव आदि सुगंधि द्रव्य लगाये

(५७) शीतल पाणी गरम पाणीसे धोये ३

(५८) अलतादि रंगसे रगे, रगाये, रगतेको सहायता देवे भावना पूर्ववत्,

(५९) ,, अपने उपरके होटोंका लंबापणा तथा होटोंपर के दीर्घवालोंको काटे, समारे, सुन्दर बनाये. ३

(६०) एवं नेत्रोंके भोपण काटे, समारे. ३

(६१) एवं अपने नेत्रों (आंखों)को ममले.

(६२) मर्दन करे.

(६३) तैलादिका मालीस करे.

(६४) लोध्रादि सुगन्धी द्रव्यका लेपन करै.

(६५) शीतल पानी, गरम पानीसे धोवै.

(६६) काज्जलादि रंगसे रंगे, अर्थात् शोभाके लीये सुरमा-दिका अंजन करै. ३

(६७) „ अपने नेत्रोंके बालोंको काटे, समारे. ३

(६८) एवं पाखाडे तथा हाथोंके बालोंको काटे, समारे सुन्दरता बनावे. ३

(६९) „ अपने आंखोंका मैल, कानोंका मैल, दान्तोंका मैल, नखोंका मैल निकाले, विशुद्ध करै. ३

भावार्थ – अपनी शुश्रूषा निमित्त उक्त कार्य करनेकी मना है कारण—इसीसे प्रमादकी वृद्धि होती है, और स्वाध्यायादि धर्म कार्योंमें विघ्न होता है

(७०) „ अपने शरीरसे पसेवा, मैल, जमा हुवा पसीना मैलको निकाले, विशुद्ध करे, करावे, करतेको अच्छा समझे. ३ भावना पूर्ववत्.

(७१) „ ग्रामानुग्राम विहार करते समय शीतोष्ण निवारणार्थे शिरपर छत्र धारण करै. ३

यहांतक शुश्रूषा सम्बन्धी २६ बोल हुवे है.

(७२) „ सनका डोरा, कपासका डोरा, ऊनका डोरा, अर्कतूलका डोरा, यावत् वनस्पतिके डोरोंसे वशीकरण करे. ३

(७३) „ गृहस्थोंके घरमें, घरके द्वारमें, घरके प्रतिद्वारमें, घरके अन्दरके द्वारमें, घरकी पोलमें, घरके चौकमें, घरके अन्य स्थानोंमें लघुनीत (पैसाब) बडीनीत (टट्टी) परठे, परठावे, परठतेको अच्छा समझे.

(७४) एवं श्मशानमें मुरदेको जलाया हो, उसकी रातमें मुरदेकी विश्रामकी जगहा, मुरदेकी स्थूभ बनाइ हो, उस जगहा, मुरदेकी पंक्ति (कबरों), मुरदेकी छत्री बनाइ वहांपर प्रांट टटी, पैसाब करे, कराये, करतेको अच्छा समझे

(७५) कोलसे बनानेकी जगहा, साज्जीखारादिके स्थान गौ, बलहादिके रोग कारणसे डाभ देते हो उस स्थानमें, तुसोंका ढेर करते हो उस स्थानमें, धानके खळे बनाते हो उस स्थानमें, टटी पैसाब करे. ३

(७६ सचित्त पाणीका कीचड हो, कर्दम हो, नीलण, फूलण हो ऐसे स्थानमें टटी पैसाब करे. ३

(७७) नवी बनी गोशाला, नवी खोदी हुइ मट्टी, मट्टीकी खान, गृहस्थलोगों अपने काममें ली हो, या न भी ली हो ऐसे स्थानमें टटी पैसाब करे. ३

(७८) उंबरके वृक्षोंका फल पडा हो, एवं वडवृक्ष, पीपल वृक्षोंके नीचे टटी पैसाब करे ३ इन वृक्षोंका बीज सुक्षम औ बहुत होते है

(७९ इक्षु साटा के क्षेत्रमें, शाल्यादि धान्यके क्षेत्रमें, कसुंबादि फूलोंके वनमें, कपासादिके स्थानमें टटी पैसाब करे. ३

(८०) मडक वनस्पति, साक व० मूला व० मालक व० खार व० बहु बीजा व० जीरा व० दमणय व मरुग वनस्पतिके स्थानोंमें टटी पैसाब करे. ३

८१ अशोकवन, सीलवन, चम्पक वन, आम्रवन, अन्य भी तथा प्रकारका जहांपर बहुतसे पत्र, पुष्प, फल, बीजादि जीवोंकी विराधना होती हो, ऐसे स्थानमें टटी पैसाब करे. ३ तथा उक्त स्थानोंमें टटी पैसाब परठे, परिठावे, परिठवेको अच्छा समझे.

भावार्थ—इसप्रकार आहार निहार करनेसे मुनि कुर्भमयांधी कर्मका उपार्जन करता है वास्ते इसी पेशावर्क लीये दूर जाना चाहिये

(८२) „ अपने निश्रायें तथा परनिश्रायें मात्रादिका भाजनमें दिनको, रात्रिको, या विकालमें अतिवाधासे पीडित, उस मात्रादिके लघुनीत, बड़ीनीत कर सूर्य अनुदय अर्थात् जहां-पर दिनको सूर्यका प्रकाश नहीं पड़ते हो, ऐसा आच्छादित स्थानपर परठे, परिठावे, परिठतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—इसप्रकार जहां सूर्यका प्रकाश पड़ते हो, और भावसे परिठनेवाले मुनिके हृदय कमलमें ज्ञान (परिठनेकी विधि) सूर्य प्रकाश होता हो—ऐसे दोनों प्रकारके सूर्योदय न हुवा मुनि परठे तो प्रायश्चितका भागी होता है. कारण—रात्रिमें मात्रादि कर साधु सूर्योदय हो इतना दखत रख नहीं सकते हैं क्योंकि उस पेशाब आदिमें असंख्य संमूर्छिम जीवोंका उत्पत्ति होता है इस वास्ते उक्त अर्थ भगवंतोने प्रगट करमा है.

इस ८२ बोलोंसे एक भी बोल सेवन करनेवाले साधु साध्वीयोंको लघुमासिक प्रायश्चित होता है विधि देखो वीसवां उद्देशामें.

इति श्री निशिथसूत्र-तीसरा उद्देशाका संक्षिप्त सार.

---

(४) श्री निशिथसूत्र—चौथा उद्देशा.

(१) 'जो कोइ साधु साध्वीयों' राजाको अपने वश करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

(२) एवं राजाका अर्चन-पूजन करे (

(३) एवं अथवा प्रकारसे वश, पूजन, आदरसे गुणानुवादादि बोलना. (

(२५) ,, अगर कोइ साध्वीयोंके विशेष कारण होनेपर साधुको साध्वीयोंके उपाश्रय जाना पडे तो अविधि (पहले साध्वीयोंको सावचेत होने योग संकेत करे नहीं) से प्रवेश करे. १

भावार्थ—एकदम चले जानेसे न जाने साध्वीयों किस अवस्थामें बैठी है.

(२६) ,, साध्वी आनेके रस्तेपर साधु दंडा, लट्ठी, रजोहरण, मुखवस्त्रिकादि कोइ भी छोटी बडी वस्तु रखे. १

भावार्थ—अगर साधु ऐसा जाने कि—यह रखे हुवे पदार्थको ओलंघके साध्वी आवेगी, तो उसको कहेंगे—हे साध्वी ! क्या इसी माफिक ही पुस्तक प्रतिलेखन करते होंगे ? इत्यादि हांसी का अपमान करे. ६

(२७) ,, क्लेशकारी नये नये क्लेशको उत्पन्न करे. १

(२८) ,, पुराणा क्लेशको खमतखामणा कर उपशांत कर दीया हो, उसे उदीरणा कर क्लेशको प्रज्वलित बनावे. १

(२९) ,, मुंह फाड फाडके हसे. १

(३०) ,, पासत्थे [illegible] को अपना साधु देवे [illegible] बनावे. [illegible] साधु देके [illegible] करे १

(३१) एवं उनके साधुको लेवे. १

३२-३३ एवं दो अलापक 'उसन्ना' [illegible]

(३४-३५) एवं दो अलापक 'कुशीलीये' [illegible]

३६-३७ एवं दो अलापक 'नितिया' [illegible]

भोजन करनेवाले तथा नित्य विना कारण एक स्थानपर निवास करनेवालोंका समझना.

(३८—३९) एवं दो अलापक 'संसत्या' संवेगीके पास संवेगी और पासत्थायोंके पास पासत्था बननेवालोंका समझना.

(४०) ,, कचे पाणीसे 'संसक्त' पाणीसे भींजे हुवे पैसे हाथोंसे भाजनमेंसे चाटुडी (कुरची) आदिसे आहार पाणी ग्रहन करे. ३ स्निग्ध (पुरा सुका न हो) सचित्त रजसे, सचित्त मट्टीसे, ओसके पाणीसे, नीमकसे, हरतालसे, मणसील (बोहल), पीली मट्टी, गेरुसे, खडीसे, हींगलुसे, अञ्जनसे, (सचित्त मट्टीका) लोद्रसे, कुकस, तत्कालीन आटासे, कन्दसे, मूलसे, अद्रकसे, पुष्पसे, कोष्ठकादि—एवं २१ पदार्थ सचित्त, जीव सहित हो, उसे हाथ खरडा हो, तथा सघट्टा होते हुवे आहार पाणी ग्रहन करे. ३ यह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है इसी माफिक २१ पदार्थोंसे भाजन खरडा हुवा हो उस भाजनसे आहार पाणी ग्रहन करे ३ एवं ८१

(८२) ,, ग्रामरक्षक पटेलादिको अपने वश करे, अर्चन करे, अच्छा करे, अर्थी बने. एवं इसी उद्देशाके प्रारंभमें राजाके च्यार सूत्र कहा था. इसी माफिक समझना. एवं देशके रक्षको का च्यार सूत्र. एवं सीमाके रक्षकोंका च्यार सूत्र एवं राज रक्षकोंका च्यार सूत्र. एवं सर्व रक्षकोंका च्यार सूत्र. कुल २० सूत्र. भावना पूर्ववत्. १०१

(१०२) ,, अन्योन्य आपसमें एक साधु दुसरे साधुका पग दबावे-चांपे. एवं यावत् एक दुसरे साधुके ग्रामानुग्राम विहार करते हुवे के शिरपर छत्र धारण करे, करावे. जो तीसरा उद्देशामें कहा है, इसी माफिक यहां भी कहना. परन्तु यहा पर

समान सूत्र साधुवोंके लीये हैं. और यहांपर विशेष सूत्र साधु आपसमें एक दुसरेके पांवादि दावे-चांपे.

भावार्थ—विशेष कारण विना स्वाध्याय ध्यान न करते हुवे दबाने-चंपानेवाला साधु प्रायश्चित्तका भागी होता है. अगर किसी प्रकारका कारण हो तो एक साधु दूसरे साधुकी वैयावच्च करनेसे महा निर्जरा होती है. ५६ सूत्र मिलानेसे १५७ सूत्र हुवे.

(१५८) ,, उपधि प्रतिलेखनके अन्तमें लघुनीत, वडीनीत परिठणेकी भूमिकाकों प्रतिलेखन न करे. ३

भावार्थ—रात्रि समय परिठनेका प्रयोजन होनेपर अगर दिनको न देखी भूमिकापर पैसाब आदि परिठनेसे अनेक त्रस स्थावर प्राणीयोंकी घात होती है.

(१५९) भूमिकाके भिन्न भिन्न तीन स्थान प्रतिलेखन न करे. ३ पहेले रात्रिमें, मध्य रात्रिमें, अन्त रात्रिमें परिठनेके लीये.

(१६०) ,, स्वल्प भूमिकापर टटी पैसाव परठे. ३ स्वल्प भूमिका होनेसे जल्दीसे सुक नहीं सके. उसमें जीवोत्पत्ति होती हैं. वास्ते विशाल भूमिपर परठे.

(१६१) ,, अविधिसे परठे. ३

(१६२) ,, टटी पैसाव जाकर साफ न करे, न करावे, न करते हुवेको अच्छा समझे. उसे प्रायश्चित्त होता है.

(१६३) टटी पैसाव कर पाणीसे साफ न करके काष्ठ, कंकरा, अंगुली तथा शीला आदिसे साफ करे, करावे, करनेको अच्छा समझे. वह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है. अर्थात् मलकी शुद्धि जल हीसे होती है. इसी वास्ते ही जैनमुनि पाणीमें चुना

भावार्थ—ब्रह्मचारी को दुराचारीकी संगत करनेसे तो लो-कोंमें अप्रतीतिका कारण होता. इति.

ऊपर लिखे १९८ बोलोंसे कोई भी बोल साधु साध्वी सेवन करेंगे तो लघु मासिक प्रायश्चित्तके भागी होंगे. प्रायश्चित्तकी विधि बीसवां उद्देशामें देखो.

इति श्री निशिथसूत्र—चौथा उद्देशाका संक्षिप्त सार.

—✻—

(५) श्री निशिथसूत्र—पांचवां उद्देशा.

(१) 'जो कोई साधु साध्वी' सचित्त वृक्षका मूल-वृक्षका मूल जमीनमें रहता है, कन्द (स्कंदो) जमीनमें पसरती है. स्कन्ध-जमीनके उपर जिसका मूल पेड कहते है. उस मूल पेडसे चोतरफ च्यार हाथ जमीन सचित्त रहती है. कारण—उस जमीनके नीचे कन्द (स्कंदो) पसरी हुइ है. वहांपर सचित्त वृक्षका मूल कहा है, यह उसी अपेक्षा है कि पसरी हुइ स्कंदो सदा वह मूल उपरकी सचित्त भूमि उपर कार्योत्सर्ग करना, संस्तारक बिछाना और बैठना-यह कार्य करे. ३

(२) एवं वहां खडा होके एक वार वृक्षको अवलोकन करे सदा वार वार देखे. ३

(३) एवं वहांपर बैठके असनादि च्यार आहार करे.

(४) एवं टट्टी पेसाब करे. ३

(५) एवं स्वाध्याय पाठ करे. ३

(६) एवं शिष्यादिको ज्ञान पढावे. ३

(७) एवं अनुज्ञा देवे. ३

(८) एवं आगमोंकी वाचना देवे. ३

(९) एवं आगमोंकी वाचना लेवे. ३

(१०) एवं पढे हुवे ज्ञानकी आवृत्ति करे. ३

भावार्थ—यहस्थान जीव सहित है. यहां बैठके कोइ भी कार्य नहीं करना चाहिये, अगर ऐसे सचित्त स्थानपर बैठके उक्त कार्य कोइ भी साधु करेगा, तो प्रायश्चित्तका भागी होगा.

(११) „ अपनी चद्दर अन्य तीर्थी तथा उन्होंके गृहस्थोंके पास सीलाये. ३

(१२) एवं अपनी चद्दर दीर्घ लंबी अर्थात् परिमाणसे अधिक करे. ३

(१३) „ नियके पत्ते, पोटल वृक्षके पत्ते, बिल वृक्षके पत्ते शीतल पाणीसे, गरम पाणीसे धोके प्रक्षालके साफ करके भोजन करे. ३ यह सूत्र कोइ विशेष अरणीयादिके प्रसंगका है.

(१४) „ कारणवशात् गरथीका रजोहरण लेनेका काम पडे.* मुनि गृहस्थोंको कहे कि—तुमारा रजोहरण हम रात्रिमें वापिस दे देंगे. ऐसा करार करनेपर रात्रिमें नहीं देवे. ३

(१५) एव दिनका करार कर दिनको नहीं देवे ३

भावार्थ—इसमें भाषाकी स्खलना होती है मृषावाद लगता है. वास्ते मुनिको पेस्तरसे ऐसा समय करार ही नहीं करना चाहिये.

---

* कोइ तस्कर मुनिका रजोहरण चुराके ले गया, [illegible] है कि—मैं दिनको लज्जाका मारा दे नहीं सकता परन्तु रात्रिके समय [illegible] दे जाउंगा. ऐसी हालतमें गृहस्थोंसे करार कर मुनि रजोहरण [illegible] द्वारा रात्रिमें देवुंगा.

(१६-१७) एवं दो सूत्र शय्यातर संबंधी रजोहरणका भी समझना. जैसा रजोहरणका च्यार सूत्र कहा है, इसी माफिक दांडो, लाठी, रापटी, बांसकी सूइका भी च्यार सूत्र समझना. एवं २१.

(२२) .. सरवीना शय्या, संस्तारक, गृहस्थोंको वापिस सुप्रत कर दीया, फिर उसपर बैठे आसन लगावे. ३ अगर बैठना हो तो दुसरी दफे आज्ञा लेना चाहिये. नहीं तो चोरी लगती है.

(२३) एवं शय्यातर संबंधी.

(२४) .. सण उन, कपासकी लंबी दोरी मेडे करे. ३

(२५) .. सचित्त (जीव सहित) काष्ट, वांस, वेतादिका दांडा करे. ३

(२६) एवं धारण करे (रखे)

(२७) एवं उसे काममें लेवे.

भावार्थ—हरा झाडका जीव सहित दंडादि करने रखने और काममें लेनेकी मना है. इसे जीवविराधना होती है. इसी माफिक चित्रवाला दंडा करे, रखे, वापरे. २८-३०

इसी माफिक विचित्र अर्थात् रंग बेरंगा दंडा करे, रखे, वापरे. यह साधु प्रायश्चित्तका भागी होता है. ३१-३३

(३४) .. ग्राम नगर यावत् सन्निवेशकी नवीन स्थापना हुइ हो, वहांपर जाके साधु अशनादि च्यार आहार ग्रहन करे. ३

भावार्थ—अगर कोइ संग्रामादिके कारणसे लोक नया ग्रामादिककी स्थापना करते समय अमिंगल मांगल करते है, वहां मुनि जानेसे शुभाशुभका स्याल तथा लोगोंको शंका होती है

(६१) ,, साधु साध्वीयोंके उद्देश (निमित्त) बनाये हुवे मकानमें साधु साध्वी प्रवेश करे. ३

(६२) एवं साधुके निमित्त मकान लींपाया हो, छप्परबंधी कराइ हो, नया दरवाजा कराया हो—उस मकानमें प्रवेश करे. ३

(६३) एवं अन्दरसे कोइ भी वस्तु साधुवोंके लीये बाहार निकाले, काजा, कचरा निकाल साफ करे, उस मकानमें मुनि प्रवेश करे, वहां ठहरे. ३

भावार्थ—जहां साधुवोंके लीये जीवादिका बाद हो ऐसा मकानमें साधु ठहरे, वह प्रायश्चित्तका भागी होता है.

(६४) ,, जिस साधुवोंके साथ अपना 'संभोग' आहारादि लेना देना नहीं है, और क्षांत्यादि गुण तथा समाचारी मिलती नहीं है, उसको संभोग करनेका कहे. ३

(६५) ,, वस्त्र, पात्र, कम्बल, रजोहरण अच्छा मजबुत बहुतकाल चलने योग्य है. उसको फाडतोड टुकडे कर परठे, परठावे. ३

(६६) एवं तुंबाका पात्र, काष्ठका पात्र, मट्टीका पात्र मजबुत रखने योग्य, बहुत काल चलने योग्यको तोडफोड परठे. ३

(६७) एवं दंडा, लट्ठी, खापटी, वांससूचि, चलने योग्यको परठे. ३

भावार्थ—किसी ग्रामादिमें सामान्य वस्तु मिली हो, और बडे नगरमें वह ही वस्तु अच्छी मिलती हो, तब पुद्गलानंदी विचार करे—इसको तोडफोडके परठ दे, और अच्छी दुसरी वस्तु याच ले—इत्यादि परन्तु ऐसा करनेवाले साधुवोंको निर्दय कहा है. वह प्रायश्चित्तका भागी होता है.

(७८) ,, रजोहरण उपर सुवे, अर्थात् रजोहरणको वेअदवीसे रखे, रखावे, रखतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—मोक्षमार्ग साधनेमें मुनिपद प्रधान माना गया है. मुनिपदकी पहेचान, मुनि के वेषसे होती है. मुनिवेषमें रजोहरण. मुखवस्त्रिका मुख्य है. इसका बहुमान करनेसे मुनिपदका बहुमान होता है. इसकी वेअदवी करनेसे मुनिपदकी वेअदवी होती है, वह जीव दुर्लभबोधी होता है. भवान्तरमें उसको रजोहरण मुखवस्त्रिका मिलना दुर्लभ होगा. वास्ते इसका आदर, सत्कार, विनय, भक्ति करना भव्यात्मावोंका मुख्य कर्तव्य है.

उपर लिखे ७८ वोलोंसे कोइ भी बोल सेवन करनेवाले मुनियोंको लघु मासिक प्रायश्चित्त होता है. प्रायश्चित्त विधि देखो वीसवां उद्देशामें.

इति श्री निशियसूत्र—पांचवा उद्देशाका संक्षिप्त सार.

(६–७) श्री निशिथसूत्र—छट्टा—सातवां उद्देशा.

शास्त्रकारोंने कर्मोंकी विचित्र गति बतलाइ है. जिसमें भी मोहनीय कर्मका तो रंग ढंग कुछ अजब तरहका ही बतलाया है. बडे बडे साधधारी जो आत्मकल्याणकी श्रेणिपर चढते हुवेको भी मोहनीय कर्म नीचे गिरा देता है. जैसे आर्द्रकुमार. अरनिकमुनि, नंदिषेण, कंडरीकादि.

उंचा चढना और नीचा गिरना—इसमें मुख्य कारण संगतका है. सत्संग करनेसे जीव उच्च श्रेणीपर चढता है, कुसंगत करनेसे जीव नीचा गिरता है सुसंगत और कुसंगत—दोनोंका स्वरूपको

सम्यक्प्रकारसे जानना यह ज्ञानावरणीय कर्मका क्षयोपशम है. जाननेके बादमें कुसंगतका त्याग करना और सत्संगका परिचय करना यह मोहनीय कर्मका क्षयोपशम है. इस जगह शास्त्रकारोंने कुसंगतके कारणको जानके परित्याग करणेका ही निर्देश कीया है.

अगर दीर्घकालकी वासनासे वासित मुनि अपनी आत्म रमणता करते हुवे के परिणाम कभी गिर पडे तथा अकृत्य कार्य करे, उसको भी प्रायश्चित्त ले अपनी आत्माको निर्मल बनानेका प्रयत्न इस छट्ठे और सातवे उद्देशामें बतलाया गया है. जिसको देखना हो वह गुरुगमता पूर्वक धारण कीये हुवे ज्ञानवाले महात्माओंसे सुने. इस दोनों उद्देशोंकी भाषा करणी इस वास्ते ही मुलतवी रख गइ है. इति ६-७

इस दोनों उद्देशोंके बोलोंको सेवन करनेवाले साधु साध्वीयोंको गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होगा

इति श्री लघुनिशिथ सूत्रका छठा सातवां उद्देशा.

---

(८) श्री निशिथसूत्रका आठवां उद्देशा.

(१) 'जो कोइ साधु साध्वी' मुसाफिरखाना, उद्यान, गृहस्थोंका घर यावत् तापसोंके आश्रम इतने स्थानोंमें मुनि अकेली स्त्री के साथ विहार करे; स्वाध्याय करे अशनादि च्यार प्रकारका आहार करे, टटी पैसाब जावे, और भी कोइ निष्टुर विषय विकार संबंधी कथा वार्ता करे. १

(२) एवं उद्यान, उद्यानके घर (बंगला), उद्यानकी शाला, निर्यान, घर—शालामें अकेला साधु अकेली स्त्रीके साथ पूर्वोक्त कार्य करे. १

(३) ग्रामादिके कोट, अट्टाली, आठ हाथ परिमाण र-हस्ता, बुरजों, गढ, दरवाजादि स्थानोंमें अकेला साधु अकेली स्त्री के साथ उक्त कार्यो करे. ३

(४) पाणीके स्थान तलाव, कुँवे, नदीपर, पाणी लानेके रहस्तेपर, पाणी आनेकी नेहरमें, पाणीका तीरपर, पाणीके उंच स्थानके मकानमें अकेली स्त्रीसे उक्त कार्यो करे. ३

(५) शून्य घर, शून्य शाला, भग्न घर, भग्नशला, कुडाघर, कोष्ठागार आदि स्थानोंमें अकेली स्त्री साथ उक्त कार्यो करे. ३

(६) तृणघर, तृणशाला, तुसोंके घर, तुसोंकीशाला, भुं-साका घर, भुंसाकी शालामें--अकेली स्त्रीके साथ उक्त कार्यो करे. ३

(७) रथशाला, रथघर, युगपात (मैना) की शाला, घरा-दिमें अकेली स्त्रीके साथ उक्त कार्यो करे. ३

(८) किरयाणाकी शाला, घर, वरतनोंकी शाला-घरमें अकेली स्त्री के साथ उक्त कार्यो करे. ३

(९) बैलोंकी शाला-घर, तथा महा कुटुंबवालोंके विलास मकानादिमें अकेला स्त्री के साथ उक्त कार्यो करे. ३

भावार्थ—किसी स्थानपर भी अकेली स्त्री के साथ मुनि कथा वार्त्ता करेगा, तो लोगोंको अविश्वास होगा. मनोवृत्ति म-लिन होगी. इत्यादि अनेक दोषोंकी उत्पत्तिका संभव है. वास्ते शास्त्रकारोंने मना कीया है.

(१०) रात्रिके समय तथा विकाल संध्या (श्याम) समय अनेक स्त्रीयोंकी अन्दर, स्त्रीयोंसे संसक्त-स्त्रीयोंके परिवारसे प्रवृत्त होके अपरिमित कथा कहे. ३

भावार्थ—दिनको भी स्त्रीयोंका परिचय करना मना है, तो

करने पर भी गृहस्थ नहीं जाता हो तो उसकी निश्रायसे मकानसे बाहार निकलना तथा प्रवेश करना नहीं कल्पै. अगर ऐसा करे तो मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है.

(१५) ,, राजा—(प्रधान, पुरोहित, हाकिम, कोटवाल, और नगरशेट संयुक्त) जाति, कुल, उत्तम ऐसा क्षत्रिय जातिका राजा, जिसके राज्याभिषेकके समय अपने गोत्रजोंको भोजन कराने निमित्त तथा किसी प्रकारके महोत्सव निमित्त अशनादि च्यार प्रकारका आहार निपजाया (तैयार कराया), उस अशनादि च्यार प्रकारका आहारसे साधु साध्वी आहारादि ग्रहन करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—द्रव्यसे वहां जानेसे लघुता होवे, लोलुपता वढे, बहुतसे भिक्षुक एकत्र होनेसे वस्त्र, पात्र, शरीरकी विराधना होवे. भावसे अपना आचारमें खलल पहुंचे. शुभाशुभ होनेसे साधुवों पर अभावका कारन होवे इत्यादि अनेक दोषोंका संभव है. वास्ते मुनि ऐसा आहारादि ग्रहन न करे. अगर कोइ आज्ञा उल्लंघन करेगा, वह इस प्रायश्चित्तका भागी होगा.

(१६) एवं राजाकी उत्तरशाला अर्थात् बैठनेकी कचेरी तथा अन्दरका घरकी अन्दरसे अशनादि च्यार आहार ग्रहन करे. ३

(१७) अश्वशाला, हाथीशाला, विचार करनेकी शाला, गुप्त सलाह करनेकी शाला, रहस्यकी वार्ता करनेकी शाला, मैथुन कर्म करनेकी शाला, उक्त स्थानोंमें जाते हुवेका अशनादि च्यार आहार ग्रहन करे. ३

(१८) ,, संग्रह कीया हुवा, संग्रह करते हुए पक्वान्नादि, तथा मेवा मिष्टान्नादि और दुध, दहीं, मक्खन, घृत, गुड, खांड, सक्कर, मिश्री, और भी भोजनकी जाति ग्रहन करे. ३

(१९) ,, खातों पीतों बचा हुवा आहार देतों, भेटतों, बचा हुवा आहार, नाखतों बचा हुवा आहार, अन्य तीर्थीयोंके निमित्त, कृपणोंके निमित्त, गरीब लोगोंके निमित्त—ऐसा आहारादि ग्रहन करे, करावे, करतेको अच्छा समझे. भावना पूर्ववत् पंद्रहवां सूत्रकी माफिक समझना.

उपर लिखे १९ बोलोंसे कोइ भी बोल, साधु साध्वी सेवन करेगा, उसको गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित होगा, प्रायश्चित विधि देखो बीसवां उद्देशामें.

इति श्री निशिथसूत्र—आठवां उद्देशाका संक्षिप्त सार.

(९) श्री निशिथसूत्रका नौंवां उद्देशा.

(१) 'जो कोइ साधु साध्वी' राजपिंड (अशनादि आहार) ग्रहन करे, ग्रहन करावे ग्रहन करते हुयेको अच्छा समझे.

भावार्थ—सेनापति, प्रधान, पुरोहित नगरशेठ और सार्थवाह—इस पांच अंग संयुक्तको राजा कहा जाता है

(१) उन्होंके राज्याभिषेक समयका आहार लेनेसे शुभाशुभ होनेमें साधुवोंका निमित्त कारण रहता है.

(२) राजाका बलिष्ट आहार विकारक होता है. और राजाका आहार बचे, उसमें रंका लोगोंका विभाग होता है. वह आहार लेनेसे उन लोगोंको अंतरायका कारण होता है. एवं राजपिंड भोगवे. ३

(३) ,, राजाके अन्तेउर (अनानागृह) में प्रवेश करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

वांसपर खेलनेवाले, मल्ल--मुष्टियुद्ध करनेवाले, भांड-कुचेष्टा करनेवाले, कथा कहनेवाले, पावडे जोड जोड गानेवाले, वांदरोंकी माफिक कूदनेवाले, खेल तमासा करनेवाले, छत्र धरनेवाले— इन्होंके लीये अशनादि आहार बनाया हो. उस आहारसे साधु ग्रहन करे. ३ कारण—अन्तरायका कारण होता है.

(२३) „ राज्याभिषेक समय, जो अश्व पालनेवाले, हस्ती पालनेवाले, महिष पालनेवाले, वृषभ पालनेवाले. एवं सिंह, व्याघ्र, छाली मृग, श्वान, सूयर, भेड, कुकडा, तीतर, बटेवर, लावग, चर्ले, हंस, मयूर, शुकादि पोषण करनेवाले. इन्हीके मर्दन करनेवाले, तथा इसिको फिराने खीलानेवाले इन्होंके लीये च्यार प्रकारका आहार निष्पन्न कीया हुवा आहार साधु ग्रहन करे, कराये, करतेको अच्छा समझे वह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है.

(२४) „ राज्याभिषेक समय जो सार्थवाहकके लीये, पगचंपी करनेवालोंके लीये, मर्दन करनेवालोंके लीये, तैलादिका मालीस करनेवालोंके लीये, स्नान मज्जन करानेवालोंके लीये, शृंगारसज्जानेवालोंके लीये, चम्मर, छत्र, वस्त्र भूषण धारण करानेवालोंके लीये, दीपक, तरवार, धनुष्य, भालादि धारण करनेवालोंके लीये, अशनादि च्यार प्रकारका आहार बनाया, उस आहारसे मुनि आहार ग्रहन करे भावना पूर्ववत्

(२५) „ राज्याभिषेक समय जो वृद्ध पुरुषोंके लीये कुब्ज नपुंसकोंके लीये, कंचुकी पुरुषोंके लीये, द्वारपालोंके लीये, दंड धारकोंके लीये बनाया आहार साधु ग्रहन करे ३

(२६) „ राज्याभिषेक समय जो कुब्ज दासीयोंके लीये, यावत् पारसदेशकी दासीयोंके लीये बनाया हुवा आहार, मुनि ग्रहन करे. ३ भावना पूर्ववत् अन्तराय होता है.

इन २६ बोलोंसे कोइ भी बोल साधु साध्वीयों सेवन करे करावे, करतेको अनुमोदन करे, अर्थात् अच्छा समझे. उस साधु साध्वीयोंको गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित होता प्रायश्चित विधि देखो वीसवा उदेशामें.

इति श्री निशिथसूत्र—नौवा उद्देशाका संक्षिप्त सार.

---

(१०) श्री निशिथसूत्र—दशवा उद्देशाः

(१) 'जो कोइ साधु साध्वी' अपने आचार्य भगवानको तथा रत्नत्रयादिसे वृद्ध मुनियोंको कठोर (स्नेह रहित) वचन बोले. ३

(२) „ अपने आचार्य भगवान् तथा रत्नत्रयादिसे वृद्ध मुनियोंको कर्कश (मर्मभेदी) वचन बोले. ३

(३) एवं कठोर (कर्कश) कारी वचन बोले. ३

(४) एवं आचार्य भगवानकी आशातना करे. ३

भावार्थ—आशातना मिथ्यात्वका कारण है.

(५) „ अनन्तकाय संयुक्त आहार करे. ३

भावार्थ—वस्तु अचित्त है. परन्तु नील. फूल. कन्द. मुलादिसे प्रतिबद्ध है. ऐसा आहार करनेवाला प्रायश्चितका भागी होता है.

(६) „ आधाकर्मी आहार (साधुके लीये ही बनाया गया हो) को ग्रहन करे. ३

(७) „ गतकालमें लाभालाभ सुख दुःख हुवा. उसका निमित्त प्रकाशे. ३

(८) एवं वर्त्तमान कालका.

(९) एवं अनागत कालका निमित्त कहे, प्रकाश करे.

भावार्थ—निमित्त प्रकाश करनेसे स्वाध्याय ध्यानमें विघ्न होवे, राग द्वेषकी वृद्धि होवे, अप्रतीतिका कारण-इत्यादि दोषों का संभव है.

(१०) ,, अन्य किसी आचार्यका शिष्यको भरममें (भ्रममें) डाल देवे, चित्तको व्यग्र कर अपनी तर्फ रखनेकी कोशीश करे. ३

(११) ,, एवं प्रशिष्यको भरम (भ्रम) में डाल, दिशामुग्ध बनाके अपने साथ ले जावे तथा वस्त्र पात्र, ज्ञानसूत्रादिका लोभ दे, भरमाके ले जावे. ३

(१२) ,, किसी आचार्यके पास कोइ गृहस्थ दीक्षा लेता हो, उसको आचार्यजीका अवगुणवाद बोले (यह तो लघु है, हीनाचारी है, अज्ञान है-इत्यादि) उस दीक्षा लेनेवालाका चित्त अपनी तर्फ आकर्षित करे. ३

(१३) एवं एक आचार्यसे अरुचि कराके दुसरोंके साथ भेजया दे.

भावार्थ—ऐसा अकृत्य कार्य करनेसे तीसरा महाव्रतका भंग होता है साधुवोंकी प्रतीति नहीं रहती है. एक ऐसा कार्य करनेसे दुसरा भी देखादेखी तथा द्वेषके मारे करेगा, तो साधुमर्यादा तथा तीर्थंकरोंके मार्गका भंग होगा

(१४) ,, साधु साध्वीयोंके आपसमें क्लेश हो गया हो तो उस क्लेशका कारण प्रगट कीये विना, आलोचना कीया विगर, प्रायश्चित लीये विगर, खमतखामणा कीया विगर तीन रात्रिके उपरांत रहे तथा साथमें भोजन करे ३

भावार्थ—जिसका समताभावना रहेगा, तो कारण पाके फिर भी उस क्लेशकी उदीरणा होगा.

(१५) ,, क्लेश करके अन्य आचार्य पासमें आये हुवेको तीन रात्रिसे अधिक अपने पास रखे १

भावार्थ—आये हुवे साधुको मधुर वचनोंसे समझावे कि—हे भद्र! तुमको तो जहां जावेगा वहां ही संयम पालना है, तो फिर अपने आचार्यको ही क्यों छोडते हो. वापिस जावे, आचार्य महाराजकी वैयावच्च, विनय, भक्ति कर प्रसन्न करो. इत्यादि हित शिक्षा दे. क्लेशको उपशान्त बनाके वापिस उसी आचार्यके पास भेजना ऐसा कारणसे तीन रात्रि रख सक्ते हैं. ज्यादा रखे तो प्रायश्चितका भागी होता है.

(१६) ,, लघु प्रायश्चित्तवालेको गुरु प्रायश्चित कहै. २ द्वेषके कारणसे .

(१७) एवं गुरु प्रायश्चित्तवालेको लघु प्रायश्चित्त कहै. २ रागके कारणसे ।

(१८) एवं लघु प्रायश्चित्तवालेको गुरु प्रायश्चित्त देवे. ३

(१९) गुरु प्रायश्चित्तवालेको लघु प्रायश्चित्त देवे ३ भावना पूर्ववत्.

(२०) ,, लघु प्रायश्चित्त सेवन कीया हुवा साधुके साथ आहार पाणी करे. २

(२१) ,, लघु प्रायश्चित्तका स्थान सेवन कीया है, उसे आचार्य सुना है कि—अमुक साधुने लघु प्रायश्चित्त सेवन कीया है. फिर उनके साथ आहार पाणी करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

दोषित साधुवोंको हितबुद्धिसे आलोचना करवाके ही उन्होंके साथ आलाप संलाप करनेकी ही शास्त्रकारोंकी आज्ञा है.

(३३) ,, सूर्योदय होनेके बाद तथा सूर्य अस्त होने के पहला मुनियोंकी भिक्षावृत्ति है. साधु नीरोगी है, और सूर्योदय होनेमें तथा अस्त न होनेमें कुच्छ भी शंका नहीं है. उस समय भिक्षा ग्रहन कर, लायके भोजन करनेको बैठा, तथा भोजन करते वखत स्वयं अपनी मतिसे तथा दुसरे गृहस्थोंके वचन श्रवण करनेसे ख्याल हुवा कि—यह भिक्षा सूर्योदय पहला तथा सूर्य अस्त होनेके बाद में ग्रहन की गइ है. (अति बादल तथा पर्वतादिको व्याघातसे) ऐसी शंका होनेपर मुंहका भोजन थुंकके साफ करे, पात्राका पात्रामें रखे. हाथका हाथमें रखे. अर्थात् उस सब आहारको एकान्त निर्जीव भूमिपर विधिपूर्वक परठे, तो भगवानकी आज्ञाका अतिक्रम न हुवे, (परिणाम विशुद्ध है . अगर शंका होनेपर भी आप भोगवे तथा अन्य किसी साधुवोंको देवे, तो वह मुनि, रात्रिभोजनके दोषका भागी होता है. उसे चातुर्मासिक प्रायश्चित्त देना चाहिये.

(३४) ,, इसी माफिक साधु निरोगी है, परन्तु सूर्योदय होने मे तथा अस्त होनेमें शंका है, यह दो सूत्र निरोगीका कहा. इसी माफिक दो सूत्र रोगी साधुवोंका भी समझना. (३५-३६

भावार्थ—किसी आचार्यादिकी वैयावच्चमें शीघ्रतासे आना पडे, छोटे गामोंमें दिनभर भिक्षाका योग न बना, दिवसके अन्त में किसी नगरमें पहुंचे, उस समय बादल बहुत है, तथा पर्वतकी व्याघात होनेसे ऐसा मालुम होता है कि—अबी दिन होगा तथा पहले दिन भिक्षाका योग नहीं बना. दुसरे दिन सूर्योदय होते ही क्षुधा उपशमानेके लीये तथा विशेष पिपासा होनेसे,

भावार्थ—जितनी दवाइ मिले, उतनी लाके बीमारको देना-न मिलनेपर गवेषणा करना. गवेषणा करनेपर भी न मिले तो पश्चात्ताप करना. कारण बीमार साधुको यह शंका न हो कि सब साधु प्रमाद करते है. मेरे लीये दवाइ लानेका उद्यम भी नहीं करते है.

(४२) ,, प्रथम वर्षाऋतु-श्रावण कृष्णप्रतिपदामें ग्रामानुग्राम विहार करे. ३

(४३) ,, अपर्युषणको पर्युषण करे. ३

(४४) पर्युषणको पर्युषण न करे.

भावार्थ—आषाढ चौमासी प्रतिक्रमणसे ५० दिन भाद्रपद शुक्लपंचमीको पर्युषण होता है. पर्युषण प्रतिक्रमण करनेसे ७० दिनोंसे कार्तिक चातुर्मासिक प्रतिक्रमण होता है अगर वर्त्तमान चतुर्मासमें अधिक मास भी हो, तो उसे काल चूलिका मानना चाहिये।

(४५) ,, पर्युषण (सांवत्सरिक) प्रतिक्रमण समय गौके बालों जितने केश (बाल) शिरपर रखे. ३

भावार्थ—मुनियोंका सांवत्सरिक प्रतिक्रमण पहला शिरका लोच करना चाहिये।

(४६) ,, पर्युषण—संवत्सरीके दिन इतर स्वल्प बिन्दु मात्र आहार करे. ३

भावार्थ—संवत्सरीके दिन शक्ति सहित साधुवोंको चौविहार उपवास करना चाहिये.

(४७) ,, अन्य तीर्थीयों तथा अन्य तीर्थीयोंके गृहस्थोंके साथ पर्युषण करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

(३) एवं लोहाका पात्रमें भोजन करे तथा अन्य काममें लेवे. ३

(४) एवं तांबाका पात्र करे.

(५) धारे-रखे.

(६) भोगवे. ३

(७) एवं तरुवेका पात्रा करे.

(८) धारे.

(९) भोगवे. ३ एवं तीन सूत्र सीसाके पात्रोंका १०-११-१२. एवं तीन सूत्र कांसीके पात्रोंका १३-१४-१५. एवं तीन सूत्र रुपाके पात्रोंका १६-१७-१८. एवं तीन सूत्र सुवर्णके पात्रोंका १९-२०-२१. एवं जातिरुप पात्र २४. एवं मणिपात्रोंके तीन सूत्र. २५-२६-२७. एवं तीन सूत्र कनकपात्रोंका २८-२९-३०. दांत पात्रोंके ३३. सींग पात्रोंके ३६. एवं वस्त्र पात्रोंके ३९. एवं चर्म पात्रोंके तीन सूत्र ४२. एवं पत्थर पात्रके तीन सूत्र ४५. एवं अकरत्नोंके पात्रोंका तीन सूत्र ४८. एवं शंख पात्रोंके तीन सूत्र ५१. एवं वज्ररत्नों के पात्र करे, रखे, उपभोगमें लेवे. ३ इति ५४ सूत्र.

भावार्थ—मुनि पात्र रखते हैं. वह निर्ममत्व भावसे केवल संयमयात्रा निर्वाह करनेके लीये ही रखते हैं. उक्त पात्रो धातुके, ममत्वभाव बढानेवाले हैं. चौरादिका भय, सयम तथा आत्मघातके मुख्य कारण हैं. वास्ते उक्त पात्रोंकी मना करी हैं. जैसे ५४ सूत्रों उक्त पात्र निषेधके लीये कहा हैं, इसी माफिक ५४ सूत्र पात्रोंके बंधन करनेके निषेधका समझना. जैसे पात्रोंका लोहका बन्ध करे, लोहके बन्धनवाला पात्र रखे, लोहाका बन्धन वाला पात्र उपभोगमें लेवे यावत् वज्ररत्नों तकके सूत्र कहना. भावार्थ पूर्ववत्. १०८

(१७४) अन्य साधुओंको विपरीत बनावे. अर्थात् अपना स्वभाव संयममें रमणता करनेका है. इससे विपरीत बने ऐसी चेष्टा हिंसादि करे, करावे, करनेको सहायता देवे

(१७५) ,, कुंदलसे बजानेकी चेष्टा करे, करावे, करने कु देको सहायता देवे.

भावार्थ—यह, कुतूहल विपरीत होना यह बालचेष्टा है. संयमको बाधाकारी है. वास्ते साधुओंको पहलेसे ऐसा निमित्त कारणही नहीं रखना चाहिये. यह मोहनीय कर्मका उदय है इसको बढानेसे बढता जावे. और कम करनेसे कमती हो जावे. वास्ते ऐसे अकृत्य कार्य करनेवालोंको प्रायश्चित्त बतलाया है.

(१७६) ,, दोय राजाओंका विरुद्ध पक्ष चल रहा है, उस समय साधु साध्वीयों वारंवार गमनागमन करे ।

भावार्थ—राजाओंको शंका होती है कि—यह कोइ परपक्ष वाला साधुवेष धारण कर यहांका समाचार लेनेको आता होगा. तथा शुभाशुभका कारण होनेसे धर्मको—शासनको नुकशान होता है.

(१७७) ,, दिनका भोजन करनेवालोंका अवगुणवाद बोले. जैसे एक सूर्यमें दोय वार भोजन न करना इत्यादि

(१७८) ,, रात्रिभोजनका गुणानुवाद बोले जैसे रात्रि भोजन करना बहुत अच्छा है. इत्यादि.

(१७९) ,, पहले दिन भोजन ग्रहन कर दुसरे दिन दिनको भोजन करे. तथा पहली पोरसीमें भिक्षा ग्रहन कर चौथी पोरसीमें भोजन करे. २

(१८०) एवं दिनको अशनादि च्यार आहार ग्रहन कर रात्रिमें भोजन करे. ३

(१८१) रात्रिमें अशनादि च्यार आहार ग्रहन कर दिनको भोजन करे. ३

(१८२) एवं रात्रिमें अशनादि च्यार आहार ग्रहन कर रात्रिमें भोजन करे, कराये, करतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—रात्रिमें आहार ग्रहन करनेमें तथा रात्रिमें भोजन करनेमें सुक्ष्म जीवोंकी विराधना होती है. तथा प्रथम पोरसीमें लाया आहार, चरम पोरसीमें भोगवनेसे कल्पातिक्रम दोष लगता है.

(१८३) ,, कोइ गाढागाढी कारण विगर अशनादि च्यार प्रकारका आहार, रात्रिमें वास्सी रखे, रखावे, रखतेको अच्छा समझे.

(१८४) अति कारणसे अशनादि च्यार आहार, रात्रिमें वासी रखा हुवाको दुसरे दिन बिन्दुमात्र स्वयं भोगवे, अन्य साधुको देवे. ३

भावार्थ-कवी गोचरीमें आहार अधिक आगया, तथा गोचरी लानेके बाद साधुवोंको बुखारादि बेमारीके कारणसे आहार बढ गया, वखत कमती हो, परठनेका स्थान दूर है, तथा घनघोर वर्षाद वर्ष रही है. एसे कारणसे वह बचा हुवा आहार रह भी जावे तो उसको दुसरे दिन नहीं भोगवना चाहिये, रात्रि समय रखनेका अवसर हो, तो राखमें मसल देना चाहिये. ताके उनमें जीवोत्पत्ति न हो. अगर रात्रिवासी रहा हुवा अशनादि आहारको मुनि खानेकी इच्छा भी करे, उसे यह प्रायश्चित बतलाया है.

(१८५) ,, कोइ अनार्यलोक मांस, मदिरादिका भोजन स्वयं अपने लीये तथा आये हुवे पाहुणे (महिमान) के लीये

(१९२) , वस्त्र सहित साधु, वस्त्र सहित साध्वीयोंको अन्दर निवास करे. ३

(१९३) वर्ष वस्त्र सहित, वस्त्र रहित.

(१९४) वस्त्र रहित, वस्त्र सहित.

(१९५) वस्त्र रहित, वस्त्र रहितको अन्दर निवास करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—साधु, साध्वीयोंको किसी प्रकारसे सामेल रहना नहीं कल्पै. कारण-अधिक परिचय होनेसे अनेक तरहका नुकशान है. और स्थानांगसूत्रकी चतुर्भंगीके अभिप्राय-अगर कोइ विशेष कारण हो-जैसे किसी अनार्य ग्रामकी अन्दर अनार्य आदमीयोंकी बदमासी हो, ऐसे समय साध्वीयों एकतर्फसे आइ हो, दुसरी तर्फसे साधु आये हो, तो उस साध्वीके ब्रह्मचर्य रक्षण निमित्त, धर्मपुत्रके माफिक रह भी सक्ते है. तथा वस्त्रादि चौर हरण कीया हो एसा विशेष कारणसे रह भी सक्ते है.

(१९६) ,, रात्रिमें वासी रखके पीपीलिका उसका चूर्ण, सुठी चूर्ण, वलवालुणादि पदार्थ भोगवे. ३ तथा प्रथम पोरसीमें लाया चरम पोरसीमें भोगवे. ३

(१९७) ,, जो कोइ साधु साध्वी-बालमरण-जैसे पर्वतसे पडके मरजाना, मरुस्थलकी रेतीमें खुचके मरना, खाड-खामें पडके मरना. इस च्यारोंमें फस कर मरना, कीचडमें फस कर मरना, पाणीमें डुबके मरना, पाणीमें प्रवेश करना कूपादिमें कूदके मरना, अग्निमें प्रवेश कर तथा कूद कर अग्निमे पडके मरना, विषभक्षण कर मरना, शस्त्रसे घात कर मरना, पांच इन्द्रियोंके वश हो मरना, मनुष्य मरके मनुष्य होना.

जंगलसे आजाये, तो यह रसी (डोरी) यहां रखता हुं. तुम उन पशुओंको बांध देना, तथा यह बंधे हुये गौ, भैंसादि पशुओंको छोड देना. उस समय मुनि, मकानमें रहनेके कारण ऐसी दीनता लाये कि-अगर इसका कार्यमें नहीं करूंगा, तो मुझे मकानमें ठेरनेको न देगा, तथा मकानसे निकाल देगा, तो मैं कहां ठेरुंगा? ऐसी दीनवृत्तिको धारण कर, मुनि, उस गृहस्थका वचन स्वीकार कर, उक्त रसीयोंसे त्रस-प्राणी जीवोंको बांधे तथा छोडे तो प्रायश्चित्तका भागी होता है. तात्पर्य यह है कि—मुनियोंको सदैव निःस्पृहता-निर्भयता रखना चाहिये. मकान न मिले तो जंगलमें वृक्ष नीचे भी ठेर जाना, परन्तु ऐसा पराधीन हो, गृहस्थोंका कार्य न करना चाहिये.*

* इस पाठका तेरापन्थी लोग बिलकुल मिथ्या अर्थ कर जीवदयाके ऊपर कुठार चलाते हैं. वह लोग कहते हैं कि—'कल्पता' अनुसार साधु मुनि जीवोंको बांधे नहीं, और छोडे नहीं, तथा गृहस्थ लोग मरते हुए जीवोंको छोडते, उनसे अथवा समझानेमें मुनिको पाप लगता है. तो छोडानेवाले गृहस्थोंको पुण्य कहांसे! वरना पहुंच गये हैं कि—हजारों जीव भरा हुआ मकान [illegible] लग जाय तो कोई मकानवालोंको [illegible] फांसी लगावे, उसे बचानेमें भी महापाप लगता है ऐसा तेरापन्थियोंका कहना है

बुद्धिमान् विचार कर सकते हैं कि—भगवान् नेमिनाथ स्वामीने, अपने लिए [illegible] हजारों पशु, पक्षीयोंकी अनुकम्पा कर, उन्होंको जीवितदान दीया था [illegible] [illegible] करता हुआ नगरीको बचाया भगवान् [illegible] [illegible] प्राण बचाया, भगवान् वीरप्रभु गोशालाका बचाया [illegible] [illegible] [illegible] अनुकम्पाको [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] लोग [illegible] आरम्भ करते हैं कि—अनुकम्पा नहीं करना [illegible] [illegible] [illegible] भी देवे, तो [illegible] अनुकम्पा [illegible] [illegible] अनुकम्पाछत्तीसी देखो

(३) „ प्रत्याख्यान कर वारंवार भंग करे. ३

(४) „ प्रत्येक वनस्पति मिश्रित भोजन करे ३

(५) „ किसी कारणसे वर्म रखना पडे, तो भी रोमम-हित वर्म रखे.

(६) „ तृणका बना हुवा पीढा (पाट—बाजोट) पलालका बना पीढा, गोवरसे लीपा हुवा पीढा, काष्टका पीढा वेतका पीढा, गृहस्थोंके वस्त्रादिसे आच्छादित कीया हुवा पर स्वयं बैठे, अन्यको बैठाये, बैठते हुवेको अच्छा समझे

भावार्थ—उसमें जीवादि हो तो दृष्टिगोचर नहीं होते हैं. बैठनेसे जीवोंकी विराधना होती है. इत्यादि दोषका संभव है.

(७) „ साध्वीकी पीछोवडी (चद्दर) अन्यतीर्थी तथा उन्होंके गृहस्थोंसे सीवावे. ३ इसीसे अन्य तीर्थीयोंका परिचय बढता है, पराधीन होना पडता है. उसमें दोष लगता है इत्यादि.

(८) „ वर्मा, जितनी पृथ्वीकायका आरंभ स्वयं करे अन्यके पास आदेश दे करवावे. करते हुवेको अच्छा समझे एवं अप्काय, तेउकाय, वाउकाय, वनस्पतिकायका ९-१० ११-१२

(१३) „ सचित्त वृक्षपर चढे, चढावे, चढनेको अच्छा समझे.

(१४) „ गृहस्थोंके भाजनमें अशनादि आहार करे ३

(१५) „ गृहस्थोंका वस्त्र पेहरे. ३

भावार्थ—वस्त्र अपनी निश्रायसे याचके नहीं लीया है. गृहस्थोंका वस्त्र है, वापरके वापिस देवे, उस अपेक्षा है अर्थात् गृहस्थके वस्त्र मांगके ले लीया, फिर वापिस भी दे दीया. ऐसा करना साधुवोंको नहीं कल्पै.

(१६) ,, गृहस्थोंके पलंग, पथरणे आदिपर सुवे—शयन करे. ३

(१७) ,, गृहस्थोंको औषधि बतावे, गृहस्थोंके लीये औषधि करे.

(१८) ,, साधु भिक्षाको आनेके पेस्तर साधु निमित्त हाथ, धाटुडी, कडछी, भाजन कचे पाणीसे धोकर साधुको अशनादि च्यार आहार देवे. ऐसे साधु ग्रहन करे.

(१९) ,, अन्यतीर्थी तथा गृहस्थ, भिक्षा देते समय हाथ, धाटुडी, भाजनादि कचे पाणीसे धो देवे और साधु उसे ग्रहन करे. ३

भावार्थ—जीवोंकी विराधना होती है.

(२०) ,, काष्टके बनाये हुवे पुतलीये. अन्ध, गजादि. पत्थरके बनाये. धोडेके बनाये. लेप, लीटादिसे दांतके बनाखीलुने, मणि, चंद्रकांतादिसे बनाये हुये भूषणादि, पत्थरंबनाये मकानादि, ग्रंथित पुष्पमालादि. वेष्टित—धोटसे घोमिलाके पुष्पदडादि. सुवर्णादि धातु भरतसे बनाये पदार्थ बहुत पदार्थ एकत्र कर चित्र विचित्र पदार्थ, पत्र छेदन क अनेक मोदक (मादक) पदार्थ, जिसको देखनेसे मोहनी कर्मकी उदीरणा हो ऐसा पदार्थ देखनेकी अभिलाषा करे, करावे करतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—ऐसे पदार्थको देखनेकी अभिलाषा करनेसे स्वाध्याय ध्यानमें व्याघात, प्रमादकी वृद्धि, मोहनीय कर्मकी उदीरणा, यावत् संयमसे पतित होता है.

(२१) ,, काकडीयों उत्पन्न होनेके स्थान, 'काच्छा' वेलेआदि फलोत्पत्तिके स्थान, उत्पलादि कमलस्थान, पर्वतका

निर्झरना, उझरना, वापी, पुष्करिणी दीर्घ वापी, गुञ्जागर वापी, सर (तलाव), सरपंक्ति-आदि स्थानोंको नेत्रोंसे देखनेकी अभिलाषा करे. ३ भावना पूर्ववत्.

(२२) .. पर्वतके नदीके पासके काष्ठका केलीघर, गुनघर, वन-एक जातिका वृक्ष महान् अटवीका वन, पर्वत-विषम पर्वत.

२३ ग्राम, नगर, खेड, कर्बट मंडप द्रोणमुख, पट्टन, सोना—चांदीका आगर, तापसोंका आश्रम घोष निवास करनेका स्थान, यावत् सन्निवेश.

(२४) ग्रामादिमें किसी प्रकारका महोत्सव हो रहा हो

२५ ग्रामादिका वध (घात) हो रहा हो.

२६ ग्रामादिमें सुन्दर मार्ग बन रहा है. उसे देखनेकी इच्छा मन भी करे. ३

(२७ ग्रामादिमें दाह (अग्नि लगी हो) उसे देखनेकी अभिलाषा मनसे भी करे. ३

(२८) जहां अश्वक्रीडा, गजक्रीडा यावत् वृषभक्रीडा होती हो.

(२९) जहांपर चौरादिकी घात होती हो.

(३०) अश्वका युद्ध, गजयुद्ध, यावत् सूकर युद्ध होता हो

३१ जहांपर बहुत गौ, अश्व, गजादि रहते हो वैसी गौशालादि.

(३२) जहांपर राज्याभिषेकका स्थान है. महोत्सव होता है, इस समानका महोत्सव होता हो, मानानुमान तोल माप, करे, घोड दावनेका स्थान, वार्जीत्र, नाटक, नृत्य, तांता बजानेका स्थान, ताल, ढोल, मृदंग आदि गाना बजाना होता हो.

(३३) चौर, भील, पारधीयोंका उपद्रवस्थान, वैर, शा क्रोधादिसे हुवा उपद्रव युद्ध, महासंग्राम, क्लेशादिके स्थानोंके

(३४) नाना प्रकारके महोत्सवकी अन्दर बहुतसी स्त्रीयें पुरुषों, युवक, वृद्ध, मध्यम वयवाले, अनेक प्रकारके वस्त्र, भूषण चंदनादिसे शरीर अलंकृत बनाके केइ नृत्य, केइ गान, कें हास्य, विनोद, रमत, खेल, तमासा करते हुये, विविध प्रकारके अशनादि भोगवते हुयेको देखने जानेका मनसे अभिलाष करे कराये. करतेको अच्छा समझे.

(३५) ,, इस लोक संबंधी रुप (मनुष्य-स्त्रीका), परलोक संबंधी रुप, (देव-देवी, पशु आदि) देखे हुये, न देखे हुये, सुने हुये, न सुने हुये, ऐसे रुपोंकी अन्दर रंजित, मूर्च्छित, गृद्ध हो देखनेकी मनसे भी अभिलाषा करे. ३

भावार्थ—उपर लिखे सब किसमके रुप, मोहनीय कर्मकी उदीरणा करानेवाले है जैसे एक दफे देखनेसे हरसमय वह ही हृदयमें निवास कर ज्ञान, ध्यानमें विघ्न करनेवाले बन जाते है. वास्ते मुनियोंको किसी प्रकारका पदार्थ देखनेकी अभिलाषा तक भी नहीं करना चाहिये.

(३६) ,, प्रथम पोरसीमें अशनादि च्यार प्रकारका आहार लाके उसे चरम पोरसी तक रखे ३

(३७) ,, जिस ग्राम, नगरमें आहार ग्रहन कीया है, उसकी दो कोशसे अधिक ले जावे. ३

(३८) ,, किसी शरीरके कारणसे गोवर लाना पडता हो, पहले दिन लाके दुसरे दिन शरीरपर बांधे.

(३९) दिनको लाके रात्रिमें बांधे.

उपर लेखे ४८ बोलोंसे एक भी बोल सेवन करनेवाले साधु, साध्वीयोंको लघु चातुर्मासिक प्रायश्चित होता है. प्रायश्चित विधि देखो वीसवां उद्देशामें.

इति श्री निशिथसूत्रके बारहवां उद्देशाका संक्षिप्त सार.

(१३) श्री निशिथसूत्र–तेरहवा उद्देशा.

(१) ' जो कोइ साधु साध्वी ' अन्तरा रहित सचित्त पृथ्वीकायपर बैठ-सुवे खडा रहै, स्वाध्याय ध्यान करे. ३

(२) सचित्त पृथ्वीकी रज उडी हुइ पर बैठ, यावत् स्वाध्याय करे. ३

(३) एवं सचित्त पाणीसे स्निग्ध पृथ्वीपर बैठ, यावत् स्वाध्याय करे. ३

(४) एवं सचित्त-तत्काल खानसे निकली हुइ शिला, तथा शिलाका तोडे हुवे छोटे छोटे पत्थरपर बैठे, तथा कीचडसे, कचरासे जीवादिकी उत्पत्ति हुइ हो, काष्टके पाट-पाटलादिमें जीवोत्पत्ति हुइ हो, इंडा, प्राणी (बेइंद्रियादि) बीज, हरिकाय, ओसका पाणी, मकडीजाला, निलण-फूलण, पाणी, कची मट्टी, मांकड, जीवोंका झाला संयुक्त हो, उसपर बैठे, उठे, सुवे, यावत् स्वाध्याय करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

(५) „ घरकी देहलीपर, घरके उंबरे (दरवाजाका मध्य भाग) उखलपर, स्नान करनेके पाटेपर, बैठे, सुवे, शय्या करे, यावत् वहां बैठके स्वाध्याय-ध्यान करे. ३

(६) एवं माटी, भींत, शिला, छोटे छोटे पत्थरे जिनोसे आच्छादित भूमिपर शयन करे, यावत् स्वाध्याय ध्यान करे ३

(७) ,, एक तर्फ आदि भींतपर दोनों तर्फ आदि आदि भींतपर पाट-पाटला रखके बैठे, मोटी ईंटोंकी राशिपर तथा और भी जिस जगा चलाचल (अस्थिर) हो, उस स्थानपर बैठ यावत् स्वाध्याय करे. ३

भावार्थ—जीवोंकी विराधना होवे, आप स्वयं गिर पडे, आत्मघात, संयमघात होवे, उपकरणादि पडनेसे तूटे फूटे—इत्यादि दोष लगता है.

(८) ,, अन्यतीर्थी तथा गृहस्थ लोगोंको संसारिक शिल्पकला, चित्रकला, वस्त्रकला, गणितकलादि (७२) श्लाघाकरणरुप लोडकला, श्लोकबंधकी कला, चोपड, शेत्रंज, कांकरी रमनेकी कला, ज्योतिषकला, वैद्यककला, सलाह देना, गृहस्थके कार्यमें एदु बनाना, क्लेश, युद्ध संग्रामादिकी कला बतलाना, शिखलाना, स्वयं करे, अन्यसे करावे, करतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—मुनि आप संसारमें अनेक कलावोंका अभ्यास कीया हुवा है, फिर दीक्षा लेनेपर गृहस्थोंपर स्नेह करते हुवे, उक कलावों गृहस्थोंको शीखावे, अर्थात् उस कलावोंसे गृहस्थलोग सावद्य वेपार कर अनेक क्लेशके हेतु उत्पन्न करेंगे. वास्ते मुनिको तो गृहस्थोंको एक धर्मकला, कि जिससे इसलोक परलोकमें सुखपूर्वक आत्मकल्याण करे, ऐसा ही बतलानी चाहिये.

(९) ,, अन्यतीर्थीयोंको तथा गृहस्थोंको कठिन शब्द बोले. ३

(१०) एवं स्नेह रहित कर्कश वचन बोले. ३

(११) कठोर और कर्कश वचन बोले. ३

(१२) ,, आशातना करे.

(१३) कौतुक कर्म (दोरा राखडी).

(१४) भूतिकर्म, रक्षादिकी पोटली कर देना.

(१५) ,, प्रश्न, हानि-लाभका प्रश्न पूछे.

(१६) अन्यतीर्थी गृहस्थ पूछनेपर ऐसे प्रश्नोंका उत्तर, अर्थात् हानि लाभ बताये.

(१७) एवं प्रश्न, विद्या, मंत्र, भूत, प्रेतादि निकालनेका प्रश्न पूछे.

(१८) उक्त प्रश्न पूछनेपर आप बतलावे तथा शीखावे.

(१९) भूतकाल संबन्धी.

(२०) भविष्यकाल संबन्धी.

(२१) वर्तमानकाल संबन्धी निमित्त भाषण करे. ३

(२२) लक्षण—हस्तरेखा, पगरेखा, तिल, मसा, लक्षण आदिका शुभाशुभ बतावे.

(२३) स्वप्नके फल प्रवे.

(२४ अष्टापद—एक जातकी रमत, जैसे शेत्रंजी आदिका खेलना शीखावे.

(२५) रोहणी प्रेयीको साधन करनेकी विद्या शिखावे.

(२६) हरिणगमैषी देवको साधन करनेका मंत्र शिखावे.

(२७) अनेक प्रकारकी रससिद्धि, जडीबुट्टी, रसायन बतावे.

(२८) लेपजाति – जिससे वशीकरण होता हो.

(२९) दिग्मूढ हुवा अन्यतीर्थी, गृहस्थोंको रहस्ता बतलावे, अर्थात् क्लेशादि कर कितनेक आदमी आगे चले गये हो, और

कितनेक आदमी उन्होंको मारनेके लीये जा रहे हो. उस समय मुनिको रहस्ता पूछे, तथा

(२०) कोइ शिकारी दिग्मूढ हुवे रहस्ता पूछे, उसे मुनि रहस्ता बतावे, तथा दुसरे भी अन्यतीर्थी गृहस्थोंको रहस्ता बतावे. कारण—यह आगे जाता हुवा दिग्मूढतासे रहस्ता भूल जावे, दूसरे रहस्ते चला जावे, कष्ट पडनेपर मुनिपर कोप करे इत्यादि.

(२१) धातु निधान, अन्यतीर्थी—गृहस्थोंको बतलावे. आप गृहस्थपर्येमें निधान जमीनमें रखा. वह दीक्षा लेते समय किसीको कहना भूल गया था. फिर दीक्षा लेनेके बाद स्मृति होनेपर अपने रागीयोंको बतलावे तथा दीक्षा लेनेके बादमें कहांपर हो निधान देखा हुवा बतावे. कारण—वह निधान अनर्थका ही हेतु होता है, मोक्षमार्गमें विघ्नभूत है.

भावार्थ—यह सब सूत्र अन्यतीर्थीयों, गृहस्थोंके लीये कहा है. मुनि, गृहस्थावास अनर्थका हेतु, संसारभ्रमणका कारण जान त्याग कीया था. फिर उक्त क्रिया गृहस्थलोगोंको बतलानेसे अपना नियमका भंग, गृहस्थ परिचय, ध्यानमें व्याघात इत्यादि अनेक नुकशान होता है. वास्ते इस अलाय बलायसे अलग ही रहना अच्छा है.

(२२) ,, अपना शरीर (मुंह) पात्रेमें देखे.

(२३) काचमें देखे.

(२४) तलवारमें देखे.

(२५) मणिमें देखे.

(२६) पानीमें देखे.

(३७) तैलमें देखे.

(३८) दीलागुलमें देखे.

(३९) धरयीमें देखे.

भावार्थ—उक्त पदार्थोंमें मुनि अपना शरीर (मुंह) को देखे, देखावे, देखतोंको अच्छा समझे. देखनेसे शुश्रुषा बढती है. सुन्दरता देख हर्ष, मलिनता देख शोकसे रागद्वेष उत्पन्न होते है. मुनि इस शरीरको नाशवन्त ही समझे. इसकी सहायतासे मोक्ष मार्ग साधनेका ही ध्यान रखे.

(४०) „ शरीरका आरोग्यताके लीये वमन (उलटी) करे. ३

(४१) एव विरेचन (जुलाब) लेवे. ३

(४२) वमन, विरेचन दोनों करे. ३

(४३) आरोग्य शरीर होनेपर भी दवाइयां ले कर शरीरका बल-वीर्यकी वृद्धि करे. ३

भावार्थ—शरीर है, सो संयमका साधन है उसका निर्वाहके लीये तथा बेमारी आनेपर विशेष कारण हो तो उक्त कार्य कर सके. परन्तु आरोग्य शरीर होनेपर भी प्रमादकी वृद्धि कर अपने ज्ञान--ध्यानमें व्याघात करे, करावे करतेको अच्छा समझे, वह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है.

(४४) „ पासत्था साधु, साध्वीयों (शिथिलाचारी) संयमको एक पास रखके केवल रजोहरण, मुखवस्त्रिका धारण कर रखी हो, ऐसे साधुवोंको वन्दन-नमस्कार करे. ३

(४५) एवं पासत्थायोंकी प्रशंसा-तारीफ श्लाघा करे ३

(४६) एवं उसन्न-मूलगुण पंचमहाव्रत, उत्तरगुण पिंडविशुद्धि आदिके दोषित साधुवोंको वन्दन करे ३

(६३) ,, दूतीकर्म आहार—उधर इधरका समाचार कहके आहार ग्रहन करे. १

(६४) ,, निमित्त आहार—ज्योतिष प्रकाश करके आहार. १

(६५) ,, अपने जाति, कुलका अभिमान करके आहार. १

(६६) ,, रंक भिखारीकी माफिक दीनता करके ,, १

(६७) ,, वैद्यक-औषधिप्रमुख बतलायके आहार लेवे. १

(६८-७१) ,, क्रोध, मान, माया, लोभ करके आहार लेवे. १

(७२) ,, पहला पीछे दातारका गुण कीर्तन कर आहार लेवे १

(७३) ,, विद्यादेवी साधन करनेकी विद्या बतावे ,, १

(७४) ,, मंत्रदेव साधन करनेका प्रयोग बताके ,, १

(७५) ,, चूर्ण - अनेक औषधि मायेल कर रसायण बनाके ,, १

(७६) , योग—वशीकरणादि प्रयोग बतलायके ,, १

भावार्थ—उक्त १५ प्रकारके कार्य कर, गृहस्थोंको खुशामद कर आहार लेना निस्पृही मुनिको नहीं कल्पे.

ऊपर लिखे. ७६ बोलोंसे एक भी बोल सेवन करनेवालोंको लघु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है. प्रायश्चित्त विधि देखो बीसवां उद्देशामें.

इति श्री निशीथसूत्र—तेरहवां उद्देशाका संक्षिप्त सार.

—•—

(७) कथंचित् हाथ, पग, कान, नाक, होठ छेदाया हुवा है, किसी प्रकारकी अति बेमारी हो, उसको परिमाणसे अधिक पात्र नहीं देवे, नहीं दिलाये, नहीं देते हुयेको अच्छा समझे.

भावार्थ—आरोग्य अवस्थामें अधिक पात्र देनेसे लोलूपता बढे, उपाधि बढे, 'उपाधिकी पोट समाधिसे न्यारी.' अगर रोगादि कारण हो, तो उसे अधिक पात्र देनाही चाहिये. बेमार रोगवालाको सहायता देना, मुनियोंका अवश्य कर्त्तव्य है.

(८) ,, अयोग्य, अस्थिर, रखने योग्य न हो, स्वल्प समय चलने काबील न हो, जिसे यतना पूर्वक गौचरी नहीं लासके, ऐसा पात्रको धारण करे. ३

(९) अच्छा मजबूत हो, स्थिर हो, गौचरी लाने योग्य हो, मुनिको धारण करने योग्य हो, ऐसा पात्रको धारण न करे. ३

भावार्थ—अयोग्य, अस्थिर पात्र सुन्दर है तथा मजबुत पात्र देखनेमें अच्छा नहीं दीखता है. परन्तु मुनियोंको अच्छा बुरायका ख्याल नहीं रखना चाहिये.

(१०) ,, अच्छा वर्णवाला सुन्दर पात्र मिलने पर वैराग्यका ढोंग देखानेके लीये उसे विवर्ण करे ३

(११) विवर्णपात्र मिलनेपर मोहनीय प्रकृतिको खुश करनेको सुवर्णवाला करे. ३

भावार्थ—जैसा मिले, वैसेसे ही गुजरान कर लेना चाहिये.

(१२) ,, नया पात्रा ग्रहन करके तैल, घृत, मक्खन, चरबी कर मसले लेप करे. ३

(१३) ,, नया पात्रा ग्रहन कर उसके लोद्रव द्रव्य, कोकण

(३७) कुट्टीपर, भींतपर, शिलापर, खुले अवकाशमें पात्रोंको आताप लगानेको रखे ३

(३८) आदि भींतके स्तंभपर, छत्रीके शिखरपर, मांचापर, मालापर, प्रासादपर, हवेलीपर और भी किसी प्रकारकी उंची जगाहपर, विषमस्थानपर, मुश्कीलसे रखा जावे, मुश्कीलसे उठाया जावे, ऐसे रखते पड़जानेका सम्भव हो, ऐसे स्थानोंमें पात्रोंको आताप लगानेको रखे. ३

भावार्थ—पात्रा रखते उतारते आप स्वयं पीसलके पड़े, तो आत्मघात, संयमघात तथा पात्रा तूटे फूटे तो आरंभ बढे, उसको अच्छे करनेमें घणा खरच करना पड़े इत्यादि दोषका सम्भव है.

(३९) „ गृहस्थके वह पात्रामें पृथ्वीकाय (लूणादि) भरा हुवा है उसको निकालके मुनिको पात्र देवे, उस पात्रको मुनि ग्रहन करे. ३

(४०) एवं अप्काय.

(४१) एवं तेउकाय (पात्र उपर अंगार रख ताप करते है)

(४२) वनस्पति

(४३) एवं कन्द, मूल, पत्र, पुष्प, फल, बीज निकाल पात्रा देवे, उस पात्रको मुनि ग्रहन करे ३ जीव विराधना होती है.

(४४) „ पात्रामें औषधि (गहुं, जव, मकायादि) भरी हो, उसे निकालके पात्र देवे, वह पात्र मुनि ग्रहन करे ३

(४५) एवं त्रस प्राणी जीव निकाले ३

(४६) पात्रको अनेक प्रकारकी मांडणे चित्रित कारणी कर देवे, उसे मुनि ग्रहन करे. ३

(४७) „ मुनिके गृहस्थावासके स्वजनोंके [illegible]

अथवा मुनिके लीये ग्राममें तथा ग्रामांतरमें मुनिके वास्ते पात्राकी याचना करे, वह पात्र मुनि ग्रहण करे. ३

(४८) एवं परिषदकी अन्दर उठके कहेकि—हे भद्रपो-नाओ! मुनियोंको पात्राकी जरूरत है, किसीके हो तो देना. इत्यादि याचना कीया हुवा पात्र ग्रहण करे. ३

(४९) „ मुनि पात्र याचना करनेपर गृहस्थ कहे—हे मुनि! आप ऋतुबद्ध (मास कल्प) यहांपर ठेरे, हम आपको पात्रा देवेंगे ऐसा कहने पर यहांपर मुनि मासकल्प रहे. ३

(५०) एवं चातुर्मासका कहनेपर, मुनि पात्रोंके निमित्त चातुर्मास करे. ३

भावार्थ—गृहस्थलोग मूल्य मंगावे, तथा काष्टादि कटवाके नया पात्र बनावे. इत्यादि.

इस उद्देशामें पात्रोंका विषय है. मुनियोंको संयमयात्रा निर्वाह करनेके लीये दृढ (मजबूत) संहननवाले मुनियोंको एक पात्र रखनेका हुकम है. मध्यम संहननवाले तीन[1] पात्र रखके मोक्षमार्गका साधन कर शके. परन्तु उसके रंगनेमें सुवर्ण, सुगन्धि करनेमें अपना अमूल्य समय खरच करना न चाहिये. लाभालाभका कारण तथा स्निग्ध रहनेके भयसे रंगना पडता हो, वह भी यतनासे करसके है.

इपर लिखे ५० बोलोंसे एक भी बोल सेवन करनेवाले मुनियोंको लघु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है. प्रायश्चित्त विधि देखो वीसवां उद्देशामें.

इति श्री निशिथसूत्र-चौदवां उदेशाका संक्षिप्त सार.

---

[1] मौनहित, कमंडल (तारपणी) पडिगादि भी रखसके है.

(७६) करियाणागृह—शाला, दुकान, धातुके बरतन रखनेका गृह—शाला.

(७७) वृषभ बांधनेका गृह, शाला तथा बहुतसे लोक निवास करते हो ऐसा गृह, शालामें टटी, पैसाब परठे, अर्थात् उपर लिखे स्थानोंमें टटी, पैसाब करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—गृहस्थोंको दुर्गंछा धर्मकी हीलना, यावत् दुर्लभ बोधीपणा उपार्जन करता है. मुनियोंको टटी, पैसाब करनेको जंगलमें खुब दूर जाना चाहिये. जहांपर कोइ गृहस्थ लोगोंका गमनागमन न हो, इसीसे शरीर भी निरोगी रहता है.

(७८) , अपने लाइ हुइ भिक्षामें अशनादि च्यार आहार, अन्यतीर्थी और गृहस्थोंको देवे दिलावे, देतेको अच्छा समझे.

(७९) एवं वस्त्र, पात्र, कंबल, रजोहरण देवे ३ भावनापूर्ववत्.

(८०) ,, पासत्थे साधुयोंको अशनादि च्यार आहार

(८१) वस्त्र, पात्र, कंबल रजोहरण देवे ३

८२-८३ पासत्थासे अशनादि च्यार आहार और वस्त्र, पात्रा, कंबल, रजोहरण ग्रहन करे. ३

एवं उसन्नोंका च्यार सूत्र ८४ ८५-८६ ८७

एवं कुशीलीयोंका च्यार सूत्र ८८-८९ ९० ९१

एवं नितीयोंका च्यार सूत्र ९२-९३-९४-९५

एवं संसक्तोंका च्यार सूत्र ९६ ९७-९८ ९९

एवं काथीयोंका च्यार सूत्र १००-१ २-१०३

एवं ममत्ववालोंका च्यार सूत्र १०४ ५-१०६-१०७

एवं पासत्थियोंका व्यवहार सूत्र १०८-१०९-११०-१११. भावना पूर्ववत् समझना.

उक्त शिथिलाचारीयोंसे परिचय करनेसे देखादेख अपनी प्रवृत्ति शिथिल होगी. लोकशंका. शासनहीलना. पासत्थायोंका पोषण इत्यादि दोषोंका संभव है.

(११२) „ जानकार गृहस्थ साधुवोंके पूर्व सज्जनादि. वस्त्रकी आमंत्रणा करे. उस समय मुनि उस वस्त्रकी जांच पूछ. गवेषणा न करे. ३

(११३) जो वस्त्र, गृहस्थ लोक नित्य पहेरते हो. स्नान, मज्जनके समय पहेरते हो. रात्रि समय व परिचय समय पहेरते हो तथा उत्सव समय, राजद्वार जाते समय (बहुमूल्य) पहेरते हो, ऐसे वस्त्र ग्रहन करे.

भावार्थ—सज्जनादि पूर्व स्नेह कारण बहु मूल्य दोषित वस्त्र देता हो. तो मुनिको देखकर जांच पूछ करना चाहिये. तथा नित्यादि वस्त्र लेनेसे, वह वस्त्र अशुचि तथा विषय वर्धक होता है.

(११४) „ साधु, साध्वी अपने शरीरकी विभूषा करनेके लीये अपने पावोंको एकवार मसले. दावे. घंपे. वारवार मसले. दावे, घंपे. एवं विभूषा निमित्त उक्त कार्य अन्य साधुवोंसे करावे. अन्य साधु उक्त कार्य करतेको अच्छा समझे. तारीफ करे, सहायता करे. करावे. करतेको अच्छा समझे. एवं यावत् तीसरे उद्देशामें ५६ सूत्रों कहा है. वह विभूषा निमित्त यावत् ग्रामानुग्राम विहार करते अपने शिरछत्र धरावे. ३ एवं १६९

(१७०) „ अपने शरीरकी विभूषा निमित्त वस्त्र पात्र कंबल, रजोहरण और भी किसी प्रकारका उपकरण धारण करे. धारण करावे. करतेको अच्छा समझे.

एवं पासत्थादिकोंका व्यवहार सूत्र १०८-१०९-११०-१११ भावना पूर्वक समझना.

उक्त शिथिलाचारियोंसे परिचय करनेसे देखादेख अपनी प्रवृत्ति शिथिल होगी. लोकशंका. शासनहीलना. पासत्थादिकोंका पोषण इत्यादि दोषोंका संभव है.

(११२) .. ज्ञातकार गृहस्थ साधुओंके पूर्व सज्जनादि, वस्त्रकी आमंत्रणा करे. उस समय मुनि उस वस्त्रकी जांच पूछ. गवेषणा न करे. ३

(११३) जो वस्त्र, गृहस्थ लोक नित्य पहेरते हो. स्नान, मज्जनके समय पहेरते हो. रात्रि समय या परिषद समय पहेरते हो तथा उत्सव समय. राजद्वार जाते समय (बहुमूल्य) पहेरते हो. ऐसे वस्त्र ग्रहन करे.

भावार्थ—सज्जनादि पूर्व स्नेह कारन बहु मूल्य दोषित वस्त्र देता है. तो मुनिको पेस्तर जांच पूछ करना चाहिये. तथा नित्यादि वस्त्र लेनेसे. वह वस्त्र अशुचि तथा विषय वर्धक होता है.

(११४) .. साधु, साध्वी अपने शरीरकी विभूषा करनेके लिये अपने पांवोंको एकवार मसले घसे. धोवे. वारवार मसले. घसे. धोवे. एवं विभूषा निमित्त उक्त कार्य अन्य साधुओंसे करावे. अन्य साधु उक्त कार्य करतेको अच्छा समझे. नाशेन करे. सहायता करे. करावे. करतेको अच्छा समझे. एवं यावत् तीसरे उद्देशामें ५३ सूत्रों कहा है. वह विभूषा निमित्त यावत् ग्रामानुग्राम विहार करते अपने शिरपर छत्र धरावे. ३ एवं १६९

(१३०) .. अपने शरीरकी विभूषा निमित्त वस्त्र पात्र कंबल. रजोहरण और भी किसी प्रकारका उपकरन धारन करे. धारन करावे. करतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—वस्त्र, पात्र, छीन लेवे, मार पीट करे द्वेष वढे, यावत् दमित करे. अगर स्वयं शक्तिमान्, विद्यादि चमत्कार, स्थिर संहननवाला, उपकार लाभालाभका कारण जानता हो, वह जा भी सके हैं.

(२७) „ दुर्गछनिक कुल.

(१) स्वल्प काल सुधा सुतकवाला घर.

(२) दीर्घ काल शुद्रादि इन्होंके घरसे अशनादि च्यार प्रकारका आहार ग्रहन करे. ३

(२८) एवं वस्त्र, पात्र, कम्बल, रजोहरण ग्रहन करे. ३

(२९) एवं शय्या (मकान संस्तारक ग्रहन करे. ३

भावार्थ—उत्तम जातिके मनुष्य जिस कुलसे परेज रखते हो, जिसके हाथका पानी तक भी नहीं पीते हो. ऐसे कुलका आहार पानी लेना, साधुके वास्ते मना है.

(३०) „ दुर्गछनिक कुलमें जाके स्वाध्याय करे. ३

(३१) एवं शिष्यको वाचना देवे.

(३२) सदुपदेश देवे.

(३३) स्वाध्याय करनेकी आज्ञा देवे.

(३४) दुर्गछनिक कुल (घर) में सूत्रकी वाचना लेवे.

(३५) स्वाध्याय (अर्थ) लेवे.

(३६) स्वाध्यायकी आवृत्ति करे.

भावार्थ—चांडालादि तथा सुवासुतकवालोंके घरमें सदैव अस्वाध्यायही रहेती है. वहांपर सूत्र सिद्धांतका पठन पाठन करना मना है. तथा दुर्गछ अर्थात् लोकव्यवहारमें निंदनीय कार्य करनेवाला, जिसकी लोक दुर्गछा करते हैं. पास न बैठे. न बै-

जीवोंको अचीतक शस्त्र, नहीं प्रणम्या है, जीव प्रदेशोंकी सत्ता नष्ट नहीं हुइ है, अर्थात् यह पाणी अचित्त नहीं हुवा है. ऐसा पाणी साधु ग्रहन करे. ३ *

(२५२) ,, कोइ साधु अपने शरीरको देख, दुनीयाको कहेकि— मेरेमें आचार्यका सर्व लक्षण है. अर्थात् मुझे आचार्यपद दो—ऐसा कहे. ३

भावार्थ—आत्मश्लाघा करनेसे अपनी कीमत कराना है.

(२५३) ,, रागदृष्टि कर गाये, वाजित्र बजावे, नटोंकी माफिक नाचे. कुदे, अश्वकी माफिक हणहणाट करे, हस्तीकी माफिक गुलगुलाट करे, सिंहकी माफिक सिंहनाद करे, करावे ३

भावार्थ ... ोंको ऐसा उन्माद कार्य न करना, किन्तु शांतवृत्तिसे ... का आराधन करना चाहिये.

(२५ ... ... शब्द, पटहका शब्द, मुंदका शब्द, ादलका ... शब्द. झलरीका शब्द, वल्लरीका शब्द, ... , पेटा, गोलरी, और भी श्रोत्रेंद्रियको आकर्षित ... मात्र भी करे. ३

(... , त्रिपंचीका शब्द, कुणाका, ... , सतारका शब्द, दं- ... का शब्द, श्रोत्रेंद्रियको ... करे. ३

हस्ततालादि,

... मगर विस्तार ... ल करना चाहिये.

भावार्थ—कवी वस्तु लेते, रखते पोसके पडजानेसे आत्मघात, संयमघात, जीयादिका उपमर्दन होता है. पीच्छा लेप करनेसे आरंभ होता है.

(२४५) ,, पृथ्वीकायपर रखा हुवा अशनादि च्यार आहार उठाके मुनिको देवे, वह आहार मुनिग्रहन करे, ३

(२४६) एवं अप्कायपर.

(२४७) एव तेउकायपर.

(२४८) वनस्पतिकाय पर रखा हुवा आहार देवे, उसे मुनि ग्रहन करे. ३

भावार्थ—पेसा आहार लेनेसे जीवोंकी विराधना होती है. आज्ञाका भंग व्यवहार अशुद्ध है.

(२४९) ,, अति उष्ण, गरमागरम आहार पाणी देते समय गृहस्थ, हाथसे, मुंहसे, सुपडेसे, ताडके पंखेसे, पत्रसे, शाखाके, शाखाके खंडसे हवा, लगाके जिससे वायुकायकी विराधना होती है ऐसा आहार मुनि ग्रहन करे. ६

(२५०) ,, अति उष्ण—गरमागरम आहार पाणी मुनि ग्रहन करे.

भावार्थ—उसमे अग्निकायके जीव प्रदेश होते है जीमसे जीव हिंसा का पाप लगता है

(२५१) , उसामणका पाणी, वरतन धोया हुवा पाणी, चावल धोया हुवा पाणी, वोर धोया हुवा पाणी, तिल० तुस० जव० मूमा० लोहादि गरम कर वुजाया हुवा पाणी, कांजीका पाणी, आम्र धोया हुवा पाणी शुद्धोदक जो उक्त पदार्थो धोयाको ज्यादा वखत नहीं हुवा है, जिसका रस नहीं बदला है, जिस

यद्यपि स्थलमें साधु और स्थलमें दातार होतो कल्पै; परंतु कामें बैठते समय साधु स्थलमें आहार पाणी चुकाके वस्त्र, यकी पकही पेट (गांठ) कर लेते है. वास्ते उस समय आ पाणी लेना नहीं कल्पै भावना पूर्ववत्. यहां पन्थीलोग कोत कुयुक्तियों लगाते है यह सब मिथ्या है. साधु परम दया होते है. सब जीवोंपर अनुकंपा है.

(४६) ,, मूल्य लाया हुवा वस्त्र ग्रहन करे. ३

(४७) एवं उधारा लाया हुवा वस्त्र.

(४८) सलट पलट कीया हुवा वस्त्र.

(४९) निर्यलसे सबल जबरदस्तीसे दिलाये, दो विभा पकका दिल न होनेपर भी दुसरा देवे, और सामने लाके ऐसा वस्त्र ग्रहन करे. ३

भावार्थ—मूल्यादिका वस्त्र लेना मुनिको नहीं कल्पै.

(५०) ,, आचार्यादिके लीये अधिक वस्त्र ग्रहन कीया वह आचार्यको विगर आमंत्रण करके अपने मनमाने साधु देवे ३

(५१) ,, लघु साधु साध्वी, स्थविर (वृद्ध) साधु साध्वी जिसका हाथ, पग, कान, नाक आदि शरीरका अवयव छेदा हु नहीं, बेमार भी नहीं है, अर्थात् सामर्थ्य होनेपर भी उसको माणसे अधिक वस्त्र देवे, दिलावे, देतेको अच्छा समजे.

(५२) एवं जिसके हाथ, पांव, नाक, कानादि छेदा हुवा हो. उसे अधिक वस्त्र न देवे, न दिलावे, न देतेको अच्छा समजे

* जैन समय परिमाण है एक दम २४ हाथका होता है

* समय परिमाण है

उपर लिखे ९३ बोलोंसे कोइ साधु साध्वी एक बोल भी सेवन करे. करावे करनेको अच्छा समझेगा, उसको लघु चातुर्मासिक प्रायश्चित होगा. प्रायश्चित्त विधि देखो वीसवा उद्देशामें.

इति श्री निशिथसूत्र— अठारवा उद्देशाका संक्षिप्त सार.

—○○◎○○—

(१९) श्री निशिथसूत्र उन्नीसवा उद्देशा.

(१) 'जो कोइ साधु साध्वी' बहु मूल्य वस्तु-वस्त्र, पात्र, कम्बल, रजोहरण तथा औषधि आदि. कोइ गृहस्थ बहुमूल्यवाला वस्तुका मूल्य स्वयं लावे, अन्यके पास मूल्य मंगवाके तथा अन्य साधुके निमित्त मूल्य लाने हुवेको अच्छा समझे. वह वस्तु बहु मूल्यवाली मुनि ग्रहन करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—बहु मूल्यवाली वस्तु ग्रहन करनेसे ममत्वभाव बढे, चौरादिका भय रहे इत्यादि

(२ एवं बहु मूल्यवाली वस्तु उधारी लाके देवे उसे मुनि ग्रहन करे ३

(३ मलटा पलटाये देवे उसे मुनि ग्रहन करे ३

(४) निर्बलसे जबरदस्ती सबल दिलाये उसे ग्रहन करे.३

(५ दो भागीदारोंकी वस्तु एकका दिल देनेका न होने पर भी दुसरा देवे. उसे मुनि ग्रहन करे

(६) बहु मूल्य वस्तु सामने लाके देवे उसे ग्रहन करे ३ भावना पूर्ववत्.

(७) „ अगर कोइ बेमार साधुके लीये बहु मूल्य औष-

राग द्वेष हो पढना चाहिये. अगर ऐसा न पढावे, उन्होंकि लीये यह प्रायश्चित्त बतलाया हुवा है

(२२) „ अप्राप्त वाचना लेनेको योग्य नहीं हुवा है. द्रव्यसे बालभावसे मुक्त न हुवा हो, अर्थात् काखमें रोम (बाल) न आया हो भावसे आगम रहस्य समझनेकी योग्यता न हो, धैर्य, गांभीर्य न हो, विचारशक्ति न हो, ऐसे अप्राप्तको आगमोंकी वाचना देवे दिलावे देनेको अच्छा समझे.

(२३) „ प्राप्त को आगमोंकी वाचना न देवे, न दिलावे न देनेको अच्छा समझे द्रव्यसे बालभावसे मुक्त हुवा हो, काखमें रोम आगये हो भावसे सूत्रार्थ लेनेकी, ग्रहन करनेकी, तत्व विचार करनेकी, रहस्य समझनेकी योग्यता हो, धैर्य, गांभीर्य, दीर्घदर्शिता हो ऐसे प्राप्तको आगमोंकी वाचना न देवे. ३

भावार्थ — अयोग्यको आगमज्ञान देना यह बडा भारी नुकसानका कारण होता है वास्ते ज्ञानदाता आचार्योपाध्यायजी महाराजको प्रथमसे पात्र कुपात्रकी परीक्षा करके ही जिनवाणी रूप अमृत देना चाहिये ताके भविष्यमें स्वपरात्माका कल्याण करे

(२४) „ अति बाल्यावस्थावाला मुनिको आगम वाचना देवे ३

(२५) „ बाल्यावस्थासे मुक्त हुवाको आगम वाचना न देवे.३ भावना २२-२३ वत् देखो

(२६) एक आचार्यके पास विनयधर्मसंयुक्त दोय शिष्यों पढते है. उसमें एकको अच्छा चित्त लगाके ज्ञान-ध्यान शिखावे, सूत्रार्थकी वाचना देवे [रागके कारणसे] दुसरेको न शि-

आवे, न सूत्रार्थकी वाचना देवे [विनयके कारणसे] तो वह आचार्य प्रायश्चितका भागी होता है. भावना पूर्ववत्.

(२७) ,, आचार्योपाध्यायके वाचना दीये विगर अपने मनसे सूत्रार्थ, वांचे, वंचावे. वांचनेको अच्छा समझे.

भावार्थ—जैन सिद्धांत अति गंभीर होनेवाले अनेक रहस्यसे भरे हुवे. कितनेक शब्द [illegible] अनेक अर्थ रखनेवाले है. वास्ते गुरुगमताने ही सूत्र वाचनेकी आज्ञा है. गुरुगमता विगर सूत्र वांचनेसे अनेक प्रकारकी शंकाओं उत्पन्न होती है. यावत् धर्मश्रद्धासे पतित हो जाते है

(२८) ,, अन्यतीर्थी. और अन्य तीर्थीयोंके गृहस्थोंको सूत्रार्थकी वाचना देवे. दिलावे. देनेको अच्छा समझे.

भावार्थ—उन्ह लोगोंकी प्रथमसेही मिथ्यात्वकी वासना हृदयमें जमी हुइ है. उसको सम्यक् ज्ञानकी [illegible] परिणमता है. कारण—वाचना देनेवाले पर तो उनका विश्वास ही नहीं. विनय, भक्तिहीनको वाचना न देवे. [illegible] कहा है कि सम्यक्सूत्र भी मिथ्यात्वीयोंको मिथ्यारूपमें परिणमता है

(२९) ,, अन्यतीर्थी अन्यतीर्थीयोंके गृहस्थोंसे सूत्रार्थकी वाचना ग्रहन करे. करावे करनेको अच्छा समझे.

भावार्थ—अन्यतीर्थी शास्त्रादि [illegible] रहस्यका ज्ञानकार न होनेसे वह यथार्थ [illegible] समझा सके न यथार्थ अर्थ भी कर सके. वास्ते देने [illegible] है इतनाही नहीं किन्तु उन्होंका परिचय [illegible] है. आजकाल कितनेक [illegible] स्वच्छन्दतासे [illegible] शास्त्रोंको पासे पढते है. जिसका नतीजा प्रत्यक्ष अनुभव कर रहे है.

गागन्ध्र हो पढना चाहिये. अगर ऐसा न पढावे, उन्होंकि लीये यह प्रायश्चित्त बतलाया हुआ है

(२२) अप्राप्त वाचना लेनेको योग्य नहीं हुआ हैं. द्रव्यसे बाल्यभावसे मुक्त न हुवा हो, अर्थात काखमें रोम (बाल) न आया हो, भावसे आगम रहस्य समझनेकी योग्यता न हो, धैर्य, गांभीर्य न हो, विचारशक्ति न हो, ऐसे अप्राप्तको आगमोंकी वाचना देवे दिलावे देनेका अच्छा समझे

(२३) प्राप्त को आगमोंकी वाचना न देवे, न दिलावे न देनेका अच्छा समझे. द्रव्यसे बाल्यभावसे मुक्त हुवा हो, काखमें रोम आगये हो, भावसे वचाई लेनेकी, ग्रहन करनेकी, तत्व विचार करनेकी, रहस्य समझनेकी योग्यता हो, धैर्य, गांभीर्य, दीर्घदर्शिता हो, ऐसे प्राप्तको आगमोंकी वाचना न देवे. ३

भावार्थ — अयोग्यको आगमज्ञान देना यह बडा भारी नुकशानका कारण होता है [illegible] ज्ञानदाता आचार्योपाध्यायको महाराजको प्रथमसे पात्र कुपात्रकी परीक्षा करके ही जिनवाणी रूप अमृत देना चाहिये [illegible] स्वपरात्माका कल्याण करे

(२४) अति बाल्यावस्थावाले मुनिको आगम वाचना देवे. ३

(२५) बाल्यावस्थासे मुक्त हुवाको आगम वाचना न देवे ३ भावना २४-२३ [illegible]

(२६) एक आचार्यके पास विनय संपन्न दोय शिष्यों पढते है. उसमें एकको अच्छा चित्त लगाके ज्ञान ध्यान शिखावे, सूत्रार्थकी वाचना देवे [रागके कारणसे] दुसरेको न शि-

स्यावे. न सूत्रार्थकी वाचना देवे [द्वेषके कारणसे] तो वह आचार्य प्रायश्चित्तका भागी होता है. भावना पूर्ववत्.

(२७) ,, आचार्योपाध्यायके वाचना दीये विगर अपनेही मनसे सूत्रार्थ, वांचे, वंचावे, वांचतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—जैन सिद्धांत अति गंभीर शैलीवाले अनेक रहस्यसे भरे हुवे. कितनेक शब्द तो खास गुरु गमताकी अपेक्षा रखनेवाले हैं, वास्ते गुरुगमतासे ही सूत्र वांचनेकी आज्ञा है. गुरुगमता विगर सूत्र वांचनेसे अनेक प्रकारकी शंकाओ उत्पन्न होती है. यावत् धर्मश्रद्धासे पतित हो जाते है.

(२८) ,, अन्यतीर्थी, और अन्य तीर्थीयोंके गृहस्थोको सूत्रार्थकी वाचना देवे, दिलावे, देतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—उन्ह लोगोंकी प्रथमसेही मिथ्यात्वकी वासना हृदयमें जमी हुइ है. उसको सम्यक् ज्ञानही मिथ्या हो परिणमता है. कारण—वाचना देनेवाले पर तो उसका विश्वासही नहीं. विनय, भक्तिहीनको वाचना न देवे. कारण नन्दी सूत्रमें कहा है कि सम्यसूत्र भी मिथ्यात्वीयोंको मिथ्यारूपमें परिणमते है.

(२९) ,, अन्यतीर्थी अन्यतीर्थीयोंके गृहस्थोसे सूत्रार्थकी वाचना ग्रहन करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—अन्यतीर्थी ब्राह्मणादि जैनसिद्धान्तोंके रहस्यका ...कार न होनेसे वह यथावत् नहीं समझा सके, न यथार्थ ...ही कर सके. वास्ते ऐसे अज्ञानोंसे वाचना लेना मना है. ...ही नही किन्तु उन्होंका परिचय करनाही बीलकुल मना ...तकाल कीतनेक निनायक तरूण साध्वीयों स्वच्छन्दतासे ...णों पासे पढति हैं. जीसका नतीजा प्रत्यक्षमें अनुभव ... है.

रहित-सरलतासे आलोचना करे, उसे एक मासिक प्रायश्चित्त दीया जाता है. और

(२) मायासंयुक्त आलोचना करनेपर उसे दोय मासिक प्रायश्चित्त देते हैं. कारण-एक मास मूल दोष सेवन कीया उसका. और एक मास जो आलोचना करते माया-कपट सेवन कीया, उसकी आलोचना, एवं दो मास.

(३) इसी माफिक दोय मास दोषस्थानक सेवन कर मायारहित आलोचना करनेसे दोय मासका प्रायश्चित्त.

(४) मायासंयुक्त करनेसे तीन मासका प्रायश्चित्त भावना पूर्ववत्.

(५) तीन मासवालोंको मायारहितसे तीन मास.

(६) मायासंयुक्तको च्यार मास.

(७) च्यार मासवालोंको मायारहितसे च्यार मास.

(८) मायासंयुक्तको पांच मास.

(९) पांच मास-मायारहितको पांच मास.

(१०) मायारहितको छे मास. छे माससे अधिक प्रायश्चित्त नहीं है. कारण-आजके साधु साध्वी, वीरप्रभुके शासनमें विचरते हैं, और वीरप्रभु उत्कृष्टसे उत्कृष्ट छे मासकी तपश्चर्या करी है. अगर छे माससे अधिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कीया हो, उसको फिरसे दुसरी दफे दीक्षा ग्रहनका प्रायश्चित्त होता है.

(११) ,, बहुतवार मासिक प्रायश्चित्त स्थानको सेवन करे. जैसे पृथ्वीकी विराधना हुइ, साथमें अप्कायकी विराधना एकवार तथा वारवार भी विराधना हुइ, वह एक साथमें आलोच-

मा करी, उसे यहुतश्चार मासिक कहते हैं. अगर मायारहित नि- ष्कपट भावसे आलोचना करी हो, तो उसे मासिक प्रायश्चित देवे.

(१२) मायासंयुक्त आलोचना करनेसे दोमासिक प्रायश्चित्त होता है. भावना पूर्ववत्.

(१३) एवं वहुतसे दोमासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर- नेसे मायारहितवालोंको दोमासिक आलोचना

(१४) मायासहितको तीन मासिक आलोचना. यावत् बहु- तसे पांच मासिक, मायारहित आलोचनासे पांच मास, मायास- हित आलोचना करनेसे छे मासका प्रायश्चित्त होता है. सूत्र २० हुवे. भावना प्रथम सूत्रकी माफिक समझना.

(२१) „ मासिक, दो मासिक, तीन मासिक, च्यार मा- सिक, पांच मासिक, और भी किसी प्रकारके प्रायश्चित्त स्थानोंको सेवन कर मायारहित आलोचना करनेसे मूल सेवा हो. उतनाही प्रायश्चित्त होता है. जैसे एक मासिक यावत् पांच मासिक.

(२२) अगर माया-कपटसे संयुक्त आलोचना करे, उसे मूल प्रायश्चित्तसे एक मास अधिक प्रायश्चित्त होता है. यावत् माया- रहित हो, चाहे मायासहित हो, परन्तु छे माससे अधिक प्राय- श्चित्त नहीं है. अधिक प्रायश्चित्त हो, तो पहलेकी दीक्षा छेदके नवी दीक्षाका प्रायश्चित्त होता है. एवं दो सूत्र बहुवचनापेक्षा भी समझना. २३-२४ सूत्र हुवे.

(२५) „ च्यार मासिक, साधिक चातुर्मासिक, पंच मा- सिक, साधिक पंच मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर मायार- हित आलोचना करे, उसे मूल प्रायश्चित्त देवे.

(२६) मायासंयुक्त आलोचना करनेसे पांच मास साधिक

पांच माम, छे माम, छे मास, इससे उपर मायासहित, चाहे मायारहित हो, प्रायश्चित्त नहीं है. भावना पूर्ववत्. यह दो सूत्र बहुवचनापेक्षा. २७-२८ सूत्र हुवे.

(२९) ,, चतुर्मासिक साधिक चतुर्मासिक, पंच मासिक, साधिक पंचमासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर आलोचना करे, मायारहित तथा मायासहित. उस साधुको उपरवत् प्रायश्चित्त देके किसी बेमार तथा वृद्ध मुनियोंकी वैयावच्च करने निमित्त स्थापन करे. अगर प्रायश्चित्त सेवन कीया, उसे संघ जानता हो तो संघके सन्मुख प्रायश्चित्त देना चाहिये, जिससे संघको प्रतीत रहे, साधुवोंको क्षोभ रहे, दुसरी दफे कोइ भी साधु, ऐसा अकृत्य कार्य न करे, इत्यादि. अगर दोष सेवनको कोइ भी न जाने, तो उसे अन्दर ही आलोचना देना. उसका दोष जो प्रगट करते जितना प्रायश्चित्त, दोष सेवन करनेवालोंकों आता है, उतना ही गुप्त दोषको प्रगट करनेवालोंको होता है कारण एसा करनेसे शासनहीलना मुनियोंपर अभाव दोष सेवनमें निःशंकता आदि दोषका संभव है आलोचना करनेवालोंका च्यार भांगाः—

(१) आचार्यमहाराजका शिष्य, एकसे अधिक दोष सेवन कर आलोचना करते समय क्रमसर पहले दोषकी पहले आलोचना करे.

(२) एवं पहेले सेवन कीया दोषकी विस्मृति होनेसे पीछे आलोचना करे.

(३) पीछे सेवन कीया दोषकी पहले आलो[illegible]

(४) पीछे सेवन कीया दोषकी पीछे आ[illegible]

आलोचनाके परिणामापेक्षा और भी [illegible] है—

(१) आलोचनी [illegible] पहला [illegible] ना था नि[illegible]

(४३) „ पांच मास दश रात्रिका तप करते अंतरे दो मासिक प्रायश्चित्त सेवन करनेसे वीश रात्रिका तप उसके साथ मिला देनेसे पूर्ण छे मास होता है, इसके आगे तप प्रायश्चित्त नहीं है. फिर छेद या नयी दीक्षा ही दी जाती है. भावना पूर्ववत्.

(४४) „ छे मासी प्रायश्चित्त तप करते हुवे मुनि, अन्तरे एक मासिक प्रायश्चित्त स्थानको सेवे, उसकी आलोचना करनेपर आचार्य उसे पूर्वतपके साथ पन्दर दिनोंका तप अधिक करावे.

(४५) एवं पांच मासिक तप करते.

(४६) एवं च्यार मासिक तप करते.

(४७) तीन मासिक तप करते.

(४८) दो मासिक तप करते,

(४९) एवं एक मासिक तप करते अन्तरे एक मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कीया हो, तो आदा मास सबके साथ मिला देना, भावना पूर्ववत्.

(५०) „ छे मासिक यावत् एक मासिक तप करते अन्तरे एक मासिक और प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर माया संयुक्त आलोचना करे, उसे साधुको आचार्यने दोड (१॥) मासिक तप दीया है, वह साधु पूर्व तपको पूर्ण कर, उसके अन्तमें दोड (१॥) मासिक तप कर रहा है. उसमें और मासिक प्रायश्चित्त स्थानसे भी माया रहित आलोचना करे, उसे पन्दर दिनकी आलोचना दे के पूर्व दोड मासके साथ मिला देना. एवं दो मासका तप करे.

(५१) „ दो मासिक तप करते और मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर आलोचना करनेसे, पन्दरादिनकी आलोचना दे पूर्व दो मासके साथ मिलाके अढाइ मासका तप करे.

(३५) पर्व चातुर्मासिक.

(३६) पर्व तीन मासिक.

(३७) पर्व दोय मासिक.

(३८) पक मासिक. भावना पूर्ववत् समझना

(३९) जो मुनि दो मासी यावत् एक मासी तप करते हुवे अन्तरामें दो मासी प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर मायासंयुक्त आलोचना करी, जिससे दोय मास. वीश अहोरात्रिका प्रायश्चित्त, आचार्यने दीया, उस तपको पहलेके तपके अन्तमें प्रारंभ कीया है. उस तपमें वर्तते हुवे मुनिको और भी दोय मासिक प्रायश्चित्त स्थानका दोष लगजाये, उसे आचार्य पास आलोचना मायारहित करना चाहिये. तब आचार्य उसे वीश दिनका तप उसे पूर्व तपपर्यायके साथ बढा देवे. और उसका कारण. हेतु अर्थ आदि पूर्वोक्त माफिक समझाये. मूल तपके सिवाय तीन मास दश दिनका तप हुवा

(४०) ,, तीन मास दश रात्रिका तप करते अंतरे और भी दो मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर आलोचना करनेसे वीश रात्रिका तप प्रायश्चित्त देनेसे च्यार मासका तप करे भावना पूर्ववत.

(४१) ,, च्यार मासका तप करते अन्तरेमें दोमासी प्रायश्चित्त स्थान सेवन करनेसे पूर्ववत् वीश रात्रिका प्रायश्चित्त पूर्व तपमें मिला देवें, तब च्यार मास वीश रात्रि होती है

(४२) ,, च्यार मास वीश रात्रिका तप करते अंतरे दो मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन करनेसे और वीश रात्रि तप उसके साथ मिला देनेसे पांच मास दश रात्रि होती है

(४३) ,, पांच मास दश रात्रिका तप करते अंतरे दो मासिक प्रायश्चित्त सेवन करनेसे वीश रात्रिका तप उसके साथ मिला देनेसे पूर्ण छे मास होता है, इसके आगे तप प्रायश्चित्त नहीं है. फिर छेद या नवी दीक्षा ही दी जाती है. भावना पूर्ववत्.

(४४) ,, छे मासी प्रायश्चित्त तप करते हुवे मुनि, अन्तरे एक मासिक प्रायश्चित्त स्थानको सेवे, उसकी आलोचना करनेपर आचार्य उसे पूर्वतपके साथ पन्दर दिनोंका तप अधिक करावे.

(४५) एवं पांच मासिक तप करते.

(४६) एवं च्यार मासिक तप करते.

(४७) तीन मासिक तप करते.

(४८) दो मासिक तप करते,

(४९) एवं एक मासिक तप करते अन्तरे एक मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कीया हो, तो आदा मास सबके साथ मिला देना, भावना पूर्ववत्.

(५०) ,, छे मासिक यावत् एक मासिक तप करते अन्तरे एक मासिक और प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर माया संयुक्त आलोचना करे, उसे साधुको आचार्यने दोढ (१॥) मासिक तप दीया है, वह साधु पूर्व तपको पूर्ण कर. उसके अन्तमें दोढ (१॥) मासिक तप कर रहा है. उसमें और मासिक प्रायश्चित्त स्थानसे वी माया रहित आलोचना करे, उसे पन्दर दिनकी आलोचना दे के पूर्व दोढ मासके साथ मिला देना. एवं दो मासका तप करे.

(५१) ,, दो मासिक तप करते और मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर आलोचना करनेसे, पन्दरादिनकी आलोचना दे पूर्व दो मासके साथ मिलाके अढाइ मासका तप करे.

(६३) च्यार मास दश दिनका तप करते अन्तरेमें एक मासिक प्रा० स्थान सेवन करने वालेको पन्दरा दिनकी आलोचना पूर्व तपके साथ मिला देनेसे ४-१०-१५ च्यार मास पंचवीश अहोरात्री होती है.

(६४) च्यार मास पंचवीश अहोरात्रिका तप करते अन्तरमें दो मासिक प्रा० स्थान सेवन करनेवालेको वीश रात्रिकी आलोचना, पूर्वतपके साथ मिला देनेसे पंच मास और पंदरा अहोरात्रि होती है.

(६५) पांच मास पंदरा रात्रिका तप करते अन्तरामें एक मासिक प्रा० स्थान सेवन करनेवालेको पन्दरा अहोरात्रिकी आलोचना, पूर्वतपके साथ सामेल कर देनेसे छे मासिक तप होता है. इसके आगे किसी प्रकारका प्रायश्चित्त नहीं है. अगर तप करते प्रायश्चित्तका स्थान सेवन करते है, उसकी आलोचना देनेवाले आचार्यादि, उस दुर्बल शरीरवाला तपस्वी मुनिको मधुरतासे उस आलोचनाका कारण, हेतु, अर्थ बतलावे कि तुमारा प्रायश्चित्त स्थान तो एक मासिक, दो मासिकका है, परन्तु पेस्तरसे तुमारी तपश्चर्या चल रही है. जिसके जरिये तुमारा शरीरकी स्थिति निर्बल है. लगेतार तप करनेमें जोर भी ज्यादा पडता है. इस वास्ते इस हेतु-कारणसे यह आलोचना दी जाती है. कृत पापका तप करना महा निर्जराका हेतु है. अगर तुमारा उत्थानादि मंद हो तो मेरा साधु तुमारी वैयावच्च करेगा तु शान्तिसे तप कर अपना प्रायश्चित्त पूर्ण करो. इत्यादि. २०

आलोचना सुननेकी तथा प्रायश्चित्त देनेकी विधि अन्य स्थानोंसे यहांपर लिखी जाती है.

आलोचना सुननेवाले.

यह भी गुण अवश्य होना चाहिये कि—मधुरता पूर्वक आलोचक साधुकी लज्जा दूर करनेको स्थानांग-आदि सूत्रोंका पाठ सुनाके हृदय निर्मल बना देवे. जैसे—हे भद्र! इस लोककी लज्जा परभवमें विराधक कर देती है. रुपा और लक्षमणा साध्वीका दृष्टान्त सुनावे.

(५) शुद्ध करने योग्य होवे, आप स्वय भद्रक भाव—अपक्षपातसे शुद्ध आलोचना करवावे. अर्थात् आलोचना करनेवालोंका गुण बनावे, आठ कारणोंसे जीव शुद्ध आलोचना करे—इत्यादि.

(६) मर्म प्रकाश नहीं करे. धैर्य, गांभीर्य, हृदयमें हो, किसी प्रकारकी आलोचना कोइभी करी हो. परन्तु कारण होने परभी किसीका मर्म नहीं प्रकाशे.

(७) निर्वाह करने योग्य हो. आलोचना अधिक आती है, और शरीरका सामर्थ्य, इतना तप करनेका न हो उसके लीये भी निर्वाह करनेको स्वाध्याय, ध्यान, वन्दन, वैयावच्च-आदि अनेक प्रकारसे प्रायश्चितका खंड खंड कर उसको शुद्ध कर सके.

(८) आलोचना न करनेका दोष, अनर्थ, भविष्यमें विराधकपणा, संसारवृद्धिका हेतु. तथा आठ कारणोंसे जीव आलोचना न करनेसे उत्पन्न होता दुःख यावत् संसार भ्रमण करे. ऐसा बतलावे.

(९-१०) प्रिय धर्मी और दृढ धर्मी हो. धर्म शासनपर पूर्ण राग, हाड हाड किमीजी, रग रग. नशों और रोमरोममें शासन व्याप्त हो, अर्थात् यह दोषित साधु आलोचना न करेगा, तो दुसरा भी दोष लगनेसे पीछा न हटेगा. ऐसी खराब प्रवृत्ति होनेसे भविष्यमें शासनको बडा भारी धोका पहुंचेगा. इत्यादि हिताहितका विचारवाला हो.

(श्री स्थानांगजी सूत्र—दशवे स्थाने)

(६) 'शंका' यह पूंजन प्रतिलेखन करी होगा या नहीं करी होगा इत्यादि कार्यमें शंका होना.

(७) 'सहसात्कारे' बलात्कारसे, किसी कार्य करनेकी इच्छा न होनेपर भी वह कार्य करनाही पडे.

(८) 'भय' सात प्रकारका भयके मारे अधीरपनासे—

(९) 'द्वेषदशा' क्रोध मोहनीय उदय, अमनोज्ञ कार्यमें द्वेषभाव उत्पन्न होनेसे दोष लगता है.

(१०) शिष्यादिकी परीक्षा (आलोचना) श्रवण करनेके निमित्त दुसरी तीसरी वार कहना पडता है, कि मैंने पूर्ण नहीं सुनाया, और सुनायें. (स्थानांगसूत्र.)

दोष लग जानेपर भी मुनियोंको शुद्ध भावसे आलोचना करना बडाही कठिन है. आलोचना करते करते भी दोष लगा देते है. यथा—

(१) कम्पता कम्पता आलोचना करे. अर्थात् आचार्यादिका भय लावेकि—मुझे लोग क्या कहेंगे! अर्थात् अस्थिर चित्तसे आलोचना करे.

(२) आलोचना करनेके पहला गुरुसे पूछे कि—हे स्वामिन्! अगर कोइ साधु, अमुक दोष सेवे, उसका क्या प्रायश्चित होता है! शिष्यका अभिप्राय यह कि—अगर स्वल्प प्रायश्चित होगा, तो आलोचना कर लेंगे, नहि तो नहीं करेंगे.

(३) किसीने देखा हो, ऐसे दोषकी आलोचना करे, और न देखा हो, उसकी आलोचना नहीं करे. (कौन देखा है!)

(४) बडे बडे दोषोंकी आलोचना करे, परन्तु सूक्ष्म दोषोंकी आलोचना न करे.

(५) सूक्ष्म दोषोंकी आलोचना करे, परन्तु स्थूल दोषोंको आलोचना न करे.

(६) बडे ज़ोर ज़ोरसे शब्द करते आलोचना करे. जिससे बहुत लोक सुने, एकत्र हो जावे.

(७) बिलकुल धीमे स्वरसे बोले. जिसमें आलोचना सुननेवालोंको भी पुरा शब्द सुनाया जाय नहीं.

(८) एक प्रायश्चित्त स्थान, बहुतसे गीतार्थोके पास आलोचना करे. इरादा यहकि—कोनसा गीतार्थ, कितना कितना प्रायश्चित्त देता है.

(९) प्रायश्चित्त देनेमें अज्ञात (आचारांग, निशिथका अज्ञात) के समीप आलोचना करे. कारण वह क्या प्रायश्चित दे सके ?

(१०) स्वयं आलोचना करनेवाला खुद ही उस प्रायश्चित्त को सेवन कीया हो, उसके पास आलोचना करे. कारण—खुद प्रायश्चित्त कर दोषित है, वह दुसरोंको क्या शुद्ध कर सकेगा ? उन्हसे सच बात कभी कही न जायगी.

(स्थानांगसूत्र.)

आलोचना कोन करता है ? जिसके चारित्र मोहनीय कर्मका क्षयोपशम हुवा हो, भवान्तरमें आराधक पदकी अभिलाषा रखता हो, वह भव्यात्मा आलोचना कर अपनी आत्माको पवित्र बना सके. यथा—

(१) ज्ञातिवान्.

(२) कुलवान्. इस वास्ते शास्त्रकारोंने दीक्षा देते समय ही प्रथम जाति, कुल, उत्तम होनेकी आवश्यकता बतलाइ है.

जाति-कुल उत्तम होगा, वह मुनि आत्मकल्याणके लीये आलोचना करना कभी पीछा न हटेगा.

(३) विनयवान्–आलोचना करनेमें विनयकी खास आवश्यकता है. क्योंकि-आत्मकल्याणमें विनय मुख्य साधन है.

(४) ज्ञानवान्—आलोचना करनेसे शायद इस लोकमें मान-पूजा, प्रतिष्ठामें कभी हानि भी हो, तो ज्ञानवंत, उसे अपना हृदयमें कभी स्थान न देगा. कारण-ऐसी मिथ्या मान-पूजा, इस जीवने अनन्तीवार कराइ है. तदपि आराधकपद नहीं मिला है. आराधकपद, निर्मल चित्तसे आलोचना करनेसे ही मिल सके, इत्यादि.

(५) दर्शनवान्—जिसकी अटल श्रद्धा, वीतरागके धर्मपर है, वह ही शुद्ध भावसे आलोचना करेगा उसकी ही आलोचना प्रमाण गिनी जाती है, कि-जिसका दर्शन निर्मल है.

(६) चारित्रवान्—जिसको पूर्णतासे चारित्र पालनेकी अभिरुचि है, वह ही लगे हुये दोषोंकी आलोचना करेगा.

(७) अमायी – जिसका हृदय निष्कपटी, सरल, स्वभाव होगा, वह ही मायारहित आलोचना करेगा.

(८) जितेंद्रिय—जो इन्द्रियविषयको अपने आधीन बना लीया हो, वह ही कर्मोंके सन्मुख मोरचा लगाने, तपरूप अस्त्र लेके खडा होगा, अर्थात् आलोचना ले, तप वह ही कर सकेगा, कि जिन्होंने इन्द्रियोंको जीती हो.

(९) उपशमभावी—जिन्होंका कषाय उपशान्त हो रहा है. न उसे क्रोध सताता है, न मानहानिमें मान सताता है, न माया न लोभ सताता है, वह ही शुद्ध भावसे आलोचना करेगा.

(१० प्रायश्चित्त ग्रहण कर, पश्चात्ताप न करे, वह आलोचना करनेके योग्य होते है

(स्थानांगसूत्र.)

प्रायश्चित्त कितने प्रकारके है ? प्रायश्चित्त दश प्रकारके है. कारण– एक ही दोषका सेवन करनेवालोंको अभिप्राय अलग अलग होते है, तदनुसार इसे प्रायश्चित्त भी भिन्न भिन्न होना चाहिये यथा

(१) आलोचना—एक ऐसा अज्ञात परिहार दोष होता है कि-जिसको गुरु सन्मुख आलोचना करनेसे ही पापकी निवृत्ति हो जाती है.

(२) प्रतिक्रमण—आलोचना श्रवण कर गुरु महाराज कहे कि-आज तो तुमने यह कार्य किया है, किन्तु आइंदासे ऐसा कार्य नहीं करना चाहिये. इसपर शिष्य कहे-तहत्त अब मैं ऐसा कार्यसे निवृत्त होता हूं अकृत्य कार्यसे पीछा हटता हूं

(३) तदुभय—आलोचना और प्रतिक्रमण दोनों करे. भावना पूर्ववत्

(४) विवेक—आलोचना श्रवण कर ऐसा प्रायश्चित्त दीया जाय कि-दूसरी दफे ऐसा कार्य न करे दूषित वस्तुका त्याग कराना तथा परिष्ठापन कार्य कराना

(५) कायोत्सर्ग—दश बीस लोगस्सका कायोत्सर्ग तथा ध्यान आदि दिलाना

(६) तप—प्रायश्चित्त तप नवकारसी से प्रायश्चित्त तप छ मासी तक छेदसूत्रोंमें बतलाया गया है

(७) छेद—जो पूर्व दीक्षा होवे उसमें एक मास कमकर

(१० प्रायश्चित्त ग्रहन कर, पश्चाताप न करे, वह आलोचना करनेके योग्य होते है.

(स्थानांगसूत्र.)

प्रायश्चित्त कितने प्रकारके है ? प्रायश्चित्त दश प्रकारके है. कारण—एक ही दोषको सेवन करनेवालोंको अभिप्राय अलग अलग होते है, तद्नुसार उसे प्रायश्चित्त भी भिन्न भिन्न होना चाहिये यथा

(१) आलोचना—एक ऐसा अशक्य परिहार दोष होता है कि-जिसको गुरु सन्मुख आलोचना करनेसे ही पापसे निवृत्ति हो जाती है.

(२) प्रतिक्रमण—आलोचना श्रवण कर गुरु महाराज कहे कि-आज तो तुमने यह कार्य कीया है, किन्तु आइंदासे ऐसा कार्य नहीं करना चाहिये. इसपर शिष्य कहे-तहत अब मैं ऐसा कार्यसे निवृत्त होता हुं अकृत्य कार्यसे पीछा हटता हुं

(३ उभय—आलोचना और प्रतिक्रमण दोनों करे. भावना पूर्ववत्.

४ विवेक—आलोचना श्रवण कर तथा प्रायश्चित्त दीया जाय कि-दूसरी दफे ऐसा कार्य न करे कुछ वस्तुका त्याग कराना तथा परिठन कार्य कराना

५ कायोत्सर्ग दश, बीश, लोगस्सका कायोत्सर्ग तथा क्षमाश्रमणादि दिलाना

६ तप—मासिक तप यावत् छ मासिक तप जो निशीथसूत्रके २० उद्देशामें बतलाया गया है

७ छेद—जो मूल दीक्षा दीथी उसमें एक मास यावत्

ये मास मध्यका छेद दीया जावे, अर्थात् इसका मासपर्यायसे कम कर दीया जाय. जैसे एक मुनि, दीक्षा लेनेके बादमें दुसरा मुनिने तीन मास पीछे दीक्षा लीनी, इस वखत पीछेसे दीक्षा लेनेवाला मुनि, पहले दीक्षितको वन्दन करे. अब वह पहला दीक्षित मुनि, किसी प्रकारका दोष सेवन करनेसे उसे चातुर्मासिक छेद प्रायश्चित आता है जिससे उसका दीक्षापर्याय च्यार मास कम कर दीया. फिर वह तीन मास पीछेसे दीक्षा लीथी, उसको वह पूर्वदीक्षित मुनि वन्दना करे.

(८) मूल—चाहे कितना ही वर्षोंकी दीक्षा क्यों न हो. परन्तु अमुक प्रायश्चित स्थान सेवन करनेसे उस मुनिकी मूल दीक्षाको छेदके उस दिन फिरसे दीक्षा दी जाती है वह मुनि, सर्व मुनियोंसे दीक्षापर्यायमें लघु माना जावेगा.

(९) अनुट्ठप्पा—

(१०) पारंचिया—यह दोय प्रायश्चित सेवन करनेवालोंको पुनः गृहस्थलिंग धारण करवाके दीक्षा दी जाती है. इसकी विधि शास्त्रोंमें विस्तारसे बतलाइ है. परन्तु वह इस कालमें विच्छेद माना जाता है. (स्थानांगसूत्र.)

साधुवोंको अगर कोइ दोष लग जावे तो उसी वखत आलोचना करलेना चाहिये. बिगर आलोचना किया गृहस्थोंके वहां गौचरी न जाना, विहारभूमि न जाना, ग्रामानुग्राम विहार नहीं करना. कारण आयुष्यका विश्वास नही है. अगर विराधिकपदमें आयुष्य बन्ध जावे, तो भविष्यमें बडा भारी नुकशान होता है. अगर किसी साधुवोंके आपसमें कषायादि हुवा हो. उस समय लघु साधु खमावे नहीं तो वृद्ध साधुवोंको वहां जाके खमाना. लघु साधु

देता निमित्त ? इत्यादि कारणोंसे दोष सेवन कर आलोचना करता माया संयुक्त है ? माया रहित है ? लोक देखाउ है ? अन्तःकरणसे है ? इत्यादि सबका विचार, आलोचना श्रवण करते वख्त क-रके यथा प्रायश्चित्तके योग्य हो, उसे इतनाही प्रायश्चित्त देना चाहिये. प्रायश्चित्त देते समय उसका कारण हेतु, अर्थ भी समझा देना जैसे कहेकि—हे शिष्य ! इस कारणसे, इस हेतुसे, इस आगमके प्रमाणसे तुमको यह प्रायश्चित्त दीया जाता है.

(व्यवहारसूत्र.)

अगर प्रायश्चित्त देनेवाला आचार्य आदि राग द्वेषके वश हो, न्यूनाधिक प्रायश्चित्त देवे तो, देनेवाला भी प्रायश्चित्तका भागी होता है, और शिष्यको स्वीकार भी न करना चाहिये तथा यथाधारसे जो प्रायश्चित्त देनेपर भी वह प्रायश्चित्तीया साधु, उसे स्वीकार न करे तो, उसे गच्छमें नहीं रखना चाहिये. का-रण—एक अविनय करनेवालेको देख और भी अविनीत बनके गच्छमर्यादाका लोप करना आवेंगा (व्यवहारसूत्र.)

शरीरबल, संहनन, मनकी मजबूती—आदि अच्छा होनेसे पहले जमानेमें मासिक तपके ३० उपवास चातुर्मासिकके १२० उपवास छे मासिके १८० उपवास दीये जाते थे, आज कल. वैसा मजबूती इतनी नहीं है वास्ते उसके बदल प्रायश्चित्त दाता-ओंने [illegible] सूत्रका अभ्यास कराना चाहिये, गुरुमहाराजकी [illegible] होना चाहिये. ताकि भवे [illegible] निर्वाह करते हुवे, शासनका [illegible] शासन बतावे (जीतकल्पसूत्र.)

निशिथसूत्रके कथन—वर्तमानमें पूरव-प्रधान प्रायश्चित्त

थे, परम संवेग रंगमें रंगे हुवे, ब्रह्मचारी, ज्ञान, दर्शन, चारित्र संपुन्न, पांच समिति समिता, तीन गुप्ति गुप्ता, सतरा प्रकारका संयम, बारह भेद तप, दश प्रकारके यतिधर्मका धारक, चरण-करण प्रतिपालक, जिन्हों महा पुरुषोंकी कीर्तिरूपी ध्वनि, गगन-मंडलमें गर्जना कर रही थी, जिन्होंके स्याद्वादरूपि सिंहनादसे वादी रूप गज—दूरसे पलायमान होते थे, जिन्होंका सम्यक् ज्ञानरूप सूर्य, भूमंडलके अज्ञानरूप अन्धकारका नाश कर भव्य जीवोंके हृदय—कमलमें उद्योत कर रहा था, जिन्होंकी अमृत-मय देशनारूप सुधारससे आकर्षित हुवे चतुर्विध संघरूप भ्रम-रोंके सुस्वरसे गीतगान हुवे उज्वल यशरूप गुंजार शब्दका ध्वनि, तीन लोकमें व्याप्त हो रहा थी, ऐसे श्री वैशाखगणि आचार्य महाराजने स्व-पर आत्माओंके कल्याण निमित्त, इस महा प्रभा-वक लघु निशीथसूत्रको लिखके अपने शिष्यों, परशिष्योंपर बहुत उपकार कीया है, इतनाही नहि बल्के वर्तमान और भविष्यमें होनेवाले साधु साध्वीयों पर भी बडा भारी उपकार कीया है.

इति श्री निशीथसूत्र—बीशवा उद्देशाका संक्षिप्त सार.

देश निमित्त ! इत्यादि कारणोंसे दोष सेवन कर आलोचना क्या माया संयुक्त है ! माया रहित है ! लोक देखावु है ? अन्तःकरणसे है ! इत्यादि सबका विचार, आलोचना श्रवण करते वखत करके यथा प्रायश्चित्तके योग्य हो, उसे इतनाही प्रायश्चित्त देना चाहिये. प्रायश्चित्त देते समय उसका कारण हेतु, अर्थ भी समझा देना. जैसे कहेकि—हे शिष्य ! इस कारणसे, इस हेतुसे, इस आगमके प्रमाणसे तुमको यह प्रायश्चित्त दीया जाता है.

(व्यवहारसूत्र.)

अगर प्रायश्चित्त देनेवाला आचार्य आदि राग द्वेषके वश हो, न्यूनाधिक प्रायश्चित्त देवे तो, देनेवाला भी प्रायश्चित्तका भागी होता है, और शिष्यको स्वीकार भी न करना चाहिये तथा शास्त्राधारसे जो प्रायश्चित्त देनेपर भी वह प्रायश्चित्तीया साधु, उसे स्वीकार न करे तो, उसे गच्छमें नहीं रखना चाहिये. कारण—एक अविनय करनेवालेको देख और भी अविनीत बनके गच्छमर्यादाका लोप करता जावेगा. (व्यवहारसूत्र.)

शरीरबल संहनन, मनकी मजबुती—आदि अच्छा होनेसे पहले जमानेमें मासिक तपके ३० उपवास, चातुर्मासिकके १२० उपवास, छे मासीके १८० उपवास दीये जाते थे, आज बल, संहनन, मजबुती इतनी नहीं है वास्ते उसके बदल प्रायश्चित दाताओंने ' जीतकल्प ' सूत्रका अभ्यास करना चाहिये गुरुगमतासे द्रव्य, क्षेत्र, काल भावका जानकार होना चाहिये तांके सर्व साधु साध्वीयोंका निर्वाह करते हुवे, शासनका धोरी बनके शासन चलावे जीतकल्पसूत्र

निर्दियसवके लेखक—धर्मधुरंधर 'पजब-प्रभाव प्रयत्न प्रमा

थी. परम संवेग रंगमें रंगे हुये, अखिलाचारी, ज्ञान, दर्शन, चारित्र संयुक्त, पांच समिति समिता, तीन गुप्ति गुप्ता, सत्तरा प्रकारका संयम, बारह भेद तप, दश प्रकारके यतिधर्मका धारक, चरण, करण प्रतिपालक, जिन्हों महा पुरुषोंकी कीर्तिकि ध्वनि, गगन-मंडलमें गर्जना कर रही थी, जिन्होंके स्याद्वादके सिंहनादसे वादी रुप गज—हस्ती पलायमान होते थे, जिन्होंका सम्यक् ज्ञानरुप सूर्य, भूमंडलके अज्ञानरुप अन्धकारका नाश कर भव्य जीवोंके हृदय—कमलमें उद्योत कर रहा था, जिन्होंकी अमृतमय देशनारुप सुधारससे आकर्षित हुये चतुर्विध संघरुप भ्रमरोंके सुस्वरसे नीकलते हुये उज्वल यशरुप गुंजार शब्दका ध्वनि, तीन लोकमें व्याप्त हो रहा थी, ऐसे श्री वैशाखागणि आचार्य महाराजने स्व-पर आत्मार्थोंके कल्याण निमित्त. इस महा प्रभावक लघु निशियसूत्रको लिखके अपने शिष्यों, परशिष्योंपर बहुत उपकार कीया है. इतनाही नहि बल्के वर्तमान और भविष्यमें होनेवाले साधु साध्वीयों पर भी बडा भारी उपकार कीया है.

इति श्री निशियसूत्र — वीशवा उद्देशाका संक्षिप्त सार.

—— ✻ ——

इति श्री लघु निशिथसूत्र—समाप्त

इति श्री शीघ्रबोध भाग २२ वां

समाप्त.

थी. परम संवेग रंगमें रंगे हुये, अखिलाचारी, ज्ञान, दर्शन, चारित्र संयुक्त, पांच समिति समिता, तीन गुप्ति गुप्ता, सत्तरा प्रकारका संयम, बारह भेद तप, दश प्रकारके यतिधर्मका धारक, चरण, करण प्रतिपालक, जिन्हों महा पुरुषोंकी कीर्त्तिकि ध्वनि, गगनमंडलमें गर्जना कर रही थी, जिन्होंके स्याद्वादके सिंहनादसे वादी रुप गज—हस्ती पलायमान होते थे, जिन्होंका सम्यक्ज्ञानरुप सूर्य, भूमंडलके अज्ञानरुप अन्धकारका नाश कर भव्य जीवोंके हृदय—कमलमें उद्योत कर रहा था, जिन्होंकी अमृतमय देशनारुप सुधारससे आकर्षित हुवे चतुर्विध संघरुप भ्रमरोंके सुस्वरसे नीकलते हुये उज्वल यशरुप गुंजार शब्दका ध्वनि, तीन लोकमें व्याप्त हो रहा थी, ऐसे श्री वैशाखागणि आचार्य महाराजने स्व-पर आत्मावोंके कल्याण निमित्त. इस महा प्रभावक लघु निशिथसूत्रकों लिखके अपने शिष्यों, परशिष्योंपर बहुत उपकार कीया है. इतनाही नहि बल्के वर्त्तमान और भविष्यमें होनेवाले साधु साध्वीयों पर भी बडा भारी उपकार कीया है.

इति श्री निशिथसूत्र — वीशवा उद्देशाका संक्षिप्त सार.

—————

इति श्री लघु निशिथसूत्र—समाप्त

इति श्री शीघ्रबोध भाग २२ वां

समाप्त.

मुनिश्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज साहवके सदुपदेशसे श्री रत्नप्रभाकरज्ञान पुष्पमाला ऑफीस फलोधीसे आजतक निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हुइ हैं.

संख्या	पुस्तकोंका नाम.	आवृत्ति	कुल संख्या.
(१)	श्री प्रतिमा छत्तीसी	४	२००००
(२)	,, गयवर विलास	२	२०००
(३)	,, दान छत्तीसी	३	४०००
(४)	,, अनुकम्पा छत्तीसी	३	४०००
(५)	,, प्रश्नमाल	३	३०००
(६)	,, स्तवन संग्रह भाग १	५	५०००
(७)	,, पैंतीस बोलोंको थोकडो	१	१०००
(८)	,, दादासाहबकी पूजा	१	२०००
(९)	,, चर्चाका पब्लिक नोटीस	१	१०००
(१०)	,, देवगुरु वन्दनमाला	२	६०००
(११)	,, स्तवन संग्रह भाग २	३	३०००
(१२)	,, लिंग निर्णय बहुत्तरी	३	३०००
(१३)	,, स्तवन संग्रह भाग ३	३	४०००
(१४)	,, सिद्धप्रतिमा मुक्तावली	१	१०००
(१५)	,, बत्तीससूत्र दर्पण	१	५००
(१६)	,, जैन नियमावली	२	२०००
(१७)	,, चौरासी आशातना	२	२०००
(१८)	,, डकेपर चोट	१	५००
(१९)	,, आगम निर्णय	१	१०००
(२०)	,, चैत्यवंदनादि	२	२०००

(२१)	,, जिन स्तुति	:	[illegible]
(२२)	,, सुबोध नियमावली	२	६
(२३)	,, प्रभुपूजा	३	३
(२४)	,, जैन दीक्षा	२	२०
(२५)	,, व्याख्या विलास	१	१०
(२६)	,, शीघ्रबोध भाग १	२	२०
(२७)	,, ,, ,, २	१	१०
(२८)	,, ,, ,, ३	१	१०
(२९)	,, ,, ,, ४	१	१००
(३०)	,, ,, ,, ५	१	१००
(३१)	,, सुख विपाक सूत्र मूल	१	५००
(३२)	,, शीघ्रबोध भाग ६	१	१०००
(३३)	,, दशवैकालिकसूत्र मूल	१	१०००
(३४)	,, शीघ्रबोध भाग ७	१	१०००
(३५)	,, मेझरनामो	२	४५००
(३६)	,, तीन निर्नामा ले० उत्तर	२	२०००
(३७)	,, ओसीया तीर्थका लीट	१	१०००
(३८)	,, शीघ्रबोध भाग ८	१	१०००
(३९)	,, ,, ,, ९	१	१०००
(४०)	,, नंदीसूत्र मूलपाट	१	१०००
(४१)	,, तीर्थयात्रा स्तवन	२	३०००
(४२)	,, शीघ्रबोध भाग १०	१	१०००
(४३)	,, अमे साधु शामाटे थया ?	१	१०००
(४४)	,, बीनती शतक	२	२०००
(४५)	,, द्रव्यानुयोग प्रथम प्रवे०	१	६०००
(४६)	,, शीघ्रबोध भाग ११	१	१०००
(४७)	,, ,, ,, १२	१	१०००

मुनिश्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज साहबके सदुपदेशसे श्री रत्नप्रभाकरज्ञान पुष्पमाला ऑफीस फलोधीसे आजतक निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हुइ हैं.

संख्या	पुस्तकोंका नाम.	आवृत्ति	कुल संख्या.
(१)	श्री प्रतिमा छत्तीसी	४	२००००
(२)	,, गयवर विलास	२	२०००
(३)	,, दान छत्तीसी	३	४०००
(४)	,, अनुकम्पा छत्तीसी	३	४०००
(५)	,, प्रश्नमाल	३	३०००
(६)	,, स्तवन संग्रह भाग १	५	५०००
(७)	,, पैंतीस बोलोंको थोकडो	१	१०००
(८)	,, दादासाहबकी पूजा	१	२०००
(९)	,, चर्चाका पब्लिक नोटीस	१	१०००
(१०)	,, देवगुरु वन्दनमाला	२	६०००
(११)	,, स्तवन संग्रह भाग २	३	३०००
(१२)	,, लिंग निर्णय बहुत्तरी	३	३०००
(१३)	,, स्तवन संग्रह भाग ३	३	४०००
(१४)	,, सिद्धप्रतिमा मुक्तावली	१	१०००
(१५)	,, बत्तीससूत्र दर्पण	१	५००
(१६)	,, जैन नियमावली	२	२०००
(१७)	,, चौरासी आशातना	२	२०००
(१८)	,, डकेपर चोट	१	५००
(१९)	,, आगम निर्णय	१	१०००
(२०)	,, चैत्यवंदनादि	२	२०००

(२१)	,, जिन स्तुति	२	२०
(२२)	,, सुबोध नियमावली	२	६००
(२३)	,, प्रभुपूजा	३	३००
(२४)	,, जैन दीक्षा	२	२०००
(२५)	,, व्याख्या विलास	१	१०००
(२६)	,, शीघ्रबोध भाग १	२	२०००
(२७)	,, ,, ,, २	१	१०००
(२८)	,, ,, ,, ३	१	१०००
(२९)	,, ,, ,, ४	१	१०००
(३०)	,, ,, ,, ५	१	१२००
(३१)	,, सुख विपाक सूत्र मूल	१	५००
(३२)	,, शीघ्रबोध भाग ६	१	१०००
(३३)	,, दशवैकालिकसूत्र मूल	१	१०००
(३४)	,, शीघ्रबोध भाग ७	१	१०००
(३५)	,, मेझरनामो	२	४५००
(३६)	,, तीन निर्नामा लें० उत्तर	२	२०००
(३७)	,, ओसीया तीर्थका लीट	१	१०००
(३८)	,, शीघ्रबोध भाग ८	१	१०००
(३९)	,, ,, ,, ९	१	१०००
(४०)	,, नंदीसूत्र मूलपाठ	१	१०००
(४१)	,, तीर्थयात्रा स्तवन	२	३०००
(४२)	,, शीघ्रबोध भाग १०	१	१०००
(४३)	,, सर्वे साधु शामाटे थया ?	१	१०००
(४४)	,, वीनती शतक	२	२०००
(४५)	,, द्रव्यानुयोग प्रथम प्रवे०	१	६०००
(४६)	,, शीघ्रबोध भाग ११	१	१०००
(४७)	,, ,, ,, १२	१	१०००

(४८)	,, ,, ,, १३	१	१००
(४९)	,, ,, ,, १४	१	१००
(५०)	,, आनन्दघन चोवीशी	१	१००
(५१)	,, शीघ्रबोध भाग १५	१	१००
(५२)	,, ,, ,, १६	१	१००
(५३)	,, ,, ,, १७	१	१००
(५४)	,, कक्कायबत्तीसी सार्थ	१	१००
(५५)	,, व्याख्या विलास भाग २	१	१००
(५६)	,, ,, ,, ,, ३	१	१००
(५७)	,, ,, ,, ,, ४	१	१००
(५८)	,, स्वाध्याय गहुंली संग्रह	१	१००
(५९)	,, राइ देवसि प्रतिक्रमणसूत्र	१	१००
(६०)	,, उपकेश गच्छ लघु पट्टावली	१	१०००
(६१)	,, शीघ्रबोध भाग १८	१	१०००
(६२)	,, ,, ,, १९	१	१०००
(६३)	,, ,, ,, २०	१	१०००
(६४)	,, ,, ,, २१	१	१०००
(६५)	,, वर्णमाला	१	१०००
(६६)	,, शीघ्रबोध भाग २२	१	१०००
(६७)	,, ,, ,, २३	१	१०००
(६८)	,, ,, ,, २४	१	१०००
(६९)	,, ,, ,, २५	१	१०००
(७०)	,, तीन चतुर्मासोंका दिग्दर्शन	१	१०००
(७१)	,, हितोपदेश	१	१०००
७१	....	....	१४००

(४८)	,, ,, ,, १३	१	१०००
(४९)	,, ,, ,, १४	१	१०००
(५०)	,, आनन्दघन चोवीशी	१	१०००
(५१)	,, शीघ्रबोध भाग १५	१	१०००
(५२)	,, ,, ,, १६	१	१०००
(५३)	,, ,, ,, १७	१	१०००
(५४)	,, वक्तापतीसी सार्थ	१	१०००
(५५)	,, व्याख्या विलास भाग २	१	१०००
(५६)	,, ,, ,, ,, ३	१	१०००
(५७)	,, ,, ,, ,, ४	१	१०००
(५८)	,, स्वाध्याय गहुँली संग्रह	१	१०००
(५९)	,, राइ देवसि प्रतिक्रमणसूत्र	१	१०००
(६०)	,, उपकेश गच्छ लघु पट्टावली	१	१०००
(६१)	,, शीघ्रबोध भाग १८	१	१०००
(६२)	,, ,, ,, १९	१	१०००
(६३)	,, ,, ,, २०	१	१०००
(६४)	,, ,, ,, २१	१	१०००
(६५)	,, वर्णमाला	१	१०००
(६६)	,, शीघ्रबोध भाग २२	१	१०००
(६७)	,, ,, ,, २३	१	१०००
(६८)	,, ,, ,, २४	१	१०००
(६९)	,, ,, ,, २५	१	१०००
(७०)	,, तीन चतुर्मासोंका दिग्दर्शन	१	१०००
(७१)	,, हितोपदेश	१	१०००
७१	....		१४०००००

—※—

(४८)	,, ,, ,, १३	१	१०००
(४९)	,, ,, ,, १४	१	१०००
(५०)	,, आनन्दघन चोवीशी	१	१०००
(५१)	,, शीघ्रबोध भाग १५	१	१०००
(५२)	,, ,, ,, १६	१	१०००
(५३)	,, ,, ,, १७	१	१०००
(५४)	,, ककावत्तीसी सार्थ	१	१०००
(५५)	,, व्याख्या विलास भाग २	१	१०००
(५६)	,, ,, ,, ,, ३	१	१०००
(५७)	,, ,, ,, ,, ४	१	१०००
(५८)	,, स्वाध्याय गहुंली संग्रह	१	१०००
(५९)	,, राइ देवसि प्रतिक्रमणसूत्र	१	१०००
(६०)	,, उपकेश गच्छ लघु पट्टावली	१	१०००
(६१)	,, शीघ्रबोध भाग १८	१	१०००
(६२)	,, ,, ,, १९	१	१०००
(६३)	,, ,, ,, २०	१	१०००
(६४)	,, ,, ,, २१	१	१०००
(६५)	,, वर्णमाला	१	१०००
(६६)	,, शीघ्रबोध भाग २२	१	१०००
(६७)	,, ,, ,, २३	१	१०००
(६८)	,, ,, ,, २४	१	१०००
(६९)	,, ,, ,, २५	१	१०००
(७०)	,, तीन चतुमासोंका दिग्दर्शन	१	१०००
(७१)	,, हितोपदेश	१	१०००
७१	....	....	१४००००

—→※◎※←—